शाहनामा

लेखक
प्रो० रामचन्द्र श्रीवास्तव 'चन्द्र' एम. ए. (दर्शन, हिन्दी),
एल-एल. बी., साहित्यरत्न
हिन्दी विभाग, माधव कॉलेज, उज्जैन
तथा
श्री हरदयालुसिंह
देव पुरस्कार विजेता

प्रकाशक
गयाप्रसाद एण्ड संस
साधना-कार्यालय, आगरा

१६४७]   [मूल्य ४)

1926

प्रथम भाग की सूची

द्वितीय भाग की सूची

तृतीय भाग की सूची

विषय		पृष्ठ

चतुर्थ भाग

शाहनामा

प्रथम भाग

शाहनामा

प्रथम भाग

क्यूमर्स के शासन-काल का वर्णन

सार दानव की सेना से युद्ध

ईरान राज्य का सर्व-प्रथम शासक क्यूमर्स था। वह गिरि-गुफाओं में रहता और चर्म-वस्त्र धारण करता था। उसके एक वीर तथा बुद्धि-मान् पुत्र भी था जिसका नाम था सियामक। सार नामक एक दानव इस शासक का घोर शत्रु था।

इस दानव के पुत्र ने अपने पिता से एक दिन कहा कि मेरी इच्छा है कि मैं क्यूमर्स से युद्ध करूँ। पुत्र का उत्साह देख, उल्लासपूर्ण हो, उस दानव ने एक भारी सेना उसे दी और रण-स्थल की ओर उसे विदा किया। इधर जब सियामक को इसकी सूचना मिली तो वह भी अपने पिता से आज्ञा ले दल-बल सहित दानव-पुत्र के सम्मुख 'युद्धं देहि' रटता हुआ आ उपस्थित हुआ, पर दानव-दल के सम्मुख अधिक न ठहर सका और अल्पकाल में ही धराशायी हुआ। सेनानी के काम आते ही सेना उत्साह-हीन हो छिन्न-भिन्न हो गई और दानवों के हाथों गाजरमूली की भाँति कचर दी गई। कुछ रहे-बचे पराजित सैनिक क्यूमर्स के निकट जा पहुँचे और सम्पूर्ण वृत्तान्त उससे कह सुनाया। पुत्र की मृत्यु का दुःखद

समाचार सुन क्यूमर्स अतीव शोकातुर हुआ, और एक वर्ष-पर्यन्त उसी विकट शोकाग्नि में जलता रहा।

एक दिन उसने स्वप्न में देखा, कोई उससे कह रहा है—'हे वीर, पुत्र-शोक का परित्याग कर युद्ध के हेतु बद्ध-परिकर हो जा, ईश्वर तेरी सहायता करेगा। इस बार तू अवश्य विजयी होगा।' इस प्रेरणा-मयी वाणी को सुन वह वीरोल्लास से भर गया और शीघ्र ही एक भीषण युद्ध-वाहिनी संगठित कर उसने अपने परम-प्रिय पौत्र होशंग को उसका सेना-पति नियुक्त किया और रण-सज्जा से पूर्णतः वेष्टित हो उसने रण-क्षेत्र की ओर प्रयाण किया।

इधर सार को जब यह विदित हुआ कि क्यूमर्स युद्ध के हेतु आ उपस्थित हुआ है तो वह भी अपनी सेना को सजा कर रण-क्षेत्र में आ डटा। बस फिर क्या था, मार-काट आरम्भ हो गई। सार दानव तथा उसका पुत्र दोनों ही खेत रहे। ऐसा भीषण संग्राम हुआ कि सारी युद्ध-भूमि रक्त से रंजित होगई। अधिकांश दानव मारे गये और जो शेष बचे उनमें से कुछ तो भाग गये और कुछ ने क्यूमर्स की अधीनता स्वीकार कर ली। सारांश यह कि क्यूमर्स की विजय हुई और उसके परिणाम-स्वरूप सारा भूतल दानवों से सुरक्षित हो गया।

इस युद्ध के पश्चात् क्यूमर्स ने बड़े न्याय तथा धर्म के साथ बीस वर्ष पर्यन्त राज्य-सुख का उपभोग किया। तदनन्तर अपने पौत्र होशंग के हेतु राज-सिंहासन छोड़कर वह परलोक-गामी हुआ।

होशंग का शासन-काल

क्यूमर्स के परलोकगामी होने पर होशंग सिंहासनारूढ़ हुआ, और बहुत ही न्याय-पूर्वक शासन करने लगा। इसके राज्य-काल में प्रजा बहुत सुखी रही। शिला से अग्नि का आविर्भाव सर्व-प्रथम इसी के द्वारा हुआ। अग्नि को देख होशंग ने कहा—'अग्नि ही ईश्वर की ज्योति है, अतः सब को अग्नि की उपासना करनी चाहिए।' प्रस्तर-खण्डों से लोहा उसीने

निकलवाया। बस अब क्या था लोहारी का पेशा आरम्भ हो गया, नये-नये प्रकार के औज़ार बनाये जाने लगे। इन औज़ारों की सहायता से मीठे पानी की नहरें बनाई गईं, जिनके कारण जल-कष्ट जाता रहा। अब बीज बोकर खेती करने की सूझी और यों रोटी बनाने-खाने का रिवाज़ चालू हुआ। इसके पूर्व फल-फूलों को छोड़कर भोजन ही क्या था। होशंग ने सबसे पहले नमक से रोटी खाई। पहले वल्कल-वस्त्र धारण किये जाते थे, इसने समूर तथा खालों के वस्त्र बनवाये। इस प्रकार चालीस वर्ष के सुशासन के पश्चात् महान् शासक होशंग ने परलोक की यात्रा की।

तहमूरस के शासन-काल की कथा

होशंग के न्याय-काल का अन्त होते ही तहमूरस सिंहासनासीन हुआ इसे लोग देवबन्द नाम से भी पुकारते थे। इसने भी होशंग की ही भाँति राज्य किया। एक दिन अपने राज्य के सब बुद्धिमानों को एकत्र कर उसने यह विचार प्रकट किया कि भूत-पूर्व शासक की भाँति हमको भी किसी नवीन वस्तु का आविष्कार करना चाहिये। अस्तु, अनेक अनुसन्धानों के पश्चात् इसने कपड़ा बुनने की विधि को नवजीवन प्रदान किया और शनैः शनैः समस्त प्रजा की वस्त्र-विषयक आवश्यकताओं को पूर्ण करने में वह सफल-मनोरथ हुआ। उसके युग में जानवरों को पालना भी आरम्भ हुआ। उसने अपने सैनिकों को रण-विद्या की शिक्षा भी दिलाई।

एक बार उसका सुयोग्य मन्त्री एक दानव को बन्दी कर लाया, फलतः सब दानवों ने संगठित हो राज्य पर आक्रमण कर दिया। तहमूरस भी अपनी सेना लेकर रण-भूमि में उतर आया। बड़ी देर तक युद्ध होता रहा। अन्त में दानवों का अधिपति 'गो' राजा के हाथों मारा गया। युद्ध के पश्चात् जो दानव शेष बचे वे बन्दी कर लिये गये। तहमूरस ने समस्त दानवों का वध कर पृथ्वी का भार हलका कर देने की आज्ञा दी।

जब दानवों को राजाज्ञा अवगत हुई तो वे सब मिलकर तहमूरस की सेवा में उपस्थित हुए और कहा कि यदि आप हमको प्राण-दान दें तो हम आपको एक नवीन कला का ज्ञान करा देंगे। तहमूरस ने उनकी प्रार्थना स्वीकार करली। उन लोगों ने कलम तथा दावात लाकर राजा के सम्मुख रक्खी और उसको अक्षरों का बोध करा कर लिखना-पढ़ना सिखाया। इस प्रकार तीस वर्ष के राज्य-शासन के पश्चात् तहमूरस ने मृत्यु को वरण किया।

जमशेद का शासन-काल

तहमूरस की मृत्यु के पश्चात् जमशेद उसका उत्तराधिकारी हुआ। इसके शासन-काल में खेती, अन्य शस्त्रों तथा नाना प्रकार के वस्त्रों के निर्माण का आविष्कार हुआ। इसने दानवों को आज्ञा दी कि तुम मेरे प्रजा-जन को गृह-निर्माण (स्थापत्य कला) की शिक्षा दो। अस्तु, दानवों ने अनेक गगन-चुम्बी अट्टालिकाओं का निर्माण किया और राज-प्रासाद की भी रचना की। अन्य लोगों ने भी इसका अनुकरण किया और अपने-अपने गृह बनाकर उन्हीं में रहने लगे तथा खेती-बारी करने लगे।

जमशेद ने इन्हीं दानवों के द्वारा एक रत्न-जटित सिंहासन बनवाया जिस पर बैठकर वह राज-काज करता था। वह अधीनस्थ दानवों की कला के बल पर आकाश-मण्डल की यात्रा भी करने लगा। अब वह पलक मारते-मारते सहस्रों कोस की सैर आकाश-मार्ग से कर आता था। इसी ने "नौरोज़" का उद्घाटन किया और संगीत-कला एवं मदिरा को जन्म दिया।

"विनाश काले विपरीत बुद्धिः" कहावत के अनुसार अहंकार ने उसके स्वार्थ-पूर्ण हृदय में प्रवेश किया। वह सोचने लगा—'यह मैं ही तो हूँ जिसने इस सृष्टि की रचना की है। मेरे ही कारण लोग भर-पेट खाते तथा नींद-भर सोते हैं। यह मेरी ही बुद्धि तथा वीरता का परिणाम है कि आज समस्त भू-मण्डल-निवासी गृह-निर्माण कर सूर्य के प्रखर

ताप, जल-वृष्टि तथा शीत के प्रभाव से सुरक्षित हैं। मैं ही सृष्टिकर्ता, पालक तथा नाशक हूँ। अतः लोगों को मेरी ही आराधना तथा उपासना करनी चाहिए तथा मेरे अतिरिक्त और किसी का ध्यान मन में नहीं लाना चाहिए।'

अस्तु, उसने समस्त सभासदों, पण्डितों तथा नगर-निवासियों को एकत्र कर अपनी उपासना का आदेश किया, और उनके बोध के लिए उसने अपने उन्हीं पराक्रमपूर्ण कार्यों का उल्लेख किया। "जबरा मारे, रोने न दे" के अनुसार लोगों ने विवश होकर उसकी बातों को अक्षरशः सत्य स्वीकार कर अपना पीछा छुड़ाया। परन्तु उसी समय से सबने जान लिया कि जिस अहंकार ने बड़े-बड़े देवताओं, ऋषीश्वरों एवं मुनीश्वरों को नीचा दिखाया है उसी ने अब जमशेद पर भी अपना आधिपत्य जमा लिया है।

इस नास्तिकता-उदय के अल्पकालोपरांत जमशेद को अपने राज-पाट से हाथ धोना पड़ा, वह दर-दर का भिखारी हो गया और ज़ोहाक ने उस सिंहासन की शोभाभिवृद्धि की।

राज्य-च्युत जमशेद का पलायन

ज़ोहाक का राज्यारोहण

अब तक यह बात समस्त संसार में प्रसिद्ध हो चुकी थी कि ज़ोहाक के पास दो सर्प ऐसे हैं जिन्हें देखते ही मनुष्य प्राण त्याग कर देता है। ईरान की प्रजा जमशेद से पीड़ित हो ज़ोहाक के पास गई और विनीत भाव से बोली—'राजन्, यदि इस समय आप ईरान पर आक्रमण करें तो निश्चय ही विजय-लक्ष्मी आपको वरण करेगी क्योंकि जमशेद के अन्याय से प्राणि-मात्र दुखी हैं और समस्त सेना उसके बन्धन से मुक्त होना चाहती है।'

यह शुभ संवाद पाते ही ज़ोहाक ने अपनी सेना एकत्र की और ईरान पर आक्रमणकारी हुआ। जमशेद भी युद्ध-स्थल में आया, परन्तु

सेना के हतोत्साह होने के कारण पराजित हो भाग निकला। उसके पलायन करते ही ज़ोहाक ने ईरान के सिंहासन पर अपना अधिकार जमाया। सिंहासनारूढ़ होते ही उसने घोषणा की कि जो व्यक्ति जमशेद को बन्दी बनाकर लाएगा अथवा उसका चिह्न बताकर उसे बन्दी करवाएगा उसे राज्य-कोष से अतुल धन दिया जाएगा, और यहीं तक नहीं, उसे राज्य में पदाधिकारी भी नियुक्त किया जाएगा। ज़ोहाक की इस घोषणा की चरचा भू-मण्डल के कोने-कोने में होने लगी और सभी लोग जमशेद की खोज में रहने लगे।

इधर जमशेद रण-भूमि से भागकर पर्वतों में जा छिपा। जब उसे इस घोषणा की सूचना मिली तो वह प्राण-भय से लोगों की दृष्टि बचाता, मरुस्थलों एवं पर्वतों को लाँघता अनेकानेक विपत्तियों से सामुख्य करता जाबुलिस्तान जा पहुँचा। नगर में प्रवेश करने से पूर्व उसने छद्म-वेश धारण कर लिया।

इस नगर के शासक के एक पुत्री थी जो रूप-लावण्य में परियों के सदृश थी। उसके अंग-प्रत्यंग की रचना जैसे कि स्वयं विधाता ने ही की हो। उसके नयन-बाणों द्वारा वेधित पुरुषों की संख्या अगणित थी। इसके अतिरिक्त उसमें एक और भी गुण था, वह सौंदर्य की प्रतिमा होने के साथ ही चण्डिका का साक्षात अवतार थी। उसके पिता ने उसे समस्त रण-कौशल की शिक्षा दिलवाई थी। फलतः जब वह संग्राम-भूमि में प्रवेश करती तो जिधर घूम जाती, उधर शव ही शव भू-लुंठित होते मिलते। यह उसी की बुद्धिमत्ता एवं रण-कौशल का परिणाम था कि उसके पिता ने मनोछर जैसे प्रबल आक्रमणकारी को पराजित कर दिया था। इसी कारण तो जाबुल नरेश उसका पाणि-ग्रहण किसी के साथ न करता था। वैसे उसे सभी प्रकार की स्वच्छन्दता प्रदान कर दी गई थी।

इस राजकुमारी के साथ धाय थी, जो बड़ी बुद्धिमती तथा ज्योतिर्विद्या में दक्ष थी। एक दिन उसने राजकुमारी से कहा कि

तुम्हारे नक्षत्रों के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि एक दिन तुम जमशेद नरेश की सहगामिनी होगी और उसी के औरस से तुम्हारी कुक्षा से एक महाबली पुत्र का जन्म होगा। अपनी हितैषिणी धाय की बात सुनकर वह बड़ी प्रसन्न हुई और तभी से वह उस शुभ घड़ी की प्रतीक्षा करने लगी। राजकुमारी के अतिरिक्त धाय ने राजा को भी इस रहस्य से अवगत कर दिया था, इसी कारण राजा उसका विवाह किसी अन्य पुरुष से न करता था।

दैव-संयोगवश जमशेद ने जब नगर में प्रवेश किया तो एक वाटिका के द्वार पर जा पहुँचा। वाटिका की सुन्दरता तथा शीतल छाया देखकर उसने उसी वाटिका में चलकर विश्राम करने का विचार किया। वह उस वाटिका में प्रविष्ट हो ही रहा था कि द्वारपालों ने उसे यह कह कर वहीं रोक दिया कि यह राज-वाटिका है और इस समय राजकुमारी उसमें मौजूद हैं। वह विवश होकर वहीं द्वार पर बैठ रहा।

इसी बीच राजकुमारी की एक दासी अनायास ही किसी कार्य-वश द्वार पर आई। यहाँ जो उसने जमशेद को देखा तो चकित हो गई और उससे पूछने लगी कि हे पथिक! तुम कौन हो, तुम्हारा निवास-स्थान कहाँ है? तुम यहाँ किस अभिप्राय से बैठे हो, और तुम्हें क्या क्लेश है जिसके कारण तुम्हारे शरीर की ऐसी दुर्दशा हो गई है?

परिचारिका की सहानुभूति-पूर्ण वाणी को सुन जमशेद ने उत्तर दिया—"हे देवी, किसी समय मैं भी एक प्रभावशाली तथा धनी पुरुष था, पर कालचक्र ने अब मेरी यह अवस्था कर रक्खी है। मैं आपसे अन्य कोई वस्तु नहीं चाहता, पर यदि आप मुझे थोड़ी-सी मदिरा देने की कृपा करें तो मैं आपका बड़ा कृतज्ञ होऊँगा।" अपरिचित की याचना सुन वह दासी उन्हीं पाँवों लौटकर राजकुमारी के निकट गई। उसने पहले तो जमशेद के कामदेव-तुल्य सौन्दर्य की प्रशंसा की, पश्चात् उसके मदिरा माँगने की बात कही।

दासी द्वारा की गई प्रशंसा तथा मदिरा की बात सुन वह परम सुन्दरी

राजकुमारी स्वयं ही द्वार पर चली आई और कामदेव-सदृश जमशेद की मोहिनी मूर्ति देखकर चकित रह गई। बड़ी देर तक वह उस युवा को ध्यान-पूर्वक देखती रही और इस निश्चय पर पहुँची कि यह ईरान देश का कोई दुर्भाग्य-पीड़ित राजकुमार है। राजकुमारी ने प्रश्न किया—"हे पथिक! आप यहाँ किस कार्य-वश आये हैं और इस वाटिका के द्वार पर बैठने से आपका क्या अभिप्राय है? मुझे ऐसा भासित होता है कि आप इस दासी पर आसक्त हो गये हैं अन्यथा उससे मदिरा माँगने का अन्य कारण भी क्या हो सकता है। यदि आपको मदिरा-पान का इतना चाव है तो आइए हमारे साथ, इस वाटिका के भीतर चलकर जितनी इच्छा हो पीजिए।"

राजकुमारी का निमन्त्रण सुनकर जमशेद का मन हाथ से निकल गया, पर यह सोचकर कि वाटिका के भीतर जाने से किसी विपज्जाल में न फँस जाय, उसने वाटिका के भीतर जाना अस्वीकार कर दिया। राजकुमारी ने उसे सशंक देखकर कहा—"आप किसी विपत्ति की चिन्ता न करें, मैं यहाँ के शासक की राज-पुत्री हूँ और यह वाटिका मेरी ही है। इसके अतिरिक्त मुझे पिताजी ने यह आज्ञा दे रक्खी है कि तुम जिस पुरुष को भी चाहो वाटिका के भीतर ले जा सकती हो।"

राजकुमारी की उपर्युक्त बातें सुनकर जमशेद ने उसके साथ वाटिका में प्रवेश किया। बाग को देखते-देखते वे दोनों धीरे-धीरे एक चश्मे के किनारे जा बैठे। वहाँ राजकुमारी की आज्ञा से दासियों ने गुलाबजल से जमशेद के हाथ-पैर धोये और मधु-कलश लाकर उन दोनों के सम्मुख रख दिया। राजकुमारी ने अपने हाथों से जमशेद को सुरा-पान कराया। दो-तीन पात्र पान कर चुकने पर राजकुमारी ने जमशेद से भोजन करने को कहा, पर जमशेद न उठा और बोला—"अभी तो मैं और मदिरा पीऊँगा।" राजकुमारी यह सुनकर बोल उठी—'आप भी विचित्र प्रकृति के मनुष्य दीख पड़ते हैं। मदिरा के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु की आपको इच्छा ही नहीं है!'

राजकुमारी की चकितावस्था देखकर जमशेद ने कहा—"संसार में सुरा एक अद्वितीय पदार्थ है जिसके पान करने से मनुष्य की समस्त चिन्ताओं का क्षय हो जाता है। इसके पान करने से कायर से कायर पुरुष भी सिंह को पछाड़ सकता है। इसके सेवन से वृद्ध पुरुष युवा बन सकता है।" जमशेद की उक्त बात सुनकर राजकुमारी को सन्देह हुआ कि हो न हो यह अपरिचित व्यक्ति जमशेद है। उसने शंका-समाधान के हेतु अपनी दासी को जमशेद का चित्र लाने का संकेत किया। दासी राजकुमारी की आज्ञा पाकर चित्र लेने चली गई।

इधर राजकुमारी ने जो दृष्टि फेरी तो परस्पर प्रेम-क्रीड़ा करता हुआ कबूतरों का जोड़ा एक वृक्ष पर बैठा दृष्टिगोचर हुआ। यह देखकर उसे न जाने कैसा कुछ लगा, वह लजा-सी गई। उसने जमशेद का ध्यान उसकी ओर आकर्षित कर कहा कि जिसे आप कहें उसी को अपना लक्ष्य बनाऊँ। राजकुमारी की बात सुनकर जमशेद ने उत्तर दिया कि पुरुष के होते स्त्री को ऐसे कार्य न करने चाहिए। मैं स्वीकार करता हूँ कि तुम धनुर्विद्या में दक्ष हो, पर यह भी जान रक्खो कि पुरुष पुरुष है और स्त्री स्त्री। स्त्री चाहे कितनी ही वीर क्यों न हो, पुरुष के सम्मुख उसे निगाह नीची करनी ही पड़ती है।

जमशेद की यह बात सुनकर राजकुमारी संकुचित हो गई। पश्चात् जमशेद ने कहा कि अब तुम धनुर्बाण मुझे दो। यदि कहो तो मैं कबूतरी को अपने बाण से बेध दूँ। परन्तु तुम्हें एक बात स्वीकार करनी पड़ेगी कि यदि मैं सफल-मनोरथ हो जाऊँगा, तो जिस स्त्री को चाहूँगा उसका हाथ पकड़ लूँगा। राजकुमारी की स्वीकृति पाकर जमशेद ने एक ही बाण में कबूतरी को धराशायी कर दिया। कबूतरी के गिरते ही कबूतर वहाँ से चीत्कार कर उड़ गया, पर फिर उसी वृक्ष पर आ बैठा, अपनी प्रेयसी की याद करता हुआ।

कबूतर को फिर पूर्व स्थान पर लौटा देखकर राजकुमारी बोली कि इस बार मैं कबूतर को अपना लक्ष्य बनाऊँगी, पर यदि कृतकार्य हो गई

तो मैं भी जिस पुरुष को चाहूँगी उसका हाथ पकड़ लूँगी। जमशेद राजकुमारी के मन की बात जान गया, अतः उसने स्वीकृति देदी। राजकुमारी ने भी निशाना लगाकर कबूतर को उसकी प्रेयसी के पास सुला दिया। इस पर जमशेद ने उसकी बड़ी प्रशंसा की। अपने प्रियतम-द्वारा की गई प्रशंसा सुनकर राजकुमारी ने कहा कि यदि सच पूछो तो तुम ही इस प्रशंसा के अधिकारी हो, क्योंकि आज-पर्यन्त मेरे राज्य का कोई भी व्यक्ति मेरे धनुष की प्रत्यञ्चा चढ़ाने में भी कृतकार्य नहीं हो सका है; परन्तु तुमने सहज में उससे इस कबूतरी को धराशायी कर दिया।

अभी राजकुमारी की बात पूरी भी न होने पाई थी कि उसकी प्यारी धाय आ गई। उसने जमशेद को ध्यानपूर्वक देखा और राजकुमारी से बोली कि जो बात मैंने तुमसे कह रक्खी थी वह आज सच हो गई। यही वीर पुरुष जमशेद है। अब तुम अपनी इच्छा पूरी करो। धाय-द्वारा इस अपरिचित व्यक्ति के जमशेद होने की पुष्टि को सुनकर राजकुमारी उल्लास से भर गई। इतने में जमशेद का चित्र लेकर दासी भी आ पहुँची। राजकुमारी ने जब दोनों के मुखों का मिलान किया तो वह गद्‌गद हो गई।

इसके पश्चात् राजकुमारी ने उस चित्र को जमशेद के हाथ में दे दिया। जमशेद अपना चित्र देखकर फूट-फूट कर रोने लगा। उसकी यह अवस्था देख कर राजकुमारी गुलरू ने कहा—'प्रियतम, तुम्हारे इस प्रकार रोने का क्या कारण है?" जमशेद ने उत्तर दिया—"हे गुलरू, मैं जमशेद के सम्मान, प्रभाव तथा तेज का ध्यान करके रोता हूँ। एक दिन वह था जब वह रत्न-जटित सिंहासन पर बैठकर ईरान के साम्राज्य का शासन करता था और आज ईश्वर जाने उसकी क्या अवस्था होगी। वह जीवित होगा अथवा किसी वन्य पशु का कवल हो गया होगा।"

जमशेद की बात सुनकर राजकुमारी गुलरू ने कहा—"क्यों व्यर्थ ही आप अपने को छिपाते हैं। आप स्वयं जमशेद होकर हम लोगों को

धोखे में डाल रहे हैं।" इस पर जमशेद ने कहा कि प्रिये तुम्हारा अनुमान असत्य है। मैं जमशेद नहीं हूँ। मेरे जैसे उसके सहस्रों दास हैं। राजकुमारी को समझते देर न लगी कि वह यह नहीं चाहता कि उसके जमशेद होने की बात फैल जाय, अतः उसकी धाय ने तथा उसने शेष दासियों को वहाँ से चले जाने की आज्ञा दी।

दासियों के चले जाने पर जब एकान्त हुआ तो राजकुमारी ने कहा—"मेरे प्रिय, आप मेरे अरमानों की हत्या क्यों करते हैं। मेरी यह धाय ज्योतिर्विद्या में दक्ष है। इसी के द्वारा मुझे यह ज्ञात हुआ कि तुमसे विवाह करके मैं एक वीर तथा प्रभावशाली पुत्र की माता होऊँगी, अतः सत्य बात प्रकट करके अब तुम मेरी कामना सफल करो। अब तक सहस्रों नरेश मेरे पाणि-ग्रहण की इच्छा प्रकट कर चुके हैं, परन्तु केवल धाय की भविष्यवाणी पर विश्वास रख मैंने उनकी ओर दृष्टिक्षेप तक न किया।" इसके आगे राजकुमारी कुछ न कह सकी, उसका गला भर आया और वह फूट-फूट कर रोने लगी।

गुलरू की यह अवस्था देख कर जमशेद ने कहा—"प्रिये, संसार में मैं दो बातों से बहुत भयभीत होता हूँ, एक तो अपने दुर्भाग्य से, दूसरे स्त्री-जाति से। पूर्वजों का कथन है कि जो पुरुष स्त्री-भक्त बन कर, उसे अपनी विश्वास-पात्र बना कर उस पर अपने रहस्य प्रकट कर देता है, वह सदैव नीचा देखता है।"

गुलरू ने कहा—"हे प्रिय, तुम्हारा कथन सत्य है; परन्तु तुम्हें इस बात का भी ज्ञान होना चाहिए कि सभी स्त्री-पुरुष एक से नहीं होते। मैं आपकी तथा धर्म की शपथ खाकर कहती हूँ कि आप मुझ पर विश्वास रखिए कि मेरे प्राण रहते मेरे अतिरिक्त अन्य कोई आपके भेद को नहीं जान सकता। मैं अपने प्राण देकर आपके प्राणों की रक्षा करूँगी।"

गुलरू के सौगन्ध खाने तथा नाना प्रकार से विश्वास दिलाने पर उसने कहा—"प्रियतमे! वास्तव में तुम्हारा अनुमान सत्य है और मैं ही

१०१.६

जमशेद हूँ। जीवन के भय से मैं इस बात को प्रकट नहीं करता था।" जमशेद द्वारा अपने अनुमान का समर्थन सुनकर गुलरू अतीव प्रसन्न हुई, और स्वधर्मानुसार उसके साथ विवाह-सूत्र में आबद्ध हो दाम्पत्य सुख का उपभोग करने लगी।

जमशेद के साथ विवाह हो जाने के पश्चात् गुलरू ने अपने पिता के निकट आना-जाना कम कर दिया। एक दिन राजा ने उसके इस व्यवहार-परिवर्त्तन का कारण पूछा तो उसे विदित हुआ कि उसने एक अपरिचित व्यक्ति को अपनी वाटिका में स्थान दे रक्खा है और अहर्निश उसी के साथ रमी रहती है। अपनी पुत्री के इस अविचार-पूर्ण व्यवहार के विषय में सुनकर राजा क्रोधाभिभूत हो गया। एक दिन जब वह राज-प्रासाद में गई हुई थी तब उसे बुलाकर उसने क्रोध-पूर्वक पूछा—"गुलरू! तेरी वाटिका में कौन पुरुष रहता है और किस की आज्ञा से तूने इस मार्ग का अवलम्बन किया है?"

पिता की क्रोधमयी वाणी सुन कर गुलरू ने उत्तर दिया—"पिताजी, मैंने कोई ऐसा नीच कार्य नहीं किया है, जिससे आपका सिर नीचा हो। मैंने आपकी आज्ञा के अनुसार एक ऐसे व्यक्ति का पल्ला पकड़ा है जिसका इस संसार में ईश्वर के अतिरिक्त और कोई सहायक नहीं है।" इस पर भी जब राजा का क्रोध शान्त न हुआ तो धाय ने विनीत भाव से कहा कि महाराज, राजकुमारी ने जो कुछ कहा है सब सत्य है। मैंने पहले ही आपको बतला दिया था कि इसका विवाह जमशेद के साथ होगा और उसी से इसके एक पुत्र-रत्न उत्पन्न होगा। वह अपरिचित व्यक्ति जमशेद ही है और इस समय राजकुमारीजी का पैर भी भारी है। धाय की यह वाणी सुनकर राजा अतीव प्रसन्न हुआ। वह बोला—"तूने बहुत ही अच्छा समाचार सुनाया। अब मैं उसे बन्दी करके ज़ोहाक के पास कल भेजूँगा जिससे उसकी सभा में मेरा सम्मान हो।" पिता के वचन सुनकर गुलरू ने कहा—"हे पिता! यह आप क्या कह रहे हैं। किसी शरणागत के साथ विश्वासघात करना बड़ा भारी

अन्याय है। यदि आपको यही करना है तो पहले मेरा वध कर दीजिए, तब अपने जामाता के रक्त से हाथ धोइए।" इतना कहकर वह फूट-फूट कर विलाप करने लगी।

पुत्री की दुःखद अवस्था देख पिता ने जमशेद की हत्या से मुख मोड़ लिया, और अपनी पुत्री को धैर्य देकर कहा कि हे पुत्री अब तुम निर्भय हो जाओ। मैं किसी प्रकार जमशेद का अनिष्ट न करूँगा। मैं कल स्वयं उसके सम्मुख उपस्थित होऊँगा। पिता के विश्वास दिलाने पर गुलरू का रोना बन्द हुआ और अपनी वाटिका को लौट कर जमशेद को उसने सम्पूर्ण वृत्त आद्योपान्त कह सुनाया और उसे हर प्रकार से धीरज बँधाया। राजकुमारी की बातों से उसे आश्वासन तो मिला, पर उसका हृदय प्रति क्षण सशंक रहने लगा, इसी कारण वह निकल भागने के अवसर की ताक में रहने लगा।

दूसरे दिन प्रातःकाल जाबुल नरेश जमशेद के निकट आया और नत-मस्तक हो बोला—"महाराज, आप मेरे अपराधों को क्षमा करें। मैं सदैव आपके अधीन रहकर आपकी सहायता करता रहूँगा।" इसके उपरान्त और बहुत सी बातें हुईं। तदनन्तर राजा अपने राज-प्रासाद को लौट गया।

जमशेद का भारत को प्रस्थान तथा वध

जाबुल-नरेश तथा अपनी पत्नी गुलरू के विविध प्रकार से धैर्य बँधाते रहने के कारण जमशेद वहाँ बहुत समय तक बना रहा, पर रहता हर घड़ी चिन्ता-मग्न था। एक दिन एक व्यक्ति ने उसे सूचित किया कि इस राज्य के समस्त मंत्रियों तथा अन्य सभ्यों ने तुम्हें बन्दी करके ज़ोहाक के निकट भेज देने का षड्यंत्र किया है। उन्हें इस बात का भय भी है कि कहीं ज़ोहाक को इस बात का पता न लग जाय कि जमशेद यहाँ है। यह विदित होते ही वह सेना लेकर इस राज्य पर निश्चय ही आक्रमणकारी होगा और इसका विनाश करके ही छोड़ेगा।

जब जमशेद को यह सूचना मिली तो वह बड़ा भयभीत हुआ और एक दिन अवसर पाकर वहाँ से निकल भागा। पहिले वह चीन देश को गया, पर वहाँ भी बहुत दिन न रह सका, अतः उसने भारतवर्ष की ओर प्रस्थान किया। एक दिन मार्ग के श्रम से श्रांत एवं क्लांत हो वह एक वृक्ष की छाया में बैठ कर अपने दुर्भाग्य तथा ईश्वर के कार्यों का विवेचन करने लगा। इसी प्रकार बड़बड़ाते-बड़बड़ाते उसको नींद आ गई। सोते-सोते उसने एक अति भयंकर स्वप्न देखा जिससे घबरा कर उसकी आँख खुल गई।

ईश्वर की लीला भी विचित्र है। कोई प्राणी कितना ही क्यों न चाहे पर उसकी इच्छा के विरुद्ध अपने को कभी सुरक्षित नहीं रख सकता। जिस समय जमशेद पड़ा सो रहा था उसी समय ज़ोहाक का एक दूत थोड़ी-सी सेना के साथ उसी मार्ग से होकर निकला। जब उसने जमशेद को देखा तो तुरन्त पहिचान लिया और झट उसे बन्दी करके ज़ोहाक के निकट भेज दिया।

जमशेद जब ज़ोहाक के सम्मुख उपस्थित किया गया उस समय उसकी दशा बड़ी शोचनीय थी। ज़ोहाक ने जो उसे देखा तो ठठा कर हँसा और बोला कि भला बता, अब तेरा वह राजसी ठाट कहाँ गया? इस समय तेरी आज्ञा कहाँ है? इस पर जमशेद ने कहा कि इस परिवर्त्तन-शील संसार पर इतना मत फूल, ईश्वर से भय खा और भविष्य का ध्यान रख। एक दिन तेरी भी ऐसी ही दुर्गति होने वाली है। जमशेद की बातों को सुनकर ज़ोहाक फिर हँसा और बोला कि अच्छा अब तू यह बता कि किस प्रकार मरना चाहता है—सूली पर चढ़कर, तलवार द्वारा टुकड़े-टुकड़े होकर, अथवा बाणों द्वारा विद्ध होकर?

ज़ोहाक के ये व्यंग्य-पूर्ण वचन सुनकर जमशेद ने कहा कि अब मुझे मृत्यु से नाम-मात्र भी भय नहीं है। अस्तु, जिस प्रकार तेरी इच्छा हो उसी प्रकार इस नश्वर शरीर का नाश कर। यह सुनते ही ज़ोहाक ने बधिक को आरा ले आने की आज्ञा दी। बधिक आरा तथा लकड़ी का

तख़्ता ले आया और उसी में बाँध कर जमशेद को आरे के द्वारा दो भागों में विभाजित कर दिया गया। जब यह समाचार जाबुल में पहुँचा तो गुलरू ने घोर विलाप किया। उस समय से उसने अन्न-जल का भी परित्याग कर दिया। अन्त में एक विष-पान कर वह अपने प्रियतम से जा मिली।

ज़ोहाक का भयानक स्वप्न-दर्शन

जमशेद की हत्या के पश्चात् ज़ोहाक ने उसकी दोनों बहनों शहरनाज़ तथा अर्नवाज़ को पकड़वा मँगवाया और उन्हें अपने अन्तःपुर में रक्खा। इन सब कार्यों से निवृत्त होकर उसने अन्याय और अत्याचार करने पर कमर कसी। कभी वह प्रजा-जन के वध की आज्ञा देता और कभी लोगों के निवास-स्थानों में आग लगवा देता। वह दो मनुष्यों का वध नित्य प्रति करता और उनका भेजा अपने दोनों नागों को खिलाता।

इसी प्रकार अनाचारों द्वारा वह लोगों को पीड़ित करता रहा। एक दिन उसने एक बड़ा भयङ्कर स्वप्न देखा कि तीन वीरों का जन्म हुआ है, उनमें से दो तो ज्येष्ठ हैं और एक कनिष्ठ। तीनों ने उसके साथ युद्ध आरम्भ कर दिया है, इसी बीच सबसे छोटे पुरुष ने उसके शिर पर गदा-प्रहार किया जिससे उसका शिर चूर्ण हो गया। इस स्वप्न को देख वह बहुत भयभीत हुआ और चिल्ला उठा। उसका कंठ-स्वर सुनकर उसके निकट सोई हुई उसकी स्त्री जाग उठी और पूछने लगी कि तुम इस प्रकार चिल्ला क्यों रहे थे। इस पर उसने अपना पूरा स्वप्न उसे सुना दिया। स्वप्न को सुनकर उसने अनुरोध किया कि ज्योतिषियों से इस स्वप्न का तात्पर्य पूछा जाय।

भोर होते ही ज़ोहाक ने ज्योतिषियों को बुला भेजा और उन्हें स्वप्न से अवगत कर उसका फलाफल पूछा। पहले तो ज्योतिषीगण प्राण-भय से तीन दिवस पर्यन्त मौन धारण किये रहे, पर चौथे दिन जब ज़ोहाक ने क्रोधित होकर पूछा तो उन लोगों ने हाथ जोड़कर कहा कि

कृपानिधान ! अब आप पर क्रूर ग्रह का प्रकोप है, फलतः फरीदूँ नाम का एक व्यक्ति आपको सिंहासन-च्युत कर स्वयं राजा बनेगा। इसका लालन-पालन एक गाय द्वारा होगा। अभी तक इस बालक ने जन्म नहीं लिया है, क्योंकि उसका कोई चिह्न हम लोगों को उपलब्ध नहीं हुआ। इतना सुनकर ज़ोहाक ने पूछा कि स्वप्न में जिस गदाधारी को मैंने देखा है वह कौन है। ज्योतिषियों ने उत्तर दिया कि महाराज यह गदाधारी कयानी वंश का एक राजकुमार, वही फरीदूँ होगा जो अपनी गौमुख गदा-द्वारा आपके शिर पर चोट करेगा। जब ज़ोहाक ने उसकी शत्रुता का कारण पूछा तो उन्होंने कहा कि वह अपने पिता के वध का प्रतिशोध लेगा।

ज्योतिषियों-द्वारा कहे गये अपने स्वप्न का फलाफल जानते ही ज़ोहाक मूर्च्छित हो भूमि पर गिर पड़ा। सचेत होने पर सिंहासनारूढ़ तो हुआ, पर हृदय शंकित हो जाने के कारण उसने अन्न-जल का परित्याग कर दिया और अहर्निश अपने शत्रु को नाश करने की चिन्ता में मग्न रहने लगा। उसने चारों दिशाओं में अपने सैनिक भेज दिये और उन्हें आज्ञा दे दी कि कयानी वंश के जितने राजकुमार तुम्हें मिलें सबको बन्दी करके मेरे पास भेज दो। ऐसी आज्ञा देकर उसने सैनिकों को विदा किया और स्वयं भी फरीदूँ की खोज में रहने लगा।

फ़रीदूँ का जन्म

ज़ोहाक के राज्य-काल में ईरान-साम्राज्य की सीमा में कयानी वंश का एक राजकुमार रहता था, जिसका नाम आबतैन था। यह राजकुमार ज़ोहाक की आज्ञा से भयभीत हो नित्य अपने भवन के भीतर ही रहा करता था। इसके एक अत्यन्त रूपवती पत्नी थी, जिसका नाम फज़ानक था। ईश्वर की कृपा-वश वह गर्भवती हुई और उचित अवधि के अवसान पर उसने एक पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम इन दोनों ने फ़रीदूँ

रक्खा । ये दोनों अपने पुत्र की बाल-लीलाओं को देख दिन-रात चित्त प्रसन्न करते रहते ।

इतने दिन स्व-रक्षा करते रहने पर भी वह विधि के विधान को न मिटा सका, और एक दिन उसका काल निकट आ ही गया । उसने एक दिन सोचा कि भवन में बन्द रहते-रहते तो बहुत दिन बीत गये, चलो एक दिन निकटवर्ती वन में ही घूम-फिर आवें । वह घर से निकल कर वन में पहुँचा ही था कि राजा ज़ोहाक के भेजे हुए सैनिक भी उसी ओर आ निकले । उन्होंने राजकुमार को बन्दी बनाकर ज़ोहाक के निकट भेज दिया, जिसने निर्दयता-पूर्वक उसका बध करा डाला । जब फ़ज़ानक को इसकी सूचना मिली तो वह पुत्र के प्राणों से भयभीत हो महल को छोड़ एक वन में रहने लगी ।

इस वन का संरक्षक एक दयालु पुरुष था । इसके पास पुरमाया नाम की एक गाय थी । उस संरक्षक ने उस बालक फरीदूँ को उस गाय का दूध भर-पेट पिलाया । जब उसकी क्षुधा मिट गई तो वह खेलने लगा । सारांश यह कि फरीदूँ को उसी संरक्षक ने अपने पास रख लिया और उसी गाय के दूध से उसकी प्राण-रक्षा होती रही । उसकी माता इस भय से कि मेरी उपस्थिति के कारण कहीं पुत्र पर भी न आ बने अपने घर वापस लौट गई और वहीं रहने लगी ।

जब फरीदूँ तीन वर्ष का हो गया तो एक दिन उसकी माता फज़ानक उसके संरक्षक के निकट आई और बोली कि अब आप मेरे बालक को मुझे दे दीजिये । मैं निशि-दिन इसको अपने निकट रख कर इसका लालन-पालन करूँगी । यह सुनकर उसने कहा कि देवी, अभी यह निरा बालक है । इसे तेरे साथ अत्यधिक दुःख झेलने पड़ेंगे । इसके अतिरिक्त मुझे इस बात की शंका भी है कि कहीं इसका कोई अनिष्ट न हो । संरक्षक की बात सुनकर फज़ानक ने कहा कि दैवी चमत्कार द्वारा मुझे यह ज्ञात हुआ कि अब यह स्थान मेरे पुत्र के लिए निरापद नहीं है । अस्तु, अब इसे यहाँ से हटा देने में ही कल्याण है ।

अन्त में विवश हो संरक्षक ने फरीदूँ को उसकी माता के हवाले कर दिया और वह उसके साथ अलबुर्ज़ पर्वत की एक कन्दरा में निवास करने लगी।

इधर फरीदूँ के बिदा होने के दो-तीन दिन पश्चात् ज़ोहाक को यह ज्ञात हुआ कि फरीदूँ नाम के एक बालक का लालन-पालन पुरमाया गाय द्वारा अमुक वन में हो रहा है। यह ज्ञात होते ही वह अपने सैनिकों-सहित उस वन में पहुँचा, पर फरीदू का कोई चिह्न वहाँ न पाकर उसने क्रोधावेश में पुरमाया तथा उसके संरक्षक का बध कर डाला। तत्पश्चात् वह आबतैन के निवास-स्थान को गया। वहाँ भी विफल-मनोरथ होकर उसके भवन को तहस-नहस करवा दिया।

फरीदूँ को अलबुर्ज़ पर्वत की कन्दरा में एक साधु के संरक्षण में रहते-रहते जब सोलह वर्ष बीत गये तो वह अपनी माँ को लेकर बन में रहने लगा। एक दिन उसने अपनी माँ से पूछा—"माँ, भला बता तो सही कि ज़ोहाक ने मेरे पिता का बध क्यों किया?" माँ ने उपयुक्त अवसर जानकर सम्पूर्ण वृत्त आद्योपान्त कह सुनाया। पिता के निर्दोष बध पर फरीदूँ को बड़ा क्रोध आया। वह अपनी माँ से बोला—"अब मैं युवा हुआ, अस्तु मेरी इच्छा है कि ज़ोहाक से पिता के बैर का प्रतिशोध चुकाऊँ।" पुत्र की बात सुनते ही फर्ज़ानक उसे समझाने लगी "हे पुत्र, तुममें तथा ज़ोहाक में राई-पर्वत का अन्तर है। वह एक महाराजा है और धन, देश तथा एक बड़ी सेना का स्वामी है और तुम इस समय एक भिखारी के पुत्र हो। ऐसी स्थिति में उससे युद्ध करना काल को न्यौता देना है।" इस पर फरीदूँ ने वीरोचित स्वर में कहा—"माँ, जिसका कोई सहायक नहीं होता उसकी ईश्वर सहायता करता है। यदि वे दीनानाथ चाहेंगे तो मैं अकेले ही उसको पराजित करके ईरान का सिंहासन हस्तगत करूँगा।" परन्तु माँ राजी न हुई, अतः उसके समझाने से फरीदूँ ने इस विचार को स्थगित रक्खा।

कावा द्वारा फरीदूँ का पक्ष ग्रहण

ज़ोहाक के अन्याय से उत्पीड़ित हो उसकी प्रजा ईश्वर से दिन-रात यही प्रार्थना किया करती थी कि हे भगवन् तू शीघ्र ही फरीदूँ का ध्यान इस ओर प्रेरित कर जिससे वह यहाँ आकर ज़ोहाक का शिर धड़ से पृथक् कर दे और हम लोगों को संकट से छुड़ावे।

इधर तो प्रजा की यह दशा थी, उधर एक दिन ज़ोहाक ने समस्त प्रजा को बुलवा कर कहा कि मुझे ज्ञात हुआ है कि मेरे प्राणों का गाहक मेरा वैरी भारतवर्ष की ओर गया है, अतएव मेरी इच्छा है कि मैं दानवों तथा मनुष्यों की सेना को साथ ले उसका पीछा करूँ और उसका वध कर अपनी चिन्ता का उन्मूलन करूँ। महापुरुषों का कथन भी है कि शत्रु को छोटा न समझना चाहिए, साथ ही मेरा यह विचार है कि वहाँ मेरे प्रस्थान करने से पूर्व तुम लोग मेरे विषय में एक ऐसा प्रशंसा-पत्र बनाओ जिसमें मेरे न्याय, प्रजा-पालन तथा यश का वर्णन हो। उस पर तुम सबके हस्ताक्षर होने चाहिए जिन्हें दिखा कर उसे मैं शेष प्रजा के हस्ताक्षर भी करा सकूँ।

एक दिन नियत समय पर वे सब लोग उपस्थित हुए। सर्वप्रथम राज्य के सब प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने हस्ताक्षर किये तदन्तर सर्वसाधारण तथा प्रजा को भी हस्ताक्षर करने का आदेश किया गया। इसी समय कावा नामक एक लोहार दोहाई देता हुआ राज-सभा में पहुँचा और बोला—"महाराज बचाइये, रक्षा कीजिए! आपके सेवक मेरे पुत्र को इस हेतु पकड़े लिये जा रहे हैं कि उसे मार कर उसका भेजा आपके सर्पों को खिला दें। क्या यही आपका न्याय है कि दो नागों के हेतु आप सर्व प्रजा का वध करते रहें? इसी न्याय पर क्या आप एक बड़े धर्मात्मा तथा न्यायपूर्ण शासक कहलाना चाहते हैं?"

ज़ोहाक ने कावा का तर्क सुन कर तथा अवसर का विचार कर यही उचित समझा कि उसके पुत्र को प्राण दान दिया जाय। किया

भी उसने यही पश्चात् प्रशंसा-पत्र पर हस्ताक्षर करने को कावा से कहा। कावा ने जब उस झूठे प्रशंसा-पत्र को पढ़ा तो उसके क्रोध की सीमा न रही। उसने गरज कर उन पदाधिकारी तथा प्रतिष्ठित सज्जनों को यह कह कर धिक्कारा कि तुम लोगों ने भारी अन्याय किया है जो अपने प्राणों के भय से इस असत्य प्रशंसा-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिये। यह नारकीय कीट अपने साथ तुम लोगों को भी नरक द्वार दिखाना चाहता है। इतना कहते-कहते उसका आवेश इतना बढ़ गया कि उसने प्रशंसा-पत्र के टुकड़े टुकड़े कर डाला। तदनन्तर ज़ोहाक को धिक्कारता हुआ वह अपने पुत्र-सहित राज-सभा के बाहर आया और सीधे अपने घर जाकर उसने एक चर्म की पताका बनाई और घोषणा कराई कि जिसे फरीदूँ से प्रीति हो वह इस पताका की छाया में आकर उपस्थित हो जाय। फलतः अनेक सैनिकों तथा नागरिकों ने उस आन्दोलन में भाग लिया। इस प्रकार एक बड़ी सेना एकत्रित कर कावा ने उसका सञ्चालन किया और फरीदूँ को खोजता हुआ उसी वन में जा निकला। फरीदूँ के सम्मुख जाकर उसने विनम्र भाव से उसका अभिवादन किया और बोला—"महाराज, अब आप शीघ्र चलकर उस दुराचारी ज़ोहाक का मान मर्दन कर ईरान के शासक बनिये जिससे उत्पीड़ित ईरान निवासियों की हृदय-ज्वाला शान्त हो।" कावा का निमंत्रण सुनकर फरीदूँ ने परम पिता परमात्मा को प्रणाम किया और कावा के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया।

फरीदूँ-ज़ोहाक-युद्ध तथा फरीदूँ की विजय

इसके पश्चात् फरीदूँ उस पताका को भली-भाँति सजा कर अपनी माँ के निकट बिदा माँगने गया। फर्ज़ानक ने सम्पूर्ण वृत्तान्त सुना और उसे अशीर्वाद देकर बिदा किया। अब फरीदूँ पड़ाव पर पड़ाव मारता हुआ ईरान की ओर बढ़ा चला।

फरीदूँ के दो भाई और थे, जिन्हें वह बड़ा प्यार करता था; पर

वे दोनों उससे द्वेष भाव रखते थे, और चाहते थे कि किसी प्रकार उसका अन्त कर दें; परन्तु कोई ऐसा अवसर उनके हाथ न आता था। एक दिन फरीदूँ तथा उसकी सेना का पड़ाव एक पर्वत की तलहटी में पड़ा। वहाँ एक साधु की समाधि थी। जब फरीदूँ को इसकी सूचना मिली तो उसने उसी समाधि के सम्मुख वह रात बिताई। आधी रात के समय जब वह उनसे सहायता का याचक हुआ तो इस प्रकार आकाशवाणी हुई कि तुम्हें यह मंत्र देता हूँ, इसे तुम कंठस्थ कर लो और जिस समय तुम पर कोई विपदा आ पड़े अथवा प्राण जाने की आशंका हो तो तुरन्त इस मंत्र का उच्चारण करना। उस समय ईश्वर तुम्हारी सहायता करेगा।

फरीदूँ उस वाणी को सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ और सबेरा होते ही उसने सेना को प्रस्थान करने की आज्ञा दी। सेना ने समस्त दिन यात्रा करने के पश्चात् संध्या समय एक पर्वत के नीचे पड़ाव डाला। उस रात को जब फरीदूँ सो रहा था उसके दोनों द्वेषी भाइयों ने पर्वत पर चढ़कर एक भारी शिला-खण्ड को फरीदूँ के ऊपर ढकेल दिया। लुढ़कते हुए शिला-खण्ड के शब्द से फरीदूँ की आँख खुल गई, और वह आकाशवाणी से दिये गये मंत्र का उच्चारण करने लगा; फलतः वह शिला बीच ही में रुक गई और फरीदूँ का बाल भी बाँका न हो सका।

शिला के इस प्रकार बँध जाने से उन दोनों भाइयों को बड़ा आश्चर्य हुआ। वे दूसरे मार्ग से नीचे आकर फरीदूँ के सम्मुख उपस्थित हुए और ईश्वर को धन्यवाद देकर बोले कि ईश्वर ने ही आपकी रक्षा की। अन्यथा उस शिला के गिरते ही आपका प्राणान्त हो जाता और फिर हम लोग निराधार हो जाते। फरीदूँ ने तो सम्पूर्ण वृत्त पहले ही जान लिया था, फिर भी उसने कुछ न कहा और अपने भाइयों की पद-वृद्धि कर दी। वे भी द्वेष का परित्याग कर उससे प्रेम करने लगे।

प्रातःकाल होते ही यह दल दजला नदी के तीर पर पहुँचा। वहाँ उसने नाविकों से नावें माँगीं, परन्तु उन्होंने अस्वीकार कर दिया। इस पर फरीदूँ ने घोड़े को नदी में उतार दिया और अपनी सेना को अपने पीछे चले आने का आदेश किया। ईश्वर जब सहायक होता है तो सभी अनुकूल हो जाते हैं। तभी तो फरीदूँ सेना-सहित बिना नाव के नदी पार कर गया और उसको कोई हानि नहीं पहुँची।

नदी पार करके फरीदूँ जब आगे बढ़ा तो उसे तान्त्रिक रीति पर बना हुआ एक भवन मिला जो हिंसक पशुओं तथा अन्य अनेक प्रकार की विपदाओं से परिपूर्ण था। फरीदूँ ने इसकी किञ्चिन्मात्र चिन्ता न की और उसके भीतर प्रवेश कर गया। भीतर पदार्पण करते ही बड़े-बड़े अजगरों तथा दानवों ने उस पर आक्रमण करना चाहा पर उसके मंत्रोच्चारण के साथ ही सब शान्त हो गये तब फरीदूँ ने अपनी गदा-प्रहार से सब को जमपुरी का मार्ग दिखाया।

इसके पश्चात् उसे वहाँ पर एक रत्न-जटित सिंहासन दिखाई पड़ा। जब उसने कावा से पूछा कि यह किसका सिंहासन है तो उसने उत्तर दिया कि महाराज पहले इसका अधिकारी जोहाक था पर अब तो यह आपका है। यह सुनते ही फरीदूँ उस सिंहासन पर जा बैठा। इसी समय वहाँ के साम्राज्य का एक व्यक्ति आ पहुँचा, जिससे उसने जोहाक के विषय में पूछा। उसने उत्तर दिया—"दयानिधान! वह आपकी खोज में भारतवर्ष की ओर गया है, वह चाहता है कि आपको बन्दी बनाकर निष्कंटक हो जाय।" महाराज, इस तांत्रिक भवन के नीचे उसका राजकोष है, जिसमें असंख्य धन है। यह सुनते ही फरीदूँ ने उस भवन को खुदवा कर समस्त धन अपने अधिकार में कर लिया।

यह सब करने के पश्चात् उसने रनिवास की ओर प्रस्थान किया। वहाँ के संरक्षकों ने उसको रोका तो उन्हें धराशायी करके उसने भीतर प्रवेश किया। अन्तःपुर की स्त्रियों ने जब फरीदूँ को देखा तो बड़ा आदर-सम्मान किया और जोहाक के निर्दयपूर्ण व्यवहार की आलोचना

की। उन्होंने पहले कहा कि वह भारत को गया है। उसकी इच्छा है कि भारत को पराजित कर अपना राज्य स्थापित करे। वहाँ से मायावियों को लाकर आपको सर्वनाश करे परन्तु यहाँ की प्रजा की यह हार्दिक इच्छा है कि प्रलय-पर्यन्त आप ही राज्याधिकारी बने रहें।

फरीदूँ का राज्याधिकार

इधर फरीदूँ तो उन सुन्दरियों के प्रेम का सुख लूटने लगा। उधर तांत्रिक भवन का एक संरक्षक कुन्दरू ज़ोहाक के निकट गया और बोला—"हे दयानिधान! आपके चले आने के पश्चात् एक वीर राजा अपनी सेना सहित राजधानी में आया है। उसने तांत्रिक भवन को नष्ट-भ्रष्ट करके राजकोष को हस्तगत कर लिया है और रनिवास में जाकर रम रहा है। उसके साथ दो व्यक्ति और हैं जो उससे बड़े हैं और उन लोगों का शरीर इतना हृष्ट-पुष्ट है कि यदि खोज की जाय तो उनके जोड़ का अन्य मनुष्य शीघ्र मिलना तो कठिन ही है। सबसे छोटे वीर के पास एक गौमुखी गदा है जिसके द्वारा उसने सिंहासन, राजकोष तथा रनिवास पर अधिकार किया है।"

कुन्दरू की बात सुनकर ज़ोहाक ने तुरन्त जान लिया कि वह फरीदूँ के अतिरिक्त और कोई नहीं है; परन्तु ऊपरी मन से उसने यही कहा "वह मेरा कोई अतिथि होगा। कारण यह कि वह जानता था कि यदि मेरे सैनिक इस बात को जान लेंगे कि फरीदूँ ही ने नगर पर अधिकार किया है तो सब के सब मेरे शत्रु बन जायेंगे। इसी कारण उसने उनको अन्धकार में रखने के उद्देश्य से उपर्युक्त बातें कहीं थीं।

जब ज़ोहाक ने फरीदूँ का नाम नहीं लिया और आगन्तुक को अपना अतिथि बताया तो कुन्दरू ने क्रोधित होकर कहा कि आप जिसे

अतिथि बताते हैं रनिवास की नारियों ने उसे अपना प्रेम-पात्र बना रक्खा है। कभी अर्नवाज़ उसका आलिंगन करती है तो कभी शहरनाज़। इस प्रकार अन्तःपुर की समस्त रानियाँ उसका आलिंगन करके अपना तथा उस व्यक्ति का मन प्रसन्न करती हैं। आपकी बातों से मुझे स्पष्ट रूप से यही ज्ञात होता है कि अब आपके भाग्य में राज्य नहीं बदा है। कुन्दरू की व्यंग्य-पूर्ण बातें सुनकर ज़ोहाक ने सेना को राजधानी की ओर प्रस्थान करने की आज्ञा दी।

जब वह राजभवन के निकट पहुँचा और सैनिकों को जब यह विदित हुआ कि राज्याधिकारी अन्य कोई नहीं स्वयं फरीदूँ ही है तो उन्होंने ज़ोहाक की अधीनता का परित्याग कर उस न्याय-मूर्त्ति फरीदूँ की सेवा स्वीकार कर ली। सैनिकों का यह विपरीत आचरण देखकर उसने अपने हृदय में विचार किया कि अब इस प्रकार युद्ध करके फरीदूँ को पराजित करना असम्भव होगा। अतः उसने यह निश्चित किया कि रात्रि के समय कमन्द द्वारा उसके शयनागार में प्रवेश कर उसका बध करना चाहिए।

अस्तु, रात्रि होते ही वह अपने शरीर को पूर्ण रूप से नकाब से ढक कर राजभवन के समीप गया और दीवार पर कमन्द लगाकर वह ऊपर चढ़ गया। जब फरीदूँ को उसके आगमन की सूचना मिली तो वह तुरन्त अपनी गोमुखी गदा लेकर उसके सामने आया। आते ही उसने जोहाक के शिर पर ऐसा कठोर आघात किया कि उसका शिर चकनाचूर हो गया। वह दूसरी बार आघात करने को ही था कि उसे एक आकाश-वाणी इस आशय की सुनाई पड़ी कि तुम अब इसको न मारो क्योंकि अभी इसका जीवन शेष है। हा, इसे बन्दी बनाकर पर्वत पर डाल दो, जिससे वह अपने कर्मों के फल तो भोग ले। अस्तु ईश्वरीय प्रेरणा के अनुसार उसने जोहाक को बन्दी करके दुनाबन्द नाम के पर्वत पर डलवा दिया।

ज़ोहाक के बन्दी होने के पश्चात् ईरान, तूरान तथा चीन के समस्त नरेशों ने वहाँ आकर फरीदूँ की आधीनता स्वीकार की, फरीदूँ ने भी

उनको हर प्रकार से सम्मानित किया। उसने ऐसे न्याय से राज-काज किया कि समस्त भूमण्डल-निवासी उसकी प्रशंसा करते थे। उसने समस्त राज्य के याचकों को धन देकर उन्हें सन्तुष्ट किया। इस भाँति एक सहस्र वर्ष पर्यन्त वह राज-सुख भोगता रहा।

पुत्रों में राज्य-विभाजन तथा कलह

फरीदूँ के तीन पुत्र थे। सलम, तूर और ईरज, तीसरा पुत्र सब से छोटा था, परन्तु था सबसे अधिक बुद्धिमान्। फरीदूँ की यह हार्दिक इच्छा थी कि जिस प्रकार इन तीनों ने एक ही कोख से जन्म लिया है उसी प्रकार यदि कहीं एक ही माता से उत्पन्न तीन पुत्रियाँ हों तो अपने पुत्रों का उनसे विवाह करूँ। इस विचार से प्रेरित हो उसने सन्दल नामी एक व्यक्ति को इस कार्य पर नियुक्त किया। वह अनेक देशों में भ्रमण करता हुआ यमन पहुँचा। वहाँ उसे यह ज्ञात हुआ कि यमन के शासक के तीन पुत्रियाँ हैं और तीनों ने एक ही माता की कोख से जन्म लिया है। उसने फरीदूँ को इसकी सूचना दी। फरीदूँ स्वेच्छानुसार अपने पुत्रों का विवाह कर बधुओं सहित स्वदेश लौटा।

एक दिन फरीदूँ एकान्त में बैठ इस प्रकार विचार करने लगा कि अब मैं वृद्धावस्था को प्राप्त हो चुका हूँ और कोई नहीं जानता कि किस क्षण मेरा जीवन-दीपक बुझ जाय। कौन जानता है कि फिर राज्य के हेतु मेरे पुत्रों में परस्पर वैर न हो जायगा। इस कारण मुझे उचित है कि मैं अपने राज्य का विभाजन कर एक-एक भाग तीनों पुत्रों को दे दूँ। इस विचार से प्रेरित हो उसने अपने राज्य के तीन विभाग न्याय पूर्वक किये तथा एक दिन निश्चित कर समस्त सभासदों को बुलाकर अपने तीनों पुत्रों को भी बुला भेजा और उन्हें अपनी इच्छा से अवगत कराया।

पिता की इच्छा को जानकर पुत्रों ने कहा "हमें आपके निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई कारण नहीं प्रतीत होता, अस्तु हम आपके बँटवारे को सहर्ष स्वीकार करते हैं। उसने रूम तथा खावर का देश सलम को देकर, तूर को चीन तथा तूरान का शासक बनाया, और सब से छोटे पुत्र ईरज को ईरान का उत्तराधिकारी नियुक्त किया। तीनों पुत्र पिता के वचन को मानकर अपने-अपने भाग के स्वामी बन गये और सुख-पूर्वक राज्य करने लगे।

कुछ दिन राज्य करने के पश्चात् एक दिन सलम के हृदय में ईरज के प्रति द्वेष-भाव का उदय हुआ। उसने तूर को लिख भेजा कि मुझे पिता का राज्य-विभाजन उचित नहीं जान पड़ता, क्योंकि उसने ईरज को जो कि सब से छोटा है ईरान का शासक बनाया जो कि वास्तव में शान्ति-निकेतन है, और हम लोगों को अपने राज्य का वह भाग दिया जिसमें प्रत्येक घड़ी शत्रुओं की आशंका बनी रहती है। इसके अतिरिक्त इन प्रान्तों की आय भी ईरान की अपेक्षा बहुत कम है। अब तुम्हारी जो अनुमति हो वह शीघ्र लिखकर भेजो।

जब तूर ने सलम का पत्र पढ़ा तो उसको भी पिता के अन्याय पर क्रोध आ गया और उसने सलम को लिखा कि तुम्हारे मतानुसार हर घड़ी तुम्हारी सहायता करने को तैयार हूँ, साथ ही मेरी यह अभिलाषा है कि तुम पहले इस आशय का एक पत्र पिता के पास भेजो। यदि वह हम लोगों के मतानुसार चलने को सहमत हो जावें तो व्यर्थ ही रक्त-पात क्यों किया जाय, और यदि वह हमारे प्रस्ताव को अस्वीकार करें तो फिर अपने बाहुबल से हम ईरान को हस्तगत करेंगे ही।

जब पत्र-वाहक तूरान से यह उत्तर लेकर लौटा तो सलम ने पिता को लिखा कि हमारा प्रस्ताव यह है कि ईरान का राज्य मुझको दिया जाय, कारण यह कि मैं सब में ज्येष्ठ हूँ। यदि आप इस बात को स्वीकार करेंगे तो ईरान-निवासी तथा ईरज मृत्यु से मुक्त हो जायेंगे अन्यथा हम दोनों सेना के बल से उस देश के उत्तराधिकारी बनेंगे। यह

पत्र देकर उन्होंने पत्र-वाहक को शीघ्र उत्तर लाने का आदेश देकर विदा किया।

तूरान से पत्र-वाहक आने का समाचार पाकर फरीदूँ ने उसे अपने पास बुलाया। उसने फरीदूँ के सम्मुख उपस्थित होकर सलम का पत्र दिया। फरीदूँ ने जो पत्र पढ़ा तो उसका रक्त जमकर रह गया। परन्तु थोड़ी देर के पश्चात् वह उच्च स्वर से बोला कि जाओ सलम तथा तूर से कह देना कि तुम्हारे पिता फरीदूँ ने कहा है कि क्या तुम्हें लोक-लाज का भी भय नहीं है, जो एक बार पिता के निर्णय को स्वीकार कर फिर उसका उल्लंघन करने पर तुल गये हो। मैंने किसी के साथ कोई अन्याय नहीं किया। मेरा बँटवारा ठीक है। उनको उचित है कि ईरज को, सब से लघु भ्राता होने के नाते, स्नेह-दृष्टि से देखें न कि इस प्रकार गुट्टबंदी कर उसके साथ अन्याय करने को उद्यत हो जायँ। उन्हें विदित होना चाहिए कि राज्य-लक्ष्मी सर्वदा एक के पास नहीं रहती और न कोई भी मनुष्य सदैव इस संसार का भोगी बना रह सकता है। उन्हें योग्य है कि ईश्वर का भय मानकर न्याय-पूर्वक शासन करें। यह उत्तर देकर उसने पत्र-वाहक को विदा कर ईरज को अपने पास बुलाया।

ईरज के आने पर फरीदूँ ने सजल-नयन हो कहा—"हे पुत्र! अभी-अभी सलम तथा तूर का पत्र आया है। उनकी यह इच्छा है कि ईरान का साम्राज्य उन्हें दिया जाय अन्यथा वे दोनों रक्त-पात के लिए उद्यत होंगे। तुम मेरी अनुमति मानो, तुम से कुछ कहूँ। तो मैं ईरज ने सिर झुकाकर स्वीकृति दी। तब फरीदूँ ने कहा—"प्यारे ईरज! मेरी यही हार्दिक इच्छा है कि आपस में रक्त-पात न हो। अतः तुम इस परिवर्तन शील जगत की माया का परित्याग कर मेरी भाँति एकान्त वास ग्रहण कर लो, जिससे तुम जगत की निर्दोष जनता के रक्त-पात के भागी न हो।"

पिता के अमृत-मय वचन सुनकर ईरज ने कहा—"हे पिता! मुझे आपका मत स्वीकार है। मैं स्वयं भाइयों के पास जाकर अपने ईरान परित्याग का सम्वाद सुनाता हूँ। मैं सदैव उनकी चाकरी करके अपना

जीवन निर्वाह करूँगा। वे दोनों वैसे भी तो सब प्रकार से मेरी अपेक्षा श्रेष्ठतर हैं। ईरज की बात सुनकर फरीदूँ ने सलम तथा तूर को एक पत्र लिखा जिसका आदेश यह था कि ईरज तुम्हारे निकट क्षमा-याचना के हेतु आ रहा है। उसने तुम्हारी इच्छा तथा मेरे मतानुसार ईरान राज्य का तुम लोगों के हेतु परित्याग कर दिया है। अब तुम दोनों उसे भी बाँट लो। साथ ही मैं यह आशा करता हूँ कि तुम उसके इस सद्-व्यवहार की प्रशंसा करके उसे अपने पुत्र की भाँति प्यार करोगे। इस पत्र को लिखकर फरीदूँ ने ईरज को देकर कहा कि ईश्वर चाहेगा तो मैं फिर तुम्हें देखकर अपनी छाती शीतल करूँगा।

पिता का आशीर्वाद लेकर ईरज अपने राज्य-प्रासाद में पहुँचा और अपनी यात्रा के हेतु तैयार हो थोड़े से सेवकों को साथ ले तूरान की ओर चल पड़ा।

इधर सलम तथा तूर दोनों तूरान में एक होकर ईरान के ऊपर आक्रमण करने की युक्ति सोचते ही थे, कि इतने में समाचार-वाहक ने आकर कहा कि महाराज ईरज अकेले ही आपके पास आ रहे हैं। यह सुनकर उन दुष्टों की हृदय-कली खिल गई। उन कपटियों ने आगे बढ़-कर उसका स्वागत किया और अपने राजभवन में लाकर उसे ठहराया। जब सेना ने ईरज को देखा तो उस पर मुग्ध हो गई और ईरान पर आक्रमण करने से उसने मुख मोड़ लिया। सेना की यह स्थिति देखकर वे दोनों अपने हृदय में भयभीत हुए, उन्हें यह आशंका होने लगी कि कहीं ऐसा न हो कि ईरान हस्तगत करने के बदले हम लोगों को अपने अधिकार से भी वंचित होना पड़े। यह विचार कर उन दोनों ने यह निर्णय किया अब अपने हित के लिए हमें ईरज के रक्त से अपने हाथ रँगने ही चाहिए।

एक दिन ईरज जब इन लोगों के निकट आया तो इन लोगों ने कहा कि तुम्हें ईरान-राज्य का इतना अहंकार है कि तुम्हें हम लोगों के सम्मान का लेश-मात्र भी ध्यान नहीं रहता। यह सुनते ही ईरज ने कहा कि भाई

मैं तो आप लोगों से बहुत ही छोटा हूँ। मैंने तो आप लोगों की प्रसन्नता के हेतु राज्य त्याग दिया और आपकी चाकरी करने में ही मैं अपनी श्रेष्ठता समझता हूँ।

ईरज के इन विनम्र वाक्यों का भी उन पाषाण-हृदयी असुरों पर कोई प्रभाव न हुआ। उन्होंने उसे बरबस पकड़ लिया और अपनी कृपाण द्वारा उस निःसहाय तथा निर्दोष प्राणी का बध करके उसका शिर फरीदूँ के निकट भेज दिया। और यह कहला भेजा कि पिताजी से कहना कि अब इस शिर पर राजमुकुट पहना कर ईरान का शासन करावें।

इधर फरीदूँ इस चिन्ता में था कि कब ईरज आये और कब मैं उसका चन्द्र-बदन देखकर अपने नेत्रों को तृप्त करूँ, कि इतने में ईरज के साथी रोते-पीटते उसका शिर लेकर आ पहुँचे। पुत्र का शिर देखते ही फरीदूँ मूर्छित होकर गिर पड़ा। जब सचेत हुआ तो कहने लगा कि पुत्र-मृत्यु के चिह्न-स्वरूप सब लोग काले वस्त्र धारण करें। तदनन्तर उसने ईरज की वाटिका में उसकी समाधि बनाई और मृतक संस्कार के समाप्त हो जाने पर उसने ईश्वर से प्रार्थना की कि तू ईरज के वीर्य्य से एक ऐसा पुत्र दे जो अपने पिता के वध का प्रतिशोध ले सके।

ईरज के रक्त का बदला

ईरज-वध के थोड़े दिनों पश्चात् फरीदूँ ने रनिवास में जाकर लोगों से पूछा कि राज-भवन की स्त्रियों में से कोई गर्भवती है अथवा नहीं। इस पर उसे ज्ञात हुआ कि माह आफ़रीद गर्भवती है। यह जानकर उसके मन में धीरज हुआ, और वह दिन-रात ईश्वर से यही प्रार्थना करने लगा कि हे जगदीश्वर! तुम इस गर्भ से पुत्र का जन्म दो। नव मास के अनन्तर आफरीद ने एक पुत्री को जन्म दिया। 'फरीदूँ' ने उस का बड़े उत्साह-पूर्वक लालन-पालन करना आरम्भ कर दिया। जब

वह युवती हुई तो उसने पशंग नामक एक वीर से उसका विवाह कर दिया। यह वीर फरीदूँ के वंश से था। विवाह के कुछ काल पश्चात् पशंग की स्त्री ने गर्भ धारण किया और उचित अवधि व्यतीत होने पर वह एक पुत्र-रत्न की माता हुई। इस नव-जात शिशु का मुख ईरज के सदृश था। उसका नाम मनोछर रक्खा गया।

मनोछर के वय प्राप्त करने पर फरीदूँ ने उसे प्रत्येक विद्या में दक्ष कर दिया। अब वह सलम तथा तूर से बदला लेने के निमित्त सेना एकत्र करने लगा। ईरज के रक्त का बदला लेने के उद्देश्य से असंख्य सैनिक काबियानी पताका के नीचे आ जुटे। और एक भारी सेना संगठित हो गई।

इधर जब सलम और तूर को इस आक्रमण का समाचार मिला तो दोनों अपने हृदय में बहुत भय-भीत हुए, और सन्धि तथा क्षमा याचना के हेतु उन्होंने एक दूत द्वारा अगणित हाथी, घोड़े, ऊँट तथा असंख्य रत्नादि भेजे। जब वह दूत ईरान पहुँचा। और फरीदूँ के सम्मुख भेंट सहित उपस्थित हुआ तो फरीदूँ का मन डाँवाडोल हो गया। अस्तु उसने मनोछर को बुलाकर कहा—"मेरे बच्चे! देखो तुम्हारा प्रताप कितना प्रबल है कि बिना आक्रमण किये ही तुम्हारे शत्रु तुम्हारी अधीनता स्वीकार करने को प्रस्तुत हैं और ईरज के बध की क्षमा माँगकर उन्होंने यह असंख्य रत्नादि भेंट स्वरूप भेजे हैं।

मनोछर ने जो यह देखा और सुना तो उसके क्रोध की सीमा न रही। उसने दूत से गरजकर कहा—"तुम इन सब वस्तुओं को लौटा ले जाओ और सलम तथा तूर से कह देना कि ईरज के रक्त का प्रायश्चित रक्त ही से हो सकता है और होगा। मैं कावा आदि योद्धाओं को लेकर उन पर अवश्य आक्रमण करूँगा। उस समय मैं उनको देख तथा समझ लूँगा। इन लोगों ने कपट-भाव से इन रत्नादि का प्रलोभन देकर यह चाहा है कि इतना बड़ा पापी अपने पाप-दण्ड को न भोगे। यह असम्भव है।"

जब उस पत्र-वाहक ने मनोछ्र का शरीर तथा बल देखा और उसके क्रोध-पूर्ण उत्तर को सुना तो उसका हृदय काँप गया और वह तुरंत ईरान से बिदा होकर तूरान पहुँचा और सलम एवं तूर से बोला—"हे महाराज ! मनोछ्र क्या है साक्षात् देव है जिसके बल के सामने बड़े-बड़े वीरों का हृदय धक-धक करने लगता है। उसकी सेना का प्रत्येक वीर अपने प्राणोत्सर्ग के हेतु तैयार है।"

पत्र-वाहक के उत्तर को सुनकर वे दोनों थर-थर काँप उठे। जब कुछ थोड़ा मस्तिष्क ठिकाने आया तो उन्होंने निर्णय किया कि मनोछ्र का यहाँ आना अतीव हानिकारक होगा, अतः हम को स्वयं चाहिए कि ईरान पर आक्रमण करें।

सलम व तूर का पराजित होना—फरीदूँ का देह-त्याग।

सलम तथा तूर आक्रमण का दृढ़ निश्चय कर एक बड़ी भारी सेना लेकर ईरान पर चढ़ दौड़े। जब फरीदूँ को समाचार ज्ञात हुआ तो उसने मनोछ्र को एक बड़ी सेना के साथ उनसे युद्ध के हेतु भेजा। जब दोनों सेना एक दूसरे के सम्मुख आईं तो दोनों ने अपने-अपने व्यूह बनाये। मनोछ्र की सेना का दाहिना भाग क़बाद की संरक्षता में रक्खा गया और बाँया भाग का अधिकारी गरशास्प हुआ। पीछे का भाग स्वयं मनोछ्र ने अपने अधिकार में रक्खा। इस प्रकार साठ सहस्र सैनिकों के साथ मनोछ्र काबियानी पताका के नीचे शत्रु दमन के हेतु तैयार हो गया।

जब सेनाएँ व्यूह-बद्ध हो चुकीं तो मनोछ्र की सेना से निकल कर क़बाद रण-स्थल में आया। तब तूर तथा सलम भी उससे युद्ध के हेतु आगे बढ़े। रण क्षेत्र में आकर तूर ने क़बाद से कहा कि तू जाकर मनोछ्र से कहदे कि पितृहीन बालक को अस्त्र-शस्त्र से क्या सम्बन्ध। वह

तो पुत्री का पुत्र है । युद्ध करने योग्य कदापि नहीं । इस पर क़बाद ने भी उनके दाँत खट्टे करने के उद्देश्य से कहा कि मनोछ्र ऐसे लोगों से युद्ध करने में अपना अपमान समझता है जिन्होंने सहोदर भ्राता से विश्वासघात किया और उस निस्सहाय युवक का निर्दयतापूर्वक बध किया । तुम लोगों को ज्ञात होना चाहिये कि इस हत्या का पाप अन्त तक तुम लोगों पर रहेगा और जगत का प्रत्येक प्राणी महाप्रलय तक तुम्हारे नाम पर थूकता रहेगा ।

कबाद की व्यंग्यपूर्ण वाणी को सुनकर दोनों रण-क्षेत्र से लौट गये, और उस दिन युद्ध स्थगित रहा । जब कबाद को इसकी सूचना मिली तो वह भी अपने डेरे में जाकर विश्राम करने लगा । इसी बीच कबाद मनोछ्र के निकट जाकर बोला—"महाराज, सलम तथा तूर ने अमुक बातें कहीं हैं । सलम की बातें सुनकर मनोछ्र हँसा और बोला कि इस बकवाद से कोई लाभ नहीं । कल युद्ध के समय स्वयं ही स्पष्ट रूप से विदित हो जायगा कि वास्तव में कौन युद्ध के उपयुक्त नहीं है ।"

दूसरे दिन प्रातःकाल फिर दोनों सेनायें रण-क्षेत्र में आ डटीं, और तुरत भिड़ गईं । इस समय वीरों का ध्यान अपने प्रिय प्राणों की ओर न रहा था, वरन् अपने अस्त्रों तथा शत्रुओं की ओर था । कभी वीरों का शिर गदाएँ आलिङ्गन करती थीं तो कभी उनका वक्षस्थल तीक्ष्ण भालों की नोकों को परिरम्भण करता था । सारांश यह कि सारा दिवस युद्ध होता रहा, और बहुत से योद्धाओं ने वीर-गति प्राप्त की । सारी पृथ्वी रक्त-रंजित हो गई । इस युद्ध में मनोछ्र विजयी हुआ, यह देखकर सलम तथा तूर ने सोचा कि यदि कल भी विजयश्री उसी को प्राप्त हुई तो हम लोगों को अपने राज्य से भी च्युत होना पड़ेगा । अब यही उचित है कि हम लोग रात्रि में आक्रमण करके शत्रुओं का संहार करें और फिर मनोछ्र का बध करके इसका भी शिर फरीदूँ के पास भेज दें ।

इधर मनोछ्र को भी सलम तथा तूर के निश्चय का आभास मिल गया। उसने कबाद से कहा कि सलम आदि रात्रि में आक्रमण करने वाले हैं, अतः सैनिक भार मैं तुम्हारे ऊपर डालता हूँ। कबाद ने मनोछ्र की आज्ञा शिरोधार्य कर के तीस सहस्त्र बांके वीरों को सुसज्जित करके डेरे के चारों ओर नियुक्त कर दिया और समस्त सेनाधिकारियों को भी सचेत रहने का आदेश किया।

जब रात के काले परदे ने संसार को ढाँप लिया तो सलम तथा तूर अपनी सेना सहित मनोछ्र के डेरे की ओर चले और आक्रमण की सुविधा देखने लगे। उन्होंने देखा कि ईरानी सचेत हैं, अतः चाहते थे कि लौट जांय कि इतने में ईरानियों ने स्वयं ही उन पर आक्रमण कर दिया। फिर क्या था सारी रणभूमि वीरों के सिर तथा धड़ों से अट चली। जब मनोछ्र को युद्ध की सूचना मिली तो वह भी अपनी गदा ले कर आ पहुँचा, और काल की भाँति तूर के सैनिकों को यमपुरी का मार्ग दिखाने लगा। युद्ध करते-करते वह तूर के निकट जा पहुँचा और उसका बध करके उस का सिर फरीदूँ के पास भेज दिया जिसे देख कर फरीदूँ ने उसकी बड़ी प्रशंसा की।

तूर को उसके कर्मों का फल चखा कर मनोछ्र सलम की ओर बढ़ा। पहिले तो बहुत देर तक दोनों में युद्ध होता रहा पर अन्त में सलम रण-स्थल से भाग कर एक निकटवर्ती गढ़ में जा छिपा। मनोछ्र ने भी उस गढ़ पर घेरा डाल दिया। इस गढ़ का संरक्षक काको नामी एक वीर था। वह मनोछ्र से युद्ध करने आया। मनोछ्र तथा काको में युद्ध होने लगा। काको ने एक तीक्ष्ण बाण द्वारा उसके वक्ष को बेध दिया। मनोछ्र ने तुरन्त उस बाण को अपने शरीर से पृथक कर काको पर अपनी असि से प्रहार किया। उसे निष्फल होते देख उसके क्रोध की सीमा न रही। उसने अपने घोड़े को एड़ लगा कर आगे बढ़ाया और काको को पकड़ कर पृथ्वी पर पटक दिया और उसका सिर काट लिया।

काकों का संहार कर मनोछर ने अपनी सेना को घेरा डाल रखने की आज्ञा दी, अस्तु सैनिकों ने अपने-अपने डेरे गढ़ के चारों ओर डाल दिये। इस प्रकार सलम बहुत काल तक गढ़ के घेरे में बन्दी रहा। एक दिन मनोछर ने उससे कहला भेजा कि तुम स्त्रियों की भाँति गढ़ के भीतर क्यों छिपे पड़े हो। यदि वीर हो तो रण-क्षेत्र में आओ। मनोछर की उपर्युक्त बातें सुनकर सलम का वीर रक्त खौलने लगा। वह गढ़ त्याग कर सेना सहित बाहर निकल आया और मनोछर से युद्ध करने लगा। मनोछर ने शीघ्र ही उसको भी यमपुरी का मार्ग दिखा दिया।

सलम की मृत्यु के पश्चात् उसका मंत्री मनोछर के निकट आकर विनम्र भाव से बोला "महाराज! प्रजा का रक्त-पात करने से क्या लाभ। कारण यह कि वह सब तो राजाज्ञा के अधीन थे। अस्तु अब आप युद्ध स्थगित करें और राज्य-सिंहासन पर अधिकार करें।" मंत्री की बातें सुन कर उस वीर को दया आ गई और उसने युद्ध बन्द कर दिया। मंत्री अपने सैनिकों को लेकर मनोछर की सेवा में उपस्थित हुआ और उनसे मनोछर की अधीनता स्वीकार करने को कहा। मंत्री की आज्ञानुसार सब ने मनोछर को मस्तक नवाया और मनोछर ने भी उनके पदों की वृद्धि कर प्रत्येक सैनिक को पुरस्कार दे कर प्रसन्न किया। इसके पश्चात् फरीदूँ ने एक सभा कर मनोछर का राज्य-तिलक किया। इस प्रकार मनोछर न्याय तथा बल के सहारे ईरान तथा तूरान का शासक हुआ।

साम के घर ज़ाल का जन्म

इस युद्ध के पश्चात् सीस्तान का शासक साम जब घर लौटा तो कुछ दिनों के पश्चात् उसकी पत्नी गर्भवती हुई और उचित कालोपरांत उसने एक अद्भुत पुत्र को जन्म दिया। इस बालक का शिर, मुख तथा ललाट रूनी रंग जैसा लाल था और सारे शरीर पर काटों की भाँति के श्वेत बाल बढ़े थे। इस अद्भुत शिशु को देख कर दासी

ने साम को इसकी सूचना दी। जब साम ने स्वयं आ कर इस बालक को देखा तो बहुत दुखी हुआ। उसने उसका नाम ज़ाल रक्खा।

घर नगर निवासियों ने कहना आरम्भ किया कि यह बालक साम का औरस पुत्र प्रतीत नहीं होता। उस के मुख तथा शरीर को देख कर ऐसा भासित होता है जैसे वह किसी दानव प्रसंग से उत्पन्न हुआ है। लोगों की इन आलोचनाओं से साम को बहुत दुख हुआ और वह बालक को लेकर अलबुर्ज़ पर्वत पर छोड़ आया।

ईश्वर की लीला देखिए कि साम के पीठ फेरते ही एक पक्षी-नरेश सीमुर्ग़ उस ओर से आ निकला। ज़ाल को रोते-बिलखते देख उसे, दया हो आई। वह उसे अपने निवासस्थान पर ले जाकर अपने बच्चों की भाँति उसका पालन पोषण करने लगा।' इधर बच्चे भी उससे इतने हिल गये कि एक घड़ी भर भी उसे आखों के ओट नहीं होने देते थे। इसी प्रकार रहते-सहते जब ज़ाल बड़ा हो गया तो एक दिन व्यापारियों का एक जत्था उस पर्वत से हो कर निकला। उन व्यापारियों ने ज़ाल को देख कर सीमुर्ग की स्वीकृति से उसे अपने साथ ले लिया।"

उसी रात को साम ने एक स्वप्न देखा। कोई उससे कह रहा था—"हे साम! तुम जिस पुत्र को अलबुर्ज़ पर्वत पर डाल आये थे ईश्वर ने स्वयं ही सीमुर्ग़ का रूप धारण कर उस निराश्रित शिशु का लालन-पालन किया। अब वह बालक बड़ा हो गया है। इस स्वप्न को देख कर साम का हृदय पुत्र स्नेह से परिपूर्ण हो गया। उसने ज़ाल को खोज लाने के लिये अपने सेवकों का एक दल अलबुर्ज़ पर्वत की ओर रवाना किया।

दूसरे दिन साम ने फिर स्वप्न में उसी व्यक्ति को देखा। उसने कहा—"हे दुष्ट! तू ने लोक-लाज के कारण उस नव-जात शिशु के श्वेत बालों को देख कर पर्वत पर डलवा दिया। क्या यही पितृ-प्रेम का प्रमाण है! उस बालक के श्वेत बालों पर घृणा करने से पूर्व तुझे अपने शरीर के बालों की ओर ध्यान देना चाहिये था। तेरी दृष्टि में बच्चे का चाहे कोई मूल्य

न रहा हो पर ईश्वर के लिए वह एक महान प्राणी है। इस स्वप्न को देख कर साम फूट-फूट कर रोने लगा और दूसरे दिन वह स्वयं ही अपने प्रिय-पुत्र की खोज में पर्वत पर गया, परन्तु उसे वहाँ न पाकर रोने तथा विलाप करने लगा और जगदीश्वर से अपनी भूल को क्षमा माँगने लगा

इसी समय ईश्वरीय प्रेरणा से वही सीमुर्ग उस ओर आया और साम को इस प्रकार बिलख-बिलख कर रोते देख उससे इसका कारण पूछा। ज़ाल ने अपने दुःख का कारण बतला दिया, जिसे सुन कर उसने कहा "अभी थोड़े दिन हुए व्यापारियों का एक जत्था इस ओर आया था, वही ज़ाल को ले गया है"। सीमुर्ग द्वारा ज़ाल का पता पाकर साम ने कहा "हे पक्षी-नरेश, यदि मेरे पुत्र को आप मुझसे मिला देंगे तो मैं आप का आजन्म ऋणी रहूँगा, अन्यथा मैं इसी स्थान पर पुत्र-वियोग में अपने प्राण त्याग दूँगा।"

दयावान सीमुर्ग साम के अश्रु-प्रवाह को न देख सका और उसे धीरज बँधा कर उस व्यापारी जत्थे के निकट गया। साम के दुःख की बात उन व्यापारियोंको सुना कर वह ज़ाल को अपने साथ ले आया। जब साम ने ज़ाल को देखा तो उसे अपने हृदय से लगा कर रोने लगा और उससे अपनी भूल की क्षमा याचना की। जब यह आवेग कुछ कम हुआ तो वह सीमुर्ग से विदा माँग कर ज़ाल सहित सीस्तान को लौट आया। चलते समय सीमुर्ग उन्हें अपने कुछ पर देकर बोला—"आवश्यकता पड़ने पर जब तुम इन्हें अग्नि पर रखोगे तो मैं तुरन्त आकर तुम्हारी सहायता करूँगा।"

यहाँ पहुँच कर साम ने ज़ाल को मनोछ्र के सम्मुख उपस्थित किया। उसने ज़ाल के शरीर तथा तेज को देख कर ज्योतिषियों को बुला भेजा और उसके जन्म-ग्रहों का फलाफल पूछा। ज्योतिषियों ने कहा—"महाराज, एक समय वह आएगा जब यह बालक सब वीरों का नेता बन कर अपने बल तथा पौरुष से संसार में अद्वितीय वीर-पद को

प्राप्त करेगा।" मनोछ्र ने इस बात को जान कर तुरन्त ही ज़ाल को बहुत सा पुरस्कार देकर सम्मानित किया और उसे ज़ाबुल का शासक नियुक्त कर काबुल का सेनापति बना दिया।"

रुस्तम का जन्म

राज सभा से इस प्रकार सम्मानित होकर जब ज़ाल सीस्तान आया तो साम ने देश-देशान्तर के गुणियों को बुला कर उन्हें मल्ल-विद्या, शस्त्र-विद्या तथा अन्य विद्याओं की शिक्षा का भार देकर ज़ाल को उनके हाथ सौंप दिया। कुछ कालोपरांत ज़ाल समस्त विद्याओं में दक्ष होकर पिता के निकट आया और उसके चरण छुए। इसके पश्चात् साम की इच्छा ज़ाल का विवाह करने की हुई। उसने काबुल-नरेश मेहराब की पुत्री रूदाबा को चुन कर ज़ाल का विवाह उसके साथ कर दिया।

विवाह के कुछ काल पश्चात् रूदाबा ने गर्भ धारण किया। प्रसव काल के समय उसकी अवस्था बड़ी शोचनीय हो गई। लोगों को प्रत्येक घड़ी उसके प्राणों का भय होने लगा। ज़ाल अपनी स्त्री की यह दशा देख कर घबरा गया और सोचने लगा कि क्या करना चाहिये। इसी समय उसे सीमुर्ग़ का ध्यान आया। उसने तुरन्त उसके एक पर को अग्नि पर रक्खा। उसी समय सीमुर्ग़ पर्वत से उड़ कर ज़ाल के निकट आ पहुँचा और उससे बुलाने का कारण पूछा। ज़ाल द्वारा रूदाबा की शोचनीय दशा की बात सुन कर सीमुर्ग़ ने कहा—"रूदाबा के गर्भ का बालक इतना बृहदाकार है कि उसका प्राकृतिक रीति से पैदा होना असम्भव है। अस्तु जब तक उसका पेट तराश कर बालक को न निकाला जाएगा तब तक वह न निकल सकेगा।"

यह सुन कर ज़ाल ने कहा—"हे दयामय! अब आप ही इसका कोई उपाय कीजिए, अन्यथा रूदाबा के प्राणों का भय है।" सीमुर्ग़ ज़ाल की बात का कुछ भी उत्तर बिना दिये वन की ओर उड़ गया और वहाँ से एक घास ले कर आ उपस्थित हुआ। आते ही उसने ज़ाल से कहा—"तुम रूदाबा को मदिरा पिला कर अचेत कर दो, उसका

पेट चीर कर बच्चा निकाल लो, पश्चात् इस घास को उस घाव पर लगा दो। ईश्वर चाहेगा तो वह शीघ्र ही आरोग्य लाभ करेगी।"

ज़ाल ने सीमुर्ग़ के कथनानुसार रूदाबा को इतनी मदिरा पिलाई कि वह अचेत हो गई। फिर उसी अचेत अवस्था में पेट चाक कर बच्चे को निकाल, उसी घास को घाव पर लगा दिया। घास के लगाते ही रूदाबा का सारा घाव अच्छा हो गया और वह स्वस्थ हो गई। इस के पश्चात् जब लोगों का ध्यान उस नव-जात शिशु की ओर गया तो सब उसके शरीर को देख कर चकित हो गये और कहने लगे—"जब जन्म के समय इसका शरीर देवकुमार की भाँति है तो बड़ा होने पर ऐसा प्रतीत होता है कि वह साम से भी अधिक बली होगा।" उसका नाम रुस्तम रक्खा गया। ज़ाल के पिता तथा श्वसुर को उसके जन्म की सूचना दे दी गई।

रुस्तम अपने शैशव में सात धायों का दूध पी जाता था और यदि कभी इस पर भी तृप्त न होता था तो उसे गाय का दूध पिलाया जाता था। जब वह भोजन करने योग्य हुआ तो उसे पाँच भेड़ों का माँस दिया जाता था जिसे वह सम्पूर्ण रूप से चट कर जाता था। जब वह तीन वर्ष का हुआ तो उसने अश्वारोहण आरम्भ कर दिया। इसके अतिरिक्त सब से अधिक आश्चर्य की बात तो यह थी कि वह इसी आयु में अपने पिता की गदा को लेकर चलाता था, जिसे देख सब लोग चकित हो जाते थे।

रुस्तम के जन्म के पूर्व ही साम माज़िन्दरान के गढ़ पर विजय प्राप्त्यर्थ चला गया था। जब उसे अपने पौत्र के अद्भुत कार्यों का समाचार प्राप्त हुआ तो स्नेह विह्वल हो उसे देखने के हेतु वहाँ से सीस्तान की ओर चल पड़ा। इधर मेहराब भी अपने नाती को देखने के लिये आया और साम से पूर्व ही आ पहुँचा। जब ज़ाल को पिता के आगमन की सूचना मिली तो वह पुत्र तथा श्वसुर सहित उसके स्वागत के हेतु चल पड़ा। जब साम इनके निकट आया तो पौत्र के

पर्वताकार शरीर को देख कर चकित हो उठा। इसी बीच मेहराब तथा ज़ाल घोड़े से उतर कर साम के निकट गये और उनका यथोचित अभिवादन किया। पिता को घोड़े से उतरते देख कर रुस्तम भी चाहता था कि हाथी पर से कूद पड़े कि इतने में साम ने देख लिया और उसे हाथी पर से उतरने के लिये मना कर दिया।

वहाँ से चल कर साम राज-प्रासाद में पहुँचा और वहाँ सिंहासन पर जा बैठा। उसकी दाहिनी ओर मेहराब और बाईं ओर ज़ाल था और रुस्तम सबके सम्मुख एक बड़े सिंहासन पर बैठा तो रुस्तम ने कहा कि मुझे संगीत की वस्तुओं की कोई आवश्यकता नहीं, आप मुझे धनुष बाण तथा गदा इत्यादि बनवा दीजिए। रुस्तम की यह प्रार्थना सुन कर साम गद्‌गद् हो गया और उसने एक रंग मञ्च सज्जित करा कर महोत्सव मनाया। जब सुरादेवी का दौर चला और मेहराब उस प्रभाव में आया तो कहने लगा कि अब मुझे ज़ाल तथा साम का कोई भय नहीं है और न मैं राजा ही से डरता हूँ। अब रुस्तम को लेकर मैं अपने शत्रुओं का नाश करूँगा। मेहराब की बातों को सुन कर साम तथा ज़ाल मुसकराने लगे।

इसी बीच साम को यह सूचना मिली कि शत्रुओं ने फिर बल पर्याप्त कर लिया है, वह फिर चल पड़ा। वह चलते समय ज़ाल तथा रुस्तम को समझाता गया कि देखो तुम लोग किसी प्रकार अन्याय तथा अधर्म के पात्र को ग्रहण न करना। साम के चले जाने के पश्चात् ज़ाल तथा रुस्तम भी अपनी राजधानी सीस्तान को चले आये।

इन दिनों मनोछ्र के पास एक श्वेत गज था। एक रात्रि को वह बन्धन मुक्त होकर नगर में विचरने लगा। जिस ओर वह जाता था मनुष्यों को पकड़-पकड़ कर यमपुरी का मार्ग दिखा देता था। गज के इस भयंकर कृत्य से नगर-निवासी शोर मचाने लगे। इस समय रुस्तम अपने शयनागार में सो रहा था। नागरिकों का शोर सुन कर उसने लोगों से उसका कारण पूछा। लोगों ने कहा—"हे राजकुमार! महाराज

मनोचहर का श्वेत गज बन्धन तुड़ा कर मद मस्त हो नगर में घूम रहा है। जिस किसी को भी वह पा जाता है चीर कर दो खण्ड कर देता है।"

प्रजा के इस प्रकार पीड़ित होने का समाचार सुन कर रुस्तम ने साम की गदा उठा ली और फाटक की ओर चल दिया। वहाँ द्वारपालों ने रोकते हुए कहा—"राजकुमार! एक तो आप अभी बालक हैं, दूसरे रात अँधेरी है, तीसरे श्वेत गज का सामना है, अतः आप न जायें।" इतना कह कर द्वारपाल फाटक से लग कर खड़े हो गये। प्रथम तो रुस्तम ने उनसे नम्रतापूर्वक हट जाने को कहा, पर जब उन लोगों ने इस ओर कुछ ध्यान न दिया तो उसने क्रोधित हो कर एक को एक घूँसा कस कर जमा दिया जिससे वह गिर कर एक स्वामि-भक्त सेवक की भाँति वीर गति को प्राप्त हुआ।

उसकी यह दशा देख कर शेष द्वारपाल भयभीत होकर भागे। रुस्तम अपने बल-प्रयोग द्वारा द्वार के ताले को तोड़ कर राज प्रासाद के बाहर आया। लोगों से गज का पता पूछ कर वह उसी ओर बढ़ा। जब वह मद मत्त गज रुस्तम के सम्मुख आया तो उसने अपनी गदा का एक हाथ ऐसा कस कर मारा कि वह पृथ्वी पर गिर कर छटपटाने लगा। इसी समय रुस्तम ने अपने दूसरे प्रहार से उसे सदा के लिये शान्त कर दिया। हाथी को मार कर वह फिर अपने शयनागार में आकर सो रहा। प्रातः काल जब ज़ाल को रुस्तम द्वारा श्वेत गज के बध का समाचार मिला तो वह अतीव प्रसन्न हुआ और तुरन्त रुस्तम को बुला कर उसके मस्तक तथा भुजाओं को प्रेम पूर्वक चूम कर उसने ईश्वर को धन्यवाद दिया। तदन्तर मन में विचार करने लगा कि मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मेरा यह पुत्र नरीमां की हत्या का बदला अवश्य लेगा।

नरीमाँ की हत्या

ईरान में स्पन्द नाम के एक पर्वत पर एक गगन-चुम्बी गढ़ बना हुआ था। एक बार फरीदूँ ने नरीमाँ को उस गढ़ को विजय करने के लिये भेजा था। नरीमाँ ने दलबल सहित वहाँ पहुँच कर उस गढ़ पर घेरा डाल दिया। एक दिन अचानक किसी ने उस गढ़ पर से एक बहुत भारी शिला फेंकी जो ठीक नरीमाँ के शिर पर गिरी। नरीमाँ इस साघातिक चोट से घायल होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा और उसके प्राण पखेरू उड़ गये।

रुस्तम के वीर कर्म से विश्वस्त हो एक दिन ज़ाल ने उसको उपरोक्त घटना बतलाई और कहा "हे पुत्र! मेरी अभिलाषा है कि वहाँ जाकर अपने पूर्वज की हत्या का बदला लो। पिता की इच्छा जान कर रुस्तम ने सेना एकत्रित कर उस ओर को प्रस्थान किया। जब साम को इसकी सूचना मिली तो अपने युद्ध को स्थगित कर के वह भी अपने पौत्र की सहायतार्थ चल पड़ा।

वहाँ पहुँच कर इन लोगों ने माज़िन्दरान को घेर लिया और तीन वर्ष एक मास तक यह योंही पड़े रहे, फिर भी कृत-कार्य न हो सके। ऐसी स्थिति देख कर एक दिन सामने रुस्तम को बुला कर कहा—"हे नयन ज्योति! हम लोग इस प्रकार घेरा डाल कर उन पर विजय नहीं प्राप्त कर सकते, क्योंकि गढ़-निवासी अपने हेतु भीतर ही अन्न पैदा करते हैं, अतः अन्न जल की उन्हें कोई चिन्ता नहीं। हाँ इन लोगों को केवल नमक की आवश्यकता पड़ती है, अतः यदि तुम एक व्यापारी के वेश में प्रवेश करो तो कुछ सफलता अवश्य हो सकती है। वह स्वयं आवश्यकता पड़ने पर अपने युद्ध-क्षेत्र को वापस लौट गया।

साम की युक्ति को सुन कर रुस्तम ने बहुत से ऊँट एकत्रित किये। और उन पर नमक लादा। नमक के बोरों में उसने अस्त्र-शस्त्र भी छिपा लिये। फिर स्वयं व्यापारी का वेश बना कर तथा अपने कुछ चुने हुए

सैनिकों को ऊँटसरियों के वस्त्र पहना कर वह चल पड़ा। जब वह गढ़ के द्वार पर पहुँचा और गढ़पति को व्यापारी के आगमन की सूचना मिली तो उसने द्वारपाल को फाटक खोल कर व्यापारी को भीतर बुलाने की आज्ञा दी।

रुस्तम ने भीतर पहुँच कर अपनी नमक की दुकानें लगा दीं और गढ़ निवासी ग्राहकों ने लेना आरम्भ कर दिया। सारे दिन नमक बेचने के पश्चात् रात को यह लोग अपने डेरे में आये और आक्रमण करने की बात सोचने लगे। आधी रात बीत चुकने पर रुस्तम ने अपने सैनिकों को ले कर उन लोगों पर आक्रमण कर दिया। जितनी देर में वह लोग सचेत हों उतनी देर में उसने सैकड़ों को यमपुरी की राह दिखाई।

इसी बीच में गढ़ संरक्षक के सैनिक भी अपने-अपने शस्त्रों से सज्जित हो आ पहुँचे और सवेरे तक युद्ध होता रहा। अन्त में संरक्षक स्वयं रुस्तम के सामने आया और वीर गति को प्राप्त हुआ।

सेना सञ्चालक के मरते ही सारी सेना तितर-बितर हो गई। तब रुस्तम तथा उसके सैनिकों ने उस गढ़ को भली भाँति लूटा। तदन्तर रुस्तम ने संरक्षक के निवास स्थान की ओर बढ़ कर देखा कि समस्त भवन संगखारा का बना हुआ है और उस पर एक रत्न जटित गुम्बद है। यह देख कर वह कहने लगा कि यह साधारण प्राणियों की कला-कुशलता कदापि नहीं है।

यह सब देखने के पश्चात् उसने ज़ाल को एक पत्र लिखा जिसमें उसने गढ़-विजय का शुभ संवाद लिखने के पश्चात् यह भी पूछा कि अब आप की क्या आज्ञा है। मैं आप के पास चला आऊँ अथवा यहीं ठहरूँ। पुत्र का पत्र पढ़ कर ज़ाल गद्‌गद् हो गया और उत्तरस्वरूप उसने रुस्तम को लिखा कि तुरंत गढ़ को भस्म कर के मेरे पास चले आओ क्योंकि तुम्हें देखे बिना मेरी बुरी अवस्था हो रही है। पिता की आज्ञा पाते ही रुस्तम उस गढ़ का अग्नि संस्कार कर सीस्तान की ओर चल दिया।

जब रुस्तम के आगमन की सूचना ज़ाल को मिली तो वह उसकी अगवानी के लिये स्वयं उपस्थित हुआ और उसे छाती से लगा कर अपना हृदय शीतल किया। तदनन्तर ज़ाल ने साम को माज़िन्दरान-विजय का शुभ संवाद लिख भेजा। साम पौत्र की वीरता का समाचार पढ़ कर गद्गद् हो उठा और बोला कि अब मैं फिर जीवित हो उठा। साम के अतिरिक्त ईरान का प्रत्येक व्यक्ति रुस्तम की प्रशंसा करता था और कहता था अब ईश्वर चाहेगा तो रुस्तम द्वारा समस्त ईरान शत्रु-हीन हो जायेगा।

नौज़र का उत्तराधिकारी

माज़िन्दरान के पराजित होने के कुछ काल पश्चात् एक दिन राज्य के ज्योतिषियों ने आकर मनोछर से कहा—"हे दयानिधान! अब आपके राज-काल का अन्तिम समय अति निकट है, अतः अब आप राजकुमार नौज़र का राज्याभिषेक कर दीजिये।"

ज्योतिषियों की बात सुन कर मनोछर ने नौज़र को बुलवाया और कहा—"हे पुत्र! अब मेरा अन्तिम समय निकट आ गया है और मेरे पश्चात् सिंहासन के उत्तराधिकारी तुम्हीं होगे, अतः मेरी बातों पर ध्यान दो। मेरा मत यह है कि न्याय तथा प्रजा के हिताहित का ध्यान करते हुए राज्य करना जिससे प्रजा सदैव तुम्हारे ऊपर प्राण निछावर करने को तत्पर रहे। इसके अनन्तर तुम को यह भी ज्ञात होना चाहिए कि मूसा के धर्म का समय निकट आ गया है। खावर में अवतार लेकर फरऊन को जो कि उनके धर्म की अवहेलना कर के स्वयं अपने ही को अवतार कहता था उन्होंने धराशायी कर दिया है, अस्तु मेरा मत यह है कि जिस समय वह यहाँ पर पधारें तुम तुरन्त उनके धर्मावलंबी हो जाना। तीसरे यह कि तूरान का एक-एक बालक तुम्हारा प्राण-घातक शत्रु है, और मुझे ऐसा भासित होता है कि मेरी मृत्यु के पश्चात् पशंग का पुत्र अफरासियाब तुम्हारे ऊपर आक्रमणकारी होगा उस समय तुम ज़ाल

तथा रुस्तम को सहायता के लिये बुला लेना। इस समय संसार में रुस्तम अद्वितीय योद्धा है।"

जिस समय मनोछर नौज़र को यह शिक्षाएँ दे रहा था नौजर की आँखों से अविरल अश्रुधार प्रवाहित हो रही थी और सोच रहा था कि अभी तक तो पिता जी को किसी प्रकार का रोग है नहीं फिर यह ऐसी बातें क्यों कर रहे हैं। इस शिक्षा के कुछ काल पर्यन्त मनोछर अचानक रोग-ग्रस्त होकर काल के गाल में चला गया।

नौज़र का राज्याभिषेक

मनोछर की मृत्यु के पश्चात् नौजर सिंहासनारूढ़ हुआ पर उसने अपने पिता की आज्ञा की पूर्ण अवहेलना की। न्याय तथा धर्म के स्थान पर उसने अन्याय तथा विधर्म को अपना मुख्य सचिव बनाया। इसका फल यह हुआ कि सारी प्रजा उससे असन्तुष्ट हो गई और उसने अन्य देश के नरेशों को लिखा कि आकर नौज़र को सिंहासन-च्युत कर के ईरान का राज्य अपने अधिकार में ले लें।

जब नौज़र को प्रजा के विद्रोही होने तथा उनके अन्य प्रान्तों के शासकों को निमंत्रण देने की सूचना मिली तो वह बहुत घबराया और तुरन्त साम को इस आशय का एक पत्र लिखा कि पिता जी मरते समय तुम्हारा ध्यान कर रहे थे, और मुझे आदेश कर गये हैं कि यदि तुम को किसी विपत्ति की आशंका हो तो तुरन्त साम तथा जाल को लिखना, वह अवश्य आकर तुम्हारी सहायता करेंगे। आजकल राज्य की अवस्था शोचनीय हो गई है और मुझे अपने पड़ोसी नरेशों के आक्रमण का भय है, अतएव तुम जितना शीघ्र हो सके ईरान चले आओ।

इधर तो नौजर ने साम को संकट का ज्ञान करा कर बुलाया। उधर राज्य के समस्त पदाधिकारी साम के निकट पहुँचे और नौजर के अन्याय तथा अत्याचारों का वर्णन करके कहने लगे कि अब हम लोगों में इतनी शक्ति नहीं है कि उस दुष्ट के दुर्व्यवहारों को सहन कर सकें, अस्तु आप स्वयं चलिए और उसे सिंहासन-च्युत कर के राजमुकुट धारण कीजिए।

इस पर साम ने कहा कि कयानी वंश के शासक को उतार कर मैं स्वयं राजमुकुट धारण करूँ यह मुझसे नहीं हो सकता। यदि मनोछ्र की कोई पुत्री भी सिंहासन पर होती तो हम लोग उसकी भी अधीनता स्वीकार करने से मुख न मोड़ते। अब तुम लोग घबराओ नहीं। मैं चल कर उसे कुमार्ग से हटा कर सुमार्ग पर लाऊँगा जिस से सारी प्रजा का भला होगा।

इतना कह कर साम नौजर के पास आया और उसका अभिवादन कर के उसे विविध प्रकार से समझाया। फलतः अपने कुमार्ग का परित्याग कर वह साम के कथनानुसार चलने लगा। नौजर की इस नवीन कार्य प्रणाली से समस्त प्रजा उसकी प्रशंसा करने लगी और प्रत्येक समय उस पर प्राण निछावर करने के हेतु उद्यत रहने लगी।

शाहनामा

द्वितीय भाग

अफ़रासियाब का नौज़र से युद्ध तथा विजय

इन्हीं दिनों पशंग नाम का एक योद्धा तूरान का शासक था। वह व्यक्ति तूर वंशज था। इसके एक पुत्र था जिसका नाम अफ़रासियाब था। अफ़रासियाब ऐसा पराक्रमी एवं साहसी वीर था कि समस्त भूमण्डल का कोई भी योद्धा उससे युद्ध करने का साहस न कर सकता था।

एक दिन पशंग ने उसे अपने पास बुलाया और उसे सलम तथा तूर के वध का वृत्तान्त सुनाया, फिर बोला—"हे पुत्र! मेरी इच्छा है कि तुम नौज़र का वध कर सलम तथा तूर का बदला लो।" यह सुनते ही अफ़रासियाब अन्न-जल तथा भोग-विलास सब का परित्याग कर नौज़र से युद्ध की तैयारी में संलग्न रहने लगा। पशंग ने भी तूरान के समस्त वीरों को एकत्र कर एक बहुत बड़ी सेना सुसज्जित की, और अफ़रासियाब की आज्ञा पालन करने का उसे आदेश किया।

समय पाकर अफ़रासियाब ने पशंग से कहा—"हे पिता! मुझे नौज़र का तो कोई भय नहीं है, पर उसके कारन, ज़ाल तथा साम आदि योद्धाओं की ओर से चिन्तित अवश्य हूँ, इस कारण मेरी इच्छा तो यह है कि अभी युद्ध स्थगित रक्खा जाय।" पशंग ने यह सुन कर उत्तर दिया, "हे पुत्र! युद्ध के हेतु इससे अधिक अच्छा अवसर फिर न मिलेगा, अस्तु मेरे मतानुसार तुम ईरान पर आक्रमण करने में नाम मात्र को भी आगा-पीछा न करो।" इसी समय किसी ने आकर सूचित किया कि महाराज नौज़र का, नामी योद्धा साम परलोकगामी हो गया। साम की मृत्यु की सूचना पाकर पशंग तथा उसके पुत्र के हर्ष की सीमा न रही, अफ़रासियाब ने सेना को प्रस्थान करने की आज्ञा तुरन्त दी।

सेना पड़ाव पर पड़ाव मारती ईरान की सीमा के निकट पहुँच गई। इधर नौज़र भी अपने वीर सैनिकों को ले रण-भूमि में आ डटा। जब दोनों सेनाएँ एक दूसरे के सम्मुख आईं तो तूरान की सेना का ताज़िआन नामक एक वीर रण-भूमि में आगे बढ़ कर ललकारता हुआ बोला "ईरानियों में से जिसकी इच्छा हो वह मेरे साथ युद्ध करने के लिये आगे आये।" यह सुन कर ईरानी सेनापति कारन ने अपने लघु भ्राता क़बाद को ताज़िआन से युद्ध करने की आज्ञा दी। क़बाद भाई का आदेश पाकर आगे बढ़ा। दोनों योद्धाओं में भीषण युद्ध हुआ और अंत में क़बाद का अंत ताज़ियान के हाथों हुआ।

क़बाद के मरते ही कारन अपना घोड़ा कुदा कर ताज़िआन के सम्मुख आया, दोनों वीर भालों द्वारा एक दूसरे पर आक्रमण करने लगे। दोनों ही एक दूसरे को घायल कर पराजित करना चाहते थे, पर सफल-मनोरथ न होते थे। भाले की नोकों के व्यर्थ होते ही दोनों ने असि का प्रयोग आरम्भ कर दिया। इस युद्ध में ताज़िआन पराजित होने ही को था कि अफ़्रासियाब अपनी सेना सहित अनायास ही चढ़ दौड़ा। फिर क्या था, दोनों ओर के सैनिक प्राणों का मोह त्याग कर भूखे बाघ की भाँति एक दूसरे पर टूट पड़े।

इस समय शस्त्रों की झंकार, वीरों की हुंकार तथा घायलों और कायरों के चीत्कार के अतिरिक्त और कुछ न सुनाई पड़ता था। थोड़ी ही देर में सारी संग्राम भूमि सैनिकों तथा अश्वादि पशुओं की लोथों से परिपूर्ण हो गई। यही प्रतीत होता था मानो रक्त-सरिता में नौकाएँ बही चली जा रही हैं। कौवे वीर-गति-प्राप्त सैनिकों के शवों पर बैठ कर उनके माँस द्वारा अपनी क्षुधा मिटाते हुए अपार हर्ष प्रकट कर रहे थे।

जब मानव के इस भीषण रक्त-व्यापार को भगवान् सूर्य न देख सके तो पश्चिमी पर्वतों की ओट में जाकर अपना मुख छिपाने लगे। जगत् के अंधकार-वेष्टित होते ही वीर सैनिकगण अपने-अपने शिविरों की

ओर फिरे और दूसरे दिन युद्ध में प्रवृत्त होने के हेतु उस दिन की श्रांति एवं क्लांति का शमन करने लगे।

दूसरे दिन सूर्योदय होते ही रक्त-पिपासु सैनिक फिर रण-भूमि में आ डटे, और मार-काट का अपना कार्य आरम्भ कर दिया। दोनों ओर के अनेक वीरों के शिर तथा धड़ पलक भर में भू-लुंठित दिखाई पड़ने लगे। इस समय नौज़र ने देखा कि तूरानी सेना द्वारा ईरानियों का बुरी तरह से ध्वंस हो रहा है, और पराजय की आशंका बढ़ चली है। तो उसने अफ़रासियाब को ललकार कर कहा कि इस प्रकार दीन सैनिकों के रक्तपात से क्या लाभ। हम तुम दोनों आपस में क्यों न निपट लें। ईश्वर जिस को विजयी करे वही राज का भागी हो।

अफ़रासियाब तो यह चाहता ही था; झट आगे बढ़ आया और फिर दोनों में शस्त्र-युद्ध होने लगा। इस समय शस्त्रों के परस्पर टकराने से चिनगारियाँ निकल-निकल कर वीर-हृदयों को चमत्कृत करती तथा कायरों में भय-संचार कर देती थीं। अपने आप ही कायर भयभीत हो पीछे हट जाते थे। इस युद्ध में नौज़र का राजमुकुट उसके शिर से अचानक भूमि पर आ पड़ा। यह अशकुन देख उसने उसी समय युद्ध को बन्द कर दिया और अपने शिविर को लौट पड़ा।

रण-क्षेत्र से लौट कर नौज़र जब अपने शिविर में पहुँचा तो उस का एक सेवक राजमुकुट लेकर उपस्थित हुआ। राजमुकुट को देखते ही उसे अपने पिता के वचनों का ध्यान आया, कि तुम्हें ईरान के सैनिकों से क्षति उठानी पड़ेगी। यह ध्यान आते ही उसने राज सभा के सभासदों को बुला भेजा और कहा, 'अब मुझे प्रत्येक घड़ी पराजय की आशंका है। मेरा मन बार-बार यही कहता है कि दुष्ट अफ़रासियाब, मुझे बन्दी कर ले जाएगा। अतः मेरी इच्छा है कि युद्ध-स्थल में प्राण-विसर्जन कर अपने पूर्वजों के यश को बढ़ाऊँ।'

यह सुन कर सभासदों ने कहा, "महाराज! प्रथम तो आप राज-कुमारों को फ़ारस भेजने का उपाय कीजिये, फिर सेना एकत्रित कर

रण-भूमि में कूद पड़िए।" सभासदों की बात सुन कर नौज़र ने अपने पुत्रों तोस तथा गस्तहम को बुला कर प्यार किया और कुछ विश्वास-पात्र व्यक्तियों के साथ उन्हें पारस की ओर विदा कर दिया। तत्पश्चात् अफ़रासियाब को कहला भेजा कि सेना बहुत थक गई है, अतः युद्ध तीन दिन तक स्थगित रक्खा जाय। अफ़रासियाब की स्वीकृति पाकर दोनों ओर की सेनाओं ने तीन दिन तक विश्राम किया।

चौथे दिन प्रातःकाल नौज़र फिर संग्राम-भूमि में आया, और युद्ध करने लगा। इस समय इतना भीषण युद्ध हुआ कि जिसका वर्णन करना कठिन है। युद्ध में शापूर शत्रुओं के हाथों मारा गया और कारन युद्धि-भूमि से पीठ दिखा कर भागा। अपनी पराजय निश्चय जान नौज़र धीरे-धीरे पीछे की ओर हटता हुआ गढ़ के भीतर चला गया। अफ़रासियाब ने गढ़ पर घेरा डाल दिया।

इसी बीच अफ़रासियाब के गुप्तचरों ने सूचना दी कि नौज़र ने अपने पुत्रों को फ़ारस की ओर भेज दिया है। यह विदित होते ही उसने अपनी एक छोटी सी सेना उन राजकुमारों को बन्दी करने के हेतु भेजी। कारन ने उस सेना को बीच ही डट कर रोक लिया। युद्ध हुआ और तूरानी सेना कारन द्वारा मार भगाई गई। जब पराजित-सेना अफ़रासियाब के निकट आई तो उसने एक और सेना उसकी सहायतार्थ रवाना की।

इधर नौज़र ने जो यह देखा कि अफ़रासियाब की आधी सेना पारस की ओर गई, तो वह गढ़ से निकल कर भागने लगा। पर दैवी-कोप से वह अपनी रक्षा न कर सका; उसके भागने की सूचना अफ़रासियाब को मिल गई। वह अपनी सेना लेकर तुरन्त उसके पीछे लग गया। जब नौज़र ने देखा कि भाग निकलना असम्भव है तो वह उसी स्थान पर डट गया और फिर संग्राम छिड़ गया। अफ़रासियाब की इतनी भारी सेना के सम्मुख उसके मुट्ठी भर सैनिक न ठहर सके और बारह सौ वीरों सहित नौज़र बन्दी कर दिया गया।

नौज़र तथा उसके वीरों को बन्दी करके जब अफ़रासियाब अपने शिविर में फिरा तो उसे सूचना मिली कि कारन ने उसकी सेना को पराजित कर दिया है। और राजकुमार तोस तथा गस्तहम निर्विघ्न पारस पहुँच रहे हैं। इस सूचना से उसे बड़ा दुःख हुआ, परन्तु विवश था। विवश हो ईरान के राज्य-सिंहासन पर ही उसे संतोष करना पड़ा।

सीस्तान-विजय

ईरान पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् अफ़रासियाब ने जाबुल को पराजित करने का विचार किया, अतः उसने खिजिरखाँ तथा समासास को सेना का भार सौंप कर तीस सहस्र सैनिकों को सीस्तान की ओर विदा किया। जब ज़ाल को यह सूचना मिली कि दुष्ट अफ़रासियाब की सेना जाबुल को पराजित करने के लिये आरही है तो उसी समय उसने अपने वीरों को एक होने की आज्ञा दी।

इसी समय काबुल-नरेश मेहराब तथा आस-पास के समस्त छोटे-बड़े शासक अपनी-अपनी सेना लेकर सीस्तान में पहुँच गये। ज़ाल शत्रुओं को दमन करने के उद्देश्य से सीस्तान से चला। जब दोनों सेनायें आमने-सामने हुईं तो खिज़िरखाँ युद्ध के निमित्त आगे बढ़ा और आते ही उसने ज़ाल के शिर पर एक ऐसा गदा प्रहार किया कि उसका शिरस्त्राण चूर चूर हो गया परन्तु उसे कोई चोट न आई। ज़ाल बहुत ही क्रोधाभिभूत हो उठा। उसने खिज़िरखाँ की गदा पकड़ ली और अपनी गदा के एक ही प्रहार से उसे यमपुरी का मार्ग दिखा दिया।

खिज़िरखाँ के मरते ही समासास आगे आया, परन्तु ज़ाल से युद्ध करने की शक्ति न देख कर वह रण भूमि छोड़ कर भागा। उसके भागते ही समस्त तूरानी सेना के पाँव उखड़ गये। इस भगदड़ में ज़ाल तथा उसके सैनिकों ने सहस्रों तूरानियों को मार गिराया।

समासास द्वारा जब अफ़रासियाब को अपनी पराजय की सूचना मिली, तो उसने क्रोधवश नौज़र को मार डाला। फिर एक बहुत

बड़ी सेना ले कर राजकुमारी को बन्दी करने के हेतु पारस की ओर चल पड़ा।

इधर जब पारस में यह समाचार पहुँचा तो तोस तथा गस्तहुम पारस छोड़ कर सीस्तान चले गये। जाल को जब राजकुमारों के आगमन की सूचना मिली तो वह स्वयं उनके स्वागत के हेतु आया और सम्मान-पूर्वक ले जा कर अपने राज-प्रासाद में उन्हें बड़े सुख के साथ रक्खा। इसी बीच अफ़्रासियाब से पीड़ित राज कुमारों के स्वामि-भक्त सेवक भी सीस्तान आने लगे। ज़ाल ने प्रत्येक व्यक्ति को बड़े आदर-सत्कार से रक्खा और उन्हें धन-धान्य तथा शस्त्रास्त्र दे कर बहुत सम्मानित किया। लोगों के साथ मिल कर उसने एक भारी सेना तैयार की।

अब ज़ाल को यह चिन्ता हुई कि तोस तथा गस्तहुम तो अभी अबोध बालक हैं, फिर राजमुकुट किस को पहनाया जाय। इतने में लोगों ने कहा कि अफ़्रासियाब का एक छोटा भाई ईज़रस है जो कि श्य का शासक है। यदि वह हम लोगों के निमंत्रण को स्वीकार करके यहाँ आवे तो फिर उसे राजमुकुट पहना कर और उसी की अधीनता में चल कर अफ़्रासियाब से युद्ध करना चाहिये तथा उसे ईरान से निकाल कर ईज़रस को सिंहासन देना चाहिए।

सभासदों के इस विचार को सुनकर ज़ाल ने ईज़रस को इसी आशय का एक पत्र लिखा। ईज़रस ईरान साम्राज्य पर अधिकार प्राप्त करने की बात पढ़ कर तुरन्त अपनी सेना के साथ सीस्तान की ओर चल दिया। जब अफ़्रासियाब को इस षड्यन्त्र का ज्ञान हुआ तो वह क्रोधित होकर ईज़रस को बन्दी करने के हेतु चल पड़ा और मार्ग ही में उसे जा घेरा। जब ईज़रस ने देखा कि भाई की सेना पर विजय पाना असम्भव है तो वह अकेला ही उसके निकट पहुँचा। एज़ोरस के आते ही अफ़्रासियाब ने कहा—"तुझे श्य के देश पर सन्तोष न हुआ, जो ईरान प्राप्त करने के उद्देश्य से सीस्तान जा रहा है।" इस पर एज़ोरस ने कहा—"भाई! भला मुझ में इतनी शक्ति कहाँ जो तुम्हारा विरोध कर सकूँ।" इतना सब कहने

पर भी अफ़रासियाब ने एक न मानी और अपने हाथों उस का बध कर डाला।

जब ज़ाल को नौज़र की हत्या का समाचार मिला तो मारे क्रोध के उसका रक्त खौलने लगा और प्रतिहिंसा की अग्नि उसके हृदय में भड़क उठी। उसने सभी लोगों को एकत्रित कर के कहा—"दुष्ट अफ़रासियाब ने नौज़र की भांति एज़ोरस की भी हत्या कर डाली। अब तुम लोग यह बतलाओ कि कहीं कोई ऐसा व्यक्ति है, जिसे हम राज-मुकुट पहना कर इस अन्याचारी को उसके दुष्कृत्यों का फल चखायें।" एक सभासद् ने यह सुनकर कहा—"महाराज, सलम के बध के पश्चात् आप उसका पुत्र तहमास्प प्राण-भय से भाग कर जा छिपा है। उसके एक वीर तथा धीर पुत्र भी है जिस का नाम ज़ऊ है। यदि उचित समझें तो उसे आमंत्रित कर ईरान का राज मुकुट पहनावें। इस बात को जान कर ज़ाल ने कारन को उसे सम्मान-पूर्वक लाने के हेतु भेजा।

तहमास्प के पुत्र ज़ऊ का आगमन तथा उसका राज्याभिषेक

कारन सीस्तान से विदा होकर राजकुमार के पास गया और उसे ज़ाल का समाचार सुना कर कहा—'आप चलिये और ईरान का राज्य स्वीकार कीजिए।" कारन की बात सुन कर वह सीस्तान आया और यहाँ हर्ष-पूर्वक उस का राज्य-तिलक किया गया तदनन्तर उन्होंने पारस पर चढ़ाई की और उसे जीत कर ईरान पर आक्रमणकारी हुए। यहाँ अफ़रासियाब अपने को निर्बल पा कर तूरान की ओर भाग खड़ा हुआ और ईरान का सिंहासन ज़ऊ के अधीन हुआ।

अफ़रासियाब जब ईरान से पराजित हो कर अपने पिता के पास पहुँचा तो पशंग ने कहा "रे कायर! तूने अपने छोटे भाई को हत्या क्यों

की ? क्या तुझे ईश्वर का भय नहीं है ? तूने भाई का बध कर के जगत् में अपने को बदनाम किया । मैं तेरा मुँह भी नहीं देखना चाहता—दूर हो यहाँ से ।" पिता द्वारा इस प्रकार अपमानित होने पर अफ़रासियाब को बड़ा दुःख हुआ और वह दिन-रात इसी चिन्ता में रहने लगा कि अब क्या करना चाहिए ।

इधर ईरान पर विजय पा कर जब ज़ू सिंहासन पर बैठा तो बड़े न्याय-पूर्वक राज्य करने लगा, जिससे ईरान की सारी प्रजा उसकी प्रशंसा करने लगी । पर थोड़े ही दिन उसने राज्य कर पाया था कि यमपुरी से उसको निमंत्रण आ गया और वह वहाँ चला गया ।

गर्शास्प का सिंहासनारूढ़ होना तथा अफ़रासियाब का ईरान-आक्रमण

ज़ू की मृत्यु के पश्चात् गर्शास्प उस का उत्तराधिकारी हुआ । वह सदैव ज़ाल के आदेश पर चलता था । जिससे उसकी समस्त प्रजा उससे प्रसन्न थी । इधर जब पशंग को यह ज्ञात हुआ कि ईरान के राज्य का शासक एक नव-युवक है, तो उसने मन में विचार किया कि इस समय ईरान का हस्तगत करना नितान्त साधारण काम है । अतः अफरासियाब के समस्त अपराधों को क्षमा करके वह बोला कि इस समय ईरान का शासक एक नव-युवक है और ज़ाल भी वृद्ध हो गया है अतः तुम सेना लेकर जाओ और गर्शास्प को पराजित कर ईरान पर अपना अधिकार करो । पिता की बात सुनकर अफ़रासियाब ने सेना सुसज्जित कर ईरान की ओर प्रस्थान किया ।

इधर जब ज़ाल को इसकी सूचना मिली तो उसने लोगों से कहा "मैं तो अब वृद्ध हुआ और मुझमें अफ़रासियाब से युद्ध करने की शक्ति अब नहीं रह गई है । इस कारण मेरा विचार है कि मैं रुस्तम को इस युद्ध में भेजूँ । फिर यह भी ध्यान में आता है कि अभी रुस्तम को रण-भूमि के हथकण्डों का अनुभव नहीं है; इस कारण मैं कहीं

चिन्ता में हूँ कि क्या करूँ।" इस पर उन लोगों ने कहा "आप रुस्तम को अवश्य भेजिए। ईश्वर ने चाहा तो वह उस दुष्ट अफ़रासियाब को अवश्य पराजित करेगा।"

लोगों का यह विचार सुन कर ज़ाल घर गया और उसने रुस्तम से कहा "पुत्र आज मैं एक गम्भीर चिन्ता में संलग्न हूँ। मेरी बुद्धि नहीं काम करती, क्या करूँ कुछ समझ में नहीं आता।" पिता को इस प्रकार चिन्तित देख कर रुस्तम ने कहा "कुछ बताइये तो सही क्या बात है, मैं अपने प्राण दे कर भी उस चिन्ता को दूर करने की कोशिश करूँगा।"

ज़ाल ने कहा—"मुझे यह सूचना मिली है कि अफ़रासियाब ने फिर ईरान पर चढ़ाई की है, अतः गशास्प की सहायता करना मेरा धर्म है। परन्तु मैं यह विचार करता हूँ कि किसको उसके साथ युद्ध करने के हेतु भेजूं। मैं तो अब वृद्ध हुआ, अतः अफरासियाब के साथ युद्ध करने योग्य बल अब मुझ में नहीं है। रहे तुम सो तुम को अभी युद्ध का अनुभव नहीं। मेरे विचार से कोई तीसरा ऐसा योद्धा नहीं है जिसे मैं उसके सामुख्य के हेतु रणक्षेत्र में भेजूँ।"

ज़ाल की बात सुन कर रुस्तम ने कहा—"पिता जी! इसमें चिन्ता का क्या कारण है। आप मुझे एक घोड़ा तथा एक गदा दीजिये और देखिये कि मैं क्या करता हूँ। यदि ईश्वर चाहेगा तो उस दुष्ट को पराजित करके फिर आपके चरण छूऊँगा।"

पुत्र का साहस देख कर ज़ाल उल्लास से भर गया। और उसे साम की गदा देकर बोला—"पुत्र! अब तुम अश्वशाला में जाकर एक अश्व अपनी इच्छानुसार चुन कर ले लो।" रुस्तम अश्वशाला में पहुँचा। वहाँ जाकर उसने पशुओं की परीक्षा लेनी आरम्भ की। वह जिस घोड़े अथवा घोड़ी की पीठ पर हाथ धर कर अपने बल का प्रयोग करता था वही पृथ्वी पर बैठ जाता। इतने में उसकी दृष्टि एक बच्चे पर पड़ी जिस-

का रंग भी सुन्दर था और साथ ही अधिक बलिष्ट भी दीख पड़ता था। अतएव उसने उसे बांधने को अपना पाश उसकी ओर फेंकना चाहा।

यह देख कर अश्वशाला के संरक्षक ने रुस्तम से कहा—"राज कुमार! आप इस बछेड़े के बन्दी करने की चेष्टा न कीजिये। इसकी माता बहुत क्रोधित प्रकृति की है। उसने इसके कई बन्दी करने वालों को घायल किया है। परन्तु रुस्तम ने उसकी बातों पर ध्यान न देकर अपने पाश द्वारा उस बछेड़े को जिसका नाम रख़्श था बन्दी कर ही लिया। पुत्र को बन्दी होते देख उसकी माँ हिनहिनाती हुई रुस्तम की ओर आई और चाहती थी कि अपने दन्तों द्वारा उसके शिर को चबा डालूँ कि इतने में रुस्तम ने उसे ऐसे तीव्र स्वर में डाँटा कि वह भय-भीत हो कर भाग गई।

अब रुस्तम ने उस बछेड़े को अपनी ओर खींचना आरम्भ किया, पर खिंचना तो दूर वह स्वयं रुस्तम ही को थोड़ी दूर तक खींच ले गया। रुस्तम रख़्श के ऐसे बल को देख कर अतीव प्रसन्न हुआ फिर अपनी पूर्ण शक्ति का प्रयोग कर उसे खींच लाया और उस पर काठी रख कर सवार हो लिया।

ज़ाल यह कौतुक देख कर बड़ा प्रसन्न हुआ, और अपने पुत्र की इस अश्व-विजय पर बहुत सा धन उसने उसके ऊपर निछावर कर दिया, तदन्तर बहुत सा कोष तथा सैनिक दे कर उसने रुस्तम को अफ़रासियाब से युद्ध करने के निमित्त विदा किया। रुस्तम के जाने के पश्चात् उसका हृदय पुत्र-स्नेह के कारण भर आया और स्वयं भी घोड़े को साथ ले मार्ग ही में उससे जा मिला।

जब यह सूचना अफ़रासियाब को मिली तो वह कहने लगा कि भला रुस्तम जिसके कि दूध के दांत भी अभी तक नहीं गिरे हैं मुझ से युद्ध करने का दुस्साहस करना चाहता है। अपने शासक की दर्पपूर्ण वाणी को सुन कर समस्त तूरानी सेना उल्लसित हो उठी और उसी हर्ष में पड़ाव पर पड़ाव मारती हुई ईरान साम्राज्य की ओर बढ़ती गई।

इसी बीच ज़ाल रुस्तम को लेकर ईरान जा पहुँचा। वहाँ पहुँच कर उसने विचार किया कि ईरान के राज-सिंहासन पर गर्शास्प के स्थान पर किसी प्रभावशाली राजा की अपेक्षा है, अतः उसने अपने सैनिकों तथा सभासदों से कहा कि यदि तुम लोगों को किसी अन्य राजकुमार का ध्यान हो तो बताओ, जिससे मैं उसे ईरान का शासक बनाऊँ क्योंकि गर्शास्प एक तो अभी नवयुवक है दूसरे वह पशंग तथा अफ़रासियाब की भाँति शक्तिशाली तथा अनुभवी भी नहीं है।

ज़ाल की बात सुन कर उन लोगों ने ऐसे राजकुमार की खोज आरम्भ कर दी। अन्त में एक व्यक्ति ने उपस्थित होकर कहा कि अलबुर्ज़ पर्वत पर फरीदूँ के वंश का एक कैकुबाद नामक राजकुमार रहता है। वह वीर, धीर, बुद्धिमान एवं शक्तिशाली पुरुष है। उस व्यक्ति द्वारा कैक़ुबाद का सूचना पाकर ज़ाल ने उसे लाने के हेतु रुस्तम को भेज दिया।

कैक़ुबाद को निमन्त्रण

पिता से बिदा होकर रुस्तम अलबुर्ज़ पर्वत की ओर चल दिया। जब उसके निकट पहुँचा तो देखता क्या है कि एक रूपवान व्यक्ति पर्वत से उतर कर उसकी तराई में बैठा है। उधर जब कैक़ुबाद की दृष्टि उठी तो उसने देखा कि एक पर्वताकार घोड़ा उधर ही चला जा रहा है। कैक़ुबाद को उसके शरीर, उसके घोड़े तथा उसकी गदा को देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने रुस्तम को पुकार कर कहा—'हे वीर! तुम्हारे इतना द्रुत गति से जाने का क्या कारण है। मेरे पास आकर थोड़ा विश्राम करो, सुरा सेवन कर अपने श्रम का निवारण करो।"

कैक़ुबाद की बात सुन कर रुस्तम ने कहा—"हे युवक! मुझे मदिरा की आवश्यकता नहीं है। मैं कैक़ुबाद नाम के एक राजकुमार की खोज में हूँ, यदि तुम को उसके विषय में कुछ ज्ञात हो तो मुझे बतला दो।"

कै़कुबाद ने उत्तर दिया—"हाँ, मैं उस व्यक्ति को जानता हूँ। तुम मेरे पास आओ तो रुहो। मैं अपने एक व्यक्ति को तुम्हारे साथ कर दूँगा जो तुम्हें उनके घर तक पहुँचा आवेगा।"

उस अपरिचित व्यक्ति से आशा लगा कर रुस्तम उसके निकट गया तो कै़कुबाद ने पूछा "इस व्यक्ति का पता तुम्हें किसने बतलाया है।" रुस्तम ने कहा "ईरान के प्रसिद्ध वीर जाल ने ही मुझे यहाँ का पता बता कर कहा है कि जब तुम से राजकुमार कैकुबाद की भेंट हो तो तुम उन से कहना कि ईरान-राज्य के समस्त योद्धाओं की यह इच्छा है कि तुम वहाँ चल कर राज मुकुट को धारण कर ईरान का शासन करो।"

रुस्तम की बात सुनकर कै़कुबाद ने कहा "मेरा ही नाम कै़कुबाद है।" इस पर रुस्तम ने उसको झुक कर अभिवादन किया। राजकुमार ने रुस्तम को प्रेम से निकट बैठाया और मदिरा पान करा कर कहा "कल मैंने स्वप्न में देखा था कि दो बाज़ आये और मुझे सिंहासन पर बिठा कर चले गये। प्रातः काल जब मैं सो कर उठा तो मुझे शुभ-स्वप्न का ध्यान हो आया। अतः मैं सवेरे से पर्वत पर से उतर कर यहाँ बैठा हूँ। भाग्यवश इस समय तुम्हारे दर्शन हो गये। अब मैं तुम्हारे साथ चलने को तैयार हूँ।"

उस दिन तो रुस्तम ने वहीं विश्राम किया पर दूसरे ही दिन वह राजकुमार को साथ ले कर चल दिया। जब ये लोग अपनी यात्रा को समाप्त कर ईरान-राज्य की सीमा पर पहुँचे तो गर्शास्प के सीमा-संरक्षक कलवन ने उनको रोका; जिस पर रुस्तम कलवन से युद्ध के लिये आगे बढ़ा। कलवन ने अपने भाले से रुस्तम पर आक्रमण किया, परन्तु रुस्तम ने उसके भाले को पकड़ कर अपना भाला उसकी छाती में घुसेड़ दिया जिससे वह तड़प-तड़प कर चल बसा। कलवन के मरते ही सारी सेना भाग खड़ी हुई।

सेना के भागते ही राजकुमार कैकुबाद तथा रुस्तम फिर अपने मार्ग पर अग्रसर हुए और ज़ाल के पास जा पहुँचे। ज़ाल ने सात दिन पर्यन्त कैकुबाद को छिपा रक्खा और आठवें दिन उन्हें गद्दी पर बैठा कर बड़े समारोह के साथ उसका राज्याभिषेक किया।

अफ़रासियाब की पराजय

कैकुबाद के सिंहासनारूढ़ होने के पश्चात् ज़ाल ने अफ़रासियाब की ओर मुख किया। जब दोनों सेनाएँ एक दूसरे के सम्मुख आईं, तो ईरानी सेना में से कारन आगे आया। कारन को देख कर समासास भी अपनी सेना से निकल कर रणक्षेत्र में आ उपस्थित हुआ। कारन ने युद्ध छिड़ते ही समासास को परलोक की आज्ञा करा दी।

समासास की मृत्यु के पश्चात् रुस्तम ने ज़ाल से कहा, "हे पिता! मेरी इच्छा है कि मैं रण-क्षेत्र में जा कर अफ़रासियाब को चुनौती दूँ।" पुत्र की बात सुन कर ज़ाल ने कहा, "अभी तुम्हें युद्ध-क्षेत्र के दाँव पेंचों का अनुभव नहीं है। दूसरे यह कि अफ़रासियाब तुमसे अधिक बली तथा शक्तिशाली है, अतः तुम्हारा अफ़रासियाब के प्रति-द्वन्दी के रूप में जाना संगत नहीं जान पड़ता।" यह सुन कर रुस्तम ने पिता को आश्वासन देते हुये कहा, "पिता जी! आप किसी भी प्रकार चिन्ता न कीजिए। यदि ईश्वर की कृपा होगी तो मैं उसे घोड़े से नीचे गिरा दूँगा।"

इतना कह कर रुस्तम रख़्श को कुदाता हुआ रण-क्षेत्र में आगे बढ़ आया और ललकार कर बोला, "अरे अफ़रासियाब! यदि तू वीर है तो मेरे सम्मुख आ।" उस का वचन सुन कर अफ़रासियाब ने अपने सैनिकों से पूछा, "यह कौन योद्धा है जो मुझे चुनौती दे रहा है?" इस पर लोगों ने उत्तर दिया, "महाराज! यही ज़ाल का पुत्र रुस्तम है और उसके हाथ में साम की गदा है।"

यह सुनते ही तूरान का शासक भी अपना घोड़ा कुदा कर रुस्तम के सामने आया, और बोला, "अरे दुधमुँहे बालक! क्या तू अपने जीवन से ऊब गया है, या तेरा काल तेरे शिर पर नाच रहा है; जो मेरे

साथ युद्ध करने की इच्छा रखता है। यदि मैं चाहूँ तो तुझे अपने पंजे के बल से ही बन्दी कर सकता हूँ।" अफ़रासियाब की बात सुन कर रुस्तम ने अपनी गदा रख दी और पंजा मिलाने के हेतु उसने अपनी भुजा पसार दी। अब पशंग-पुत्र ने अपना बल लगाना आरम्भ कर दिया, यहाँ तक कि उसने अपनी सारी शक्ति लगा दी पर रुस्तम के पंजे को न मरोड़ सका। तब रुस्तम ने उसके कमरबन्द को पकड़ कर उसे घोड़े की पीठ पर से ऊँचा उठा लिया और चाहा कि उसे योंही उठा कर कैकुबाद के पास ले जाय, पर दुर्भाग्यवश अफ़रासियाब का कमर-बन्द टूट गया। ठीक इसी समय तूरान की सेना ने रुस्तम के ऊपर आक्रमण कर दिया जिससे अफ़रासियाब को भाग निकलने का अवसर मिल गया।

इधर तूरानी सेना को आगे बढ़ते देख ईरानी सेना भी लपक कर उससे भिड़ गई और मार-काट आरम्भ हो गई। रुस्तम ने अकेले एक सहस्र से अधिक तूरानियों को मार गिराया। ईरानियों की मार से तूरा-नियों की सेना में भगदड़ मच गई, इस चपेट में भी बहुत से तूरानी खेत रहे। जो शेष बचे वे भाग कर पशंग के पास जा पहुँचे।

अफ़रासियाब भी पराजित हो कर सीधा पिता के पास पहुँचा। वहाँ जाकर उसने कहा, "मैंने आपसे पहिले ही कहा था कि आप ईरान पर आक्रमण करने का विचार ध्यान से निकाल दीजिए, पर आपने न माना, और सेना सहित मेरी यह दुर्दशा कराई। ईरानी सेना में साम वंशोत्पन्न रुस्तम नाम का एक वीर है जिससे युद्ध करना मानो अपने काल को निमंत्रण देना है। अपने बाहु-बल से मुझे घोड़े की पीठ पर से उठा कर कैकुबाद की ओर ले चला, उसी समय भाग्यवश मेरा कमर-बन्द टूट गया जिससे मैं बच गया अन्यथा आज आप को मेरे नाम पर शोक मनाना पड़ता।" अपने पुत्र की बात सुन कर पशंग ने तुरन्त सन्धि के हेतु एक प्रार्थना पत्र लिख कर दूतों द्वारा ईरान नरेश कैकुबाद के पास भेज दिया।

संधि के लिये प्रयत्न

पशंग की आज्ञा से बीशा संधि पत्र लेकर ईरान-नरेश के निकट पहुँचा तो उन्होंने उस पत्र को खोल कर पढ़ा। उसका आशय यह था कि महाराज तूर ने ईरज का बध किया, जिस का बदला मनोछर ने सलम तथा तूर के बध से चुकाया। तदनन्तर अफरासियाब ने ईरान पर आक्रमण करके नौज़र का बध किया और फिर तहमास्प ने तूरानी सेना का सर्वनाश करके अपनी छाती ठंडी की। इन युद्धों में हम दोनों के न जाने कितने वीर सैनिक रहे हैं, और न जाने कितनी हानि हम दोनों ही को उठानी पड़ी है। अतः अब मेरी यह इच्छा है कि इन दोनों राज्यों के बीच सन्धि हो जाय; क्योंकि हम दोनों में कोई अन्तर नहीं है। हम दोनों के शरीरों में एक ही पूर्वज का रक्त है। मेरी इच्छा है कि फरीदूँ के विभाजन के अनुसार जीहूँ नदी के इस पार तूरानी राज्य करें और उस पार ईरान के शासक का शासन रहे।

इस पत्र को पढ़ कर ईरान-नरेश ने उत्तर दिया, "इन युद्धों में हम लोग कभी भी अग्रणी नहीं हुए, जो कुछ हुआ है वह तुम्हारी ही ओर से हुआ है; अतएव हम को तुम्हारे वचन पर तनक भी विश्वास नहीं होता। यदि तुम फिर से कोई नवीन प्रस्ताव कर उसके अनुसार चलने को कहो तो हम सन्धि करने को तैयार हैं अन्यथा नहीं" जब कैकुबाद को यह ज्ञात हुआ कि वह नवीन प्रस्ताव पर भी सहमत होने को उद्यत है तो उसने इस पर रुस्तम की अनुमति माँगी। रुस्तम ने कहा, "मैं सन्धि के विरुद्ध हूँ। जब मेरी गदा का आघात उसके पुत्र के शिर पर लगा तब कहीं उसे भान हुआ कि ईरान हस्तगत करना अब असम्भव है, और तब कहीं उसने इस सन्धि की चर्चा चलाई।"

रुस्तम के विचार को जान कर कैकुबाद ने ज़ाल तथा मेहराब से इस विषय पर परामर्श किया। ज़ाल ने कहा—"महाराज, सन्धि का अवसर रहते रक्तपात की कोई आवश्यकता नहीं, क्योंकि शत्रु यदि अमूल

देने से मर जाय तो उसे विष देने का क्या प्रयोजन।" ज़ाल तथा मेहराब के मतानुसार कैकुबाद ने तूरान के शासक से सन्धि कर ली।

इसके पश्चात् उन्होंने ज़ाल तथा रुस्तम को बहुत सा धन-द्रव्य देकर सम्मान-पूर्वक विदा किया। तदन्तर उसने अपनी सेना तथा विख्यात योद्धाओं द्वारा बहुत से देश विजय किये और पारस जाकर इस न्यायशीलता के साथ राज्य-सञ्चालन किया कि वहाँ की प्रजा उसकी प्रशंसा करने लगी, और फरीदूँ के शासन-काल की स्मृति नाम मात्र को भी शेष न रही।

एक दिन उसे ऐसा प्रतीत हुआ कि अब जीवन का अन्त समय निकट है; अतः उसने अपने चारों पुत्रों को बुला कर कहा, "हे पुत्रो! कैकाऊस तुम लोगों में ज्येष्ठ है, अतएव मेरी आन्तरिक अभिलाषा है कि मैं उसे राज्य का भार सौंप दूँ। यदि तुम लोग अपने बड़े भाई की आधीनता स्वीकार करने को उद्यत हो तो मैं उसका राज्यभिषेक करूँ।" जब कैकुबाद को अपने पुत्रों की अनुमति मिल गई तो उसने कैकाऊस का राज्याभिषेक बड़े समारोह के साथ किया। राजगद्दी हो जाने के कुछ काल पश्चात् अचानक कैकुबाद की मृत्यु हो गई।

कैकाऊस का राज्याभिषेक

कैकुबाद की मृत्यु के पश्चात् कैकाऊस ने राजकाज संभाला। उसने न्याय तथा धर्म से राज करना आरम्भ किया जिसे देख कर सारी प्रजा उस पर अपने प्राण निछावर करने लगी। राजकाज के अतिरिक्त वह संगीत कला में भी कुछ समय व्यतीत करता था।

एक दिन एक संगीतज्ञ उसे माज़िन्दराँ की प्रशंसा में कुछ पद्य सुना कर बोला "महाराज! ईश्वर की सारी सृष्टि में सुन्दरता के नाते माज़िन्दराँ अद्वितीय है। प्रत्येक ऋतु में इसकी शोभा अनोखी ही रहती है।" संगीतज्ञ की प्रशंसा ने कैकाऊस के हृदय पर ऐसा प्रभाव डाला कि वह माज़िन्दराँ जाने के लिये तैयार हो गया। फलतः उसने अपने मंत्रियों

एवं सभासदों को बुला कर कहा "इस प्रकार चुपचाप बैठे रहने से मेरा मन घबरा उठा है, अतएव मेरी इच्छा है कि सेना सहित माज़िन्दराँ की ओर चल कर उस पर विजय प्राप्त करूँ।"

कैकाऊस की बात सुन कर सभी ने उत्तर दिया "महाराज! ईश्वर आपको दिग्विजयी करे, परन्तु हम लोगों की मंत्रणा यह है कि आप इस विचार को मन से पृथक कर दें। कारण यह कि माज़िन्दराँ का शासक दानवों की सेना रखता है। इसके अतिरिक्त वह स्थान तांत्रिक प्रणाली पर बनाया गया है, अतः उसे अपने अधिकार में लाना मानवी शक्ति-सीमा से बाहर है। आपके पूर्वजों ने भी उसके हस्तगत करने के हेतु कई बार आक्रमण किये, जिनका परिणाम यह हुआ कि वह स्थान तो उनको न मिल सका, हाँ अपार धन-जन की क्षति उनको अवश्य उठानी पड़ी। अतः हम लोगों की यही सविनय प्रार्थना है कि आप इस विचार को हृदय से निकाल दें।" पर जब उन लोगों ने देखा कि कैकाऊस किसी प्रकार उनकी अनुमति न मान कर माज़िन्दराँ-विजय पर दृढ़ है तो उन्होंने ज़ाल को सब बातें लिख भेजीं और उससे आने की प्रार्थना की।

जब ज़ाल को यह ज्ञात हुआ तो वह तुरन्त सीस्तान से चल पड़ा। इधर ज़ाल के आगमन की सूचना जब राजा को मिली तो वह बड़ा चकित हुआ कि मेरे बिना बुलाये ज़ाल क्यों आया है। परन्तु फिर भी शिष्टाचार के अनुसार उसने राज्य के बड़े-बड़े योद्धाओं को उसके स्वागत के लिये भेजा, और उसके राज-सभा में पदार्पण करते ही राजा स्वयं उसके स्वागत के लिये उठा।

ज़ाल के आसन ग्रहण करने के पश्चात् कैकाऊस ने सब का क्षेम-कुशल पूछा। तदुन्तर बात ही बात में ज़ाल ने माज़िन्दराँ का विषय छेड़ा। इस पर कैकाऊस ने कहा "मेरा विचार है कि मैं माज़िन्दराँ को विजय कर अपने अधीन करूँ।" इस पर ज़ाल ने उसे बहुत प्रकार से ऊँच-नीच समझा कर चाहा कि उसके इस विचार को बदल दे, पर कैकाऊस ने कहा "मैं शक्ति में अपने पूर्वजों से किसी प्रकार कम नहीं

हूँ। तुम राज-काज को संभाले रहना। इसी बीच में मैं उसे पराजित कर के लौट आऊँगा।" जब ज़ाल ने भली भाँति जान लिया कि कैकाऊस का राजहठ अकाट्य है, तो उसने कहा—"अच्छा फिर आप किसी अन्य व्यक्ति को राजकाज को देखने के लिये नियुक्त कर के मुझे सीस्तान लौट जाने की आज्ञा दीजिये। हाँ इतना मैं अवश्य कहे जाता हूं कि यदि आपके उत्तराधिकारी को किसी प्रकार की आवश्यकता आन पड़ेगी तो मैं उन्हें अपनी सेवाओं से वञ्चित न रक्खूंगा।" यह कह कर ज़ाल ईरान नरेश से बिदा हो कर सीस्तान की ओर चल दिया।

माज़िन्दराँ विजय के लिये प्रस्थान—कैकाऊस का बन्दी होना

ज़ाल के चले जाने के पश्चात् कैकाऊस ने मीलीद नाम के एक व्यक्ति को बुला कर कहा "मैं तो सेना सहित माज़िन्दराँ की ओर जाता हूँ तुम राज-काज देखते रहना। यदि कोई शत्रु ईरान पर चढ़ाई करे तो ज़ाल तथा रुस्तम को तुरन्त सहायता के लिये बुला लेना।"

इतना कह कर कैकाऊस ने माज़िन्दराँ की ओर प्रस्थान किया। जब राजा उसकी सीमा पर पहुँच गया तो प्रथम उसने गेव को सेना देकर गढ़ बिजय के लिये भेजा। गेव ने सीमा के भीतर पाँव रखते ही लूट मार आरम्भ कर दी। वह खेतों को नष्ट करता तथा प्रजा के निवास स्थानों को अग्नि देव को सौंपता हुआ आगे बढ़ने लगा। माज़िन्दराँ के शासक की सेना आगे बढ़ी, परन्तु गेव तथा उसकी सेना के सम्मुख न ठहर सकी। अतएव माज़िन्दराँ के शासक को विवश हो कर गढ़ की शरण लेनी पड़ी। इधर ईरानी सेना ने लूट-खसोट में बहुत सा धन प्राप्त किया।

जब माज़िन्दराँ का शासक गढ़ के भीतर सकुशल पहुँच गया तो उसने एक दानव द्वारा श्वेत दानव को कहला भेजा, कि ईरान भूपति ने हमारे राज्य पर आक्रमण किया है। और सारे नगर को लूट-पाट कर

नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है। यदि तुम शीघ्र न आओगे तो एक व्यक्ति भी जीवित न बचेगा। राजा का सन्देश पाकर श्वेत दानव उसकी सहायतार्थ तुरन्त आ पहुँचा और ईरान सेना से युद्ध करने लगा।

इस युद्ध का यह परिणाम हुआ कि ईरान के समस्त सैनिक खेत रहे और कैकाऊस, गेव तथा गोज़र आदि सहित बन्दी हुआ। उस समय अर्ज़ंग दानव ने कैकाऊस से व्यंग-पूर्ण वाणी में कहा—"महाराज! देखिये न कि इस देश की शोभा कैसी मनोरम है। आप की मृत्यु ही आप को ऐसे सुन्दर स्थान में खींच लाई है। इस समय आपके संरक्षक के हेतु इस कारागार के चारों ओर बारह सहस्त्र दानवों का पहरा है।"

अज़ंग की बात सुन कर कैकाऊस ने कहा "वास्तव में मेरी मृत्यु ही मुझे यहाँ खींच कर लाई है। क्योंकि मेरे प्रस्थान करने के पूर्व ही मेरे मंत्रियों ने मुझे इस विचार को मन से दूर करने के लिये बार-बार कहा था। पर मैंने अपनी मूर्खता तथा राज-हठ के वश हो उनके परामर्श को न माना। यदि उस दिन मैं उनके कथनानुसार उनकी बात को मान जाता तो आज मेरी तथा मेरे सैनिकों और योद्धाओं की यह दुर्दशा न होती।" राजा के पश्चात्ताप को सुन कर अर्ज़ंग दानव ठट्ठा मार कर हँसा और वहाँ से चल दिया।

रुस्तम द्वारा कैकाऊस का उद्धार

अज़ंग के चले जाने के पश्चात् कैकाऊस ने अपने एक वीर को बुला कर कहा—"तू सीस्तान जाकर ज़ाल से कह कि कैकाऊस ने कहा है कि मैंने तेरी बात नहीं मानी थी, जिसका फल यह हुआ कि ईरान की सारी सेना श्वेत दानव तथा उसकी दानवी सेना के हाथों मार डाली गई, और इस समय मैं अपने अन्य सामन्तों सहित कारागार सेवन कर रहा हूँ। अतः तू शीघ्र से शीघ्र आकर हम लोगों की सहायता कर।"

जब राजदूत के द्वारा ज़ाल को राजा के पश्चाताप तथा दुख की सूचना मिली, तो उसने अपने पुत्र रुस्तम को बुलाकर कहा—"हे

पुत्र ! देखो कैकाऊस ने मेरी बात न मानी और सैनिकों के प्राण का ग्राहक हुआ। साथ ही स्वयं भी इस समय कारागार-वास कर रहा है। ऐसे समय में जब कि हम लोगों का शासक बन्दी गृह के दुखों से पीड़ित हो और हम लोग सुरा आदि का सुख लूटें तो हम लोगों को चुल्लू भर पानी में डूब कर मर जाना चाहिये।" इस पर रुस्तम ने कहा—"पिता जी ! फिर आप की क्या आज्ञा है ?"

रुस्तम की इच्छा जान कर ज़ाल ने कहा—"अब मैं तो वृद्ध हो गया हूँ और मेरी शक्ति भी क्षीण हो गई है। यदि तुम कैकाऊस को बंधन मुक्त कर ला सको तो अच्छा है।" इस पर रुस्तम ने कहा—"हे पिता ! मेरी भी यही इच्छा है कि एक बार दानवों से भी युद्ध कर लूँ। परन्तु एक बात से मेरा हृदय व्याकुल हो रहा है। वह यह कि यदि मुझे वहाँ पहुँचने में विलम्ब हुआ तो कहीं ऐसा न हो कि वे दुष्ट कैकाऊस का प्राण न हर लें।"

रुस्तम की दूर-दर्शिता देखकर ज़ाल बड़ा प्रसन्न हुआ और बोला—"हाँ ऐसा सम्भव हो सकता है, परन्तु यदि तुम उन दोनों दूर वाले मार्गों से न जाकर सात दिन वाले मार्ग से जाओ तो मुझे विश्वास है कि तुम्हारे पहुँचने तक उन लोगों का कोई अनिष्ट न हो सकेगा। परन्तु तुम्हें यह ज्ञात होना चाहिये कि वह सात दिवस वाला मार्ग विपत्तियों से परिपूर्ण है और मुझे आशा नहीं कि इस यात्रा को तुम निर्विघ्न पूर्ण कर सकोगे।"

पिता के वचन सुन कर रुस्तम ने कहा—"पिता ! आप इसके लिये कोई चिन्ता न कीजिये, केवल मुझे उस मार्ग का ज्ञान करा दीजिये ! क्योंकि यदि ईश्वर चाहेगा तो मैं सब आपत्तियों को दमन करता हुआ सकुशल वहाँ पहुँच कर उन सबको मुक्त करके आप के चरणों में आकर उपस्थित हो जाऊँगा।" इतना कह कर वह रूदाबा के निकट गया और उसे भी नाना प्रकार से सान्त्वना देकर तथा पिता की आज्ञा लेकर अकेला ही रख़्श पर चढ़ अपनी यात्रा में अग्रसर हुआ।

रुस्तम की यात्रा—मार्ग की बाधायें

प्रथम दिवस रुस्तम जब समस्त दिन यात्रा करके संध्या समय एक बन में पहुँचा तो वहां उसने एक बन-गर्दभ को मारा तथा उसे भून कर अपनी क्षुधा शांत की और घोड़े की काठी उतार कर उसे चरने के लिये छोड़ दिया और स्वयं उसी स्थान पर लेट कर सो गया। थोड़ी देर पश्चात् एक सिंह उसी बन के कुंज से निकल कर रख़श की ओर बढ़ा। यह देख कर रख़स ने अपनी दोनों अगली टापों द्वारा उसे घायल कर दिया और अपने दाँतों से उस की गर्दन पकड़ कर यहाँ तक चबाई कि उसका प्राणांत हो गया।

प्रातःकाल जब रुस्तम सो कर उठा तो सिंह को मरा देख कर बहुत चकित हुआ, पश्चात् रख़श की प्रशंसा करता हुआ बोला—"यदि सिंह तुझी को मार डालता तो फिर मुझे कौन माज़िन्दराँ तक पहुँचाता, अतः भविष्य में तुझे चाहिये कि ऐसी परिस्थिति में तू सदैव मुझे जगा दिया कर।" इस प्रकार रख़श को समझा-बुझा रुस्तम आगे बढ़ा।

दूसरे दिन रुस्तम अपनी यात्रा के बीच में पिपासा से व्याकुल होगया ? परन्तु उस ओर ध्यान न देकर वह आगेही बढ़ता चला जा रहा था। संध्या समय वह अतीव तृषा-तुर हो कर चारों ओर देखने लगा; पर जल का कहीं पता न चला। उसने ईश्वर की प्रार्थना की—"जगदीश्वर! तुम्हें लोग दीन-बन्धु कहते हैं, इस समय इस दीन पर दया करो, अन्यथा यह तड़प-तड़प कर अपने प्राण दे देगा।"

इसी समय एक मृग एक ओर से भागता हुआ रुस्तम के सामने से निकला। मृग को देख कर रुस्तम के अनुमान किया कि आस-पास ही कहीं जलाशय अवश्य होना चाहिये। यह विचार कर उस ने रख़श को मृग के पीछे दौड़ा दिया। इस प्रकार घोड़ा दौड़ाते हुए थोड़ी देर पश्चात् रुस्तम एक सोते के निकट जा पहुँचा। उस स्थान की शीतलता देख कर

वह रख़्श की पीठ से उतर कर थोड़ा सुस्ताया फिर जल पी कर उसने अपनी प्यास बुझाई। रख़्श को चरने के लिये खोल कर उसने एक बन-गर्दभ का शिकार किया और अपनी पेट पूजा की। इस प्रकार निवृत्त हो कर वह उसी स्थान पर सो रहा।

अभी आधीरात बीती होगी कि वहाँ पर एक अजगर निकला; जिस की लम्बाई अठारह गज़ थी। रख़्श ने जो अजगर को रुस्तम की ओर बढ़ते देखा तो हिनहिनाया। रुस्तम उसके शब्द को सुन कर जाग पड़ा, पर अजगर निकट के गढ़े में जा छिपा। रुस्तम ने जब कुछ न देखा तो रख़्श से बोला कि इस प्रकार तुम मेरी निद्रा भंग न किया करो। इतना कह कर वह फिर सो गया। उसके सो जाने के पश्चात् वह अजगर उस गढ़े से फिर निकला, पर रख़्श की हिनहिनाहट को सुन कर तथा रुस्तम को सचेत होते देख कर फिर उसी खड्ड में जा छिपा। इस बार रुस्तम ने अपने चारों ओर बड़े ध्यान पूर्वक देखा, पर किसी भी आपत्ति मूलक वस्तु को न देख कर रख़्श पर बहुत क्रोधित हुआ। और बोला "क्या तू मेरे सुख को नहीं देख सकता जो बारबार मुझे अकारण ही जगा देता है? यदि भविष्य में तूने फिर ऐसा ही दुःखदायी कार्य किया तो याद रख कि मैं तेरा बध कर डालूंगा, फिर चाहे मुझे पैदल हफ़्त माज़िन्दराँ तक जाना पड़े।" इतना कह कर रुस्तम फिर सो गया।

इस बार अजगर जब फिर निकला तो रख़्श ने किसी भी प्रकार का शब्द नहीं किया, वरन् स्वयं रुस्तम के निकट आकर खड़ा हो गया। अब जिस ओर से अजगर रुस्तम के ऊपर आक्रमण करना चाहता उसी ओर वह घूम कर अजगर के सम्मुख आकर उसके आक्रमण को निष्फल कर देता। बड़ी देर तक यही दाँव-पेंच चलते रहे, इतने में रुस्तम की निद्रा भंग हो गई। उसने जो अजगर को देखा तो झट अपना खड्ग ले उस पर आक्रमण किया, परन्तु अजगर के बली होने के कारण उसका यह प्रहार निष्फल रहा। अजगर शत्रु के इस प्रहार से क्रोधित होकर

लाल-लाल नेत्रों से घूरता हुआ रुस्तम की ओर बढ़ा। अब रख़्श ने जो अपने स्वामी को संकट में देखा तो एक बार बड़े वेग से हिनहिना कर अजगर पर जा पड़ा, और अपने दाँतों से उसकी गर्दन पकड़ ली। इस अवसर को पाते ही रुस्तम ने अपनी असि का ऐसा प्रहार उस पर किया कि अजगर वहीं मर कर गिर गया। इस प्रकार रख़्श की सहायता से व्याल को यमपुरी का मार्ग दिखा कर रुस्तम भोर होते ही आगे बढ़ा।

तीसरे दिन प्रातःकाल होते ही रुस्तम रख़्श को दौड़ाता हुआ चला और दिन भर चलता ही रहा। जब तक रात अपनी काली चादर ताने तब तक वह एक सोते के निकट जा पहुँचा। वहाँ रख़्श को पाश-मुक्त कर स्वयं भोजन करके अभी लेटा ही था कि उसने एक रमणी को अपनी ओर आते देखा। उसके एक हाथ में एक तानपूरा था और दूसरे में एक सुरा-पात्र। रुस्तम उस छवि को देख कर मुग्ध हो गया और उठ कर बैठ गया। उधर वह सुन्दरी भी मंद-मंद मतवाली चाल से रुस्तम के निकट आई। रुस्तम उस पर इतना आसक्त हो चुका था कि बिना उसका परिचय पाये ही वह उसे अपने पास बिठा कर उसके हाथ से सुरा-पान करने लगा। थोड़ी सी मदिरा पीने पिलाने के पश्चात् वह तानपूरे पर अपनी उँगलियाँ नचा कर अलापने लगी। उसके कंठ, स्वर तथा आलाप को सुन कर रुस्तम अतीव प्रसन्न हुआ। उस सुन्दरी का संगीत थमा ही था कि वह स्वयं गाने लगा। संगीत बन्द होते ही रुस्तम ने उस नारी का परिचय पूछा। उसने उत्तर दिया "मैं एक तपस्विनी हूं और जगदीश्वर मेरी आवश्यकता एवं इच्छानुकूल समस्त वस्तुएँ यहाँ एकत्रित कर देता है।" इतना कह कर उसने भी रुस्तम का परिचय पूछा। रुस्तम ने ईश्वर की प्रार्थना करने के पश्चात् अपना परिचय दिया। ईश्वर की प्रार्थना की भनक जैसे ही उस स्त्री के कानों में पड़ी वैसे ही उसकी मुखाकृति परिवर्तित हो गई। अनायास ही रुस्तम की दृष्टि जो उसके मुख पर पड़ी तो वह

उसके मुख के आकस्मिक परिवर्त्तन को देख कर वह शंकित हो गया। उसे अनुमान लगाते देर न लगी कि या तो यह नारी कोई मायाविनी है अथवा दानवी। इन दोनों प्रकार के प्राणियों के अतिरिक्त और कोई ऐसा जीव संसार में नहीं है जिसकी मुखाकृति ईश्वर की प्रार्थना के सुनते ही बदल जाय। यह सोच कर उसने स्त्री को तुरंत बन्दी कर लिया। तदनंतर उसने कहा—"तू सत्य-सत्य कह दे कि तू कौन है?" अपने को विवश पा कर उसने बतला दिया कि मैं दानवी मायाविनी हूँ। मायाविनी का परिचय पाते ही उसने अपनी खड्ग से उसके दो भाग कर डाले। उसका बध कर वह निश्चिन्त हो कर वहीं सो रहा।

प्रातःकाल होते ही रुस्तम ने रख़श पर काठी कसी तथा उस स्थान का परित्याग कर वह आगे बढ़ा। चलते-चलते वह एक ऐसे स्थान पर पहुँचा जहाँ वृक्ष एवं लताओं का ऐसा-विकट झुरमुट था कि भगवान् सूर्य्य की रश्मियाँ भी उसे बेध कर माता बसुंधरा की गोद तक नहीं पहुँच पाती थीं। येन के न प्रकारेण रुस्तम ने इस अन्धकार पूर्ण निरापद को पार किया और एक दीप्ति-पूर्ण स्थान में जा पहुँचा।

मार्गश्रम से थकित होकर उसने वहीं पर थोड़ा सा विश्राम किया कि एक संरक्षक उसके निकट आया और रुस्तम के पाँव पर अपनी लाठी का एक भरपूर प्रहार करके बोला—"दुष्ट! बतला तू किस की आज्ञा से इस स्थान पर आया? क्या तुझे नहीं ज्ञात है कि यह महाराज औलाद का राज्य है? मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि तेरा काल-चक्र ही तेरा पथ प्रदर्शक बन कर तेरे बध के लिये यहाँ पर तूझे ले आया है।"

एक तो रुस्तम पाँव की पीड़ा से योंही दुखी था फिर उसने संरक्षक की बेतुकी बातें जो सुनीं तो उसका क्रोध सहन की सीमा का उल्लंघन कर गया। उसने उठ कर उस संरक्षक के दोनों कानों को पकड़ कर इतनी शक्ति से खींचा कि कान उसके शरीर को छोड़ कर रुस्तम के हाथों में आ रहे। उसका सारा शरीर रक्त रंजित हो गया। तत्पश्चात्

रुस्तम ने एक ऐसी करारी चपत उसके मुँह पर जमाई कि उसकी बत्तीसी मुँह के बाहर निकल पड़ी।

अपनी यह दुर्दशा करा कर वह संरक्षक भाग कर औलाद के पास गया और सारी कथा, कह सुनाई। औलाद अपने सेवक की दुर्दशा देख कर सावन-भादों के मेघों की भाँति गर्जन करता हुआ रुस्तम के निकट आया और पूछने लगा—"तू कौन है और क्यों तू ने मेरे सेवक को इस प्रकार घायल किया?" इस पर रुस्तम ने कहा—"मैं वह व्यक्ति हूँ जिस का नाम सुन कर सिंह के शरीर में कंपकंपी हो उठती है।" यह उत्तर सुन कर तथा नाम का परिचय पाकर औलाद ने कहा—"अच्छा यदि तू नाम नहीं बतलाता तो तू यही बतला दे कि तू किस मार्ग से होकर इस स्थान तक आया है।" इस पर रुस्तम ने कहा—"मैं सप्त दिवस वाले मार्ग से हो कर यहाँ तक आया हूँ। मैंने अब तक तीन पड़ाव मारे हैं और प्रत्येक पड़ाव की विपदाओं को दमन कर चुका हूँ। अब चौथे पड़ाव का विघ्न तू दीख पड़ता है। अब तुझे भी मृत्यु-मुख का ग्रास बना कर मैं निर्विघ्न हो आगे बढ़ूँगा।"

रुस्तम के साहस की कथा सुन कर औलाद का धैर्य जाता रहा। उसने स्वयं तो उस पर आक्रमण न किया पर अपने सैनिकों को आज्ञा दी कि तुम इस नराधम को बन्दी कर लो। अपने स्वामी की आज्ञा पाकर समस्त सेना उस पर टूट पड़ी। इधर रुस्तम ने जो गदा संभाली तो एक-एक को यमपुरी की यात्रा कराने लगा। पहले तो औलाद के सैनिक बड़े उत्साह के साथ लड़े, पर अधिकांश वीरों के मरते ही शेष पीठ दिखा कर भागे। अपने सैनिकों को इस प्रकार भागते देख कर औलाद भी भाग खड़ा हुआ।

औलाद को भागते देख कर रुस्तम ने रख़श को ऐड़ लगाई। बड़ी देर की दौड़ धूप के बाद रुस्तम उसे बन्दी कर के एक जलाशय

के निकट आया और उसे एक वृक्ष से बाँध कर सारी रात सुख की नींद सोया।

दूसरे दिन प्रातःकाल जब रुस्तम सो कर उठा तो उसने औलाद को बन्धन-मुक्त करके कहा, "तुझे ज्ञात होगा कि अभी थोड़े दिन पूर्व माज़िन्दराँ में कैकाऊस और दानवों के बीच युद्ध हुआ था। वहाँ के कुछ समाचार तो बतला।" यह सुनते ही औलाद ने भय के कारण सब कुछ सविस्तर कह सुनाया। कैकाऊस का समाचार पाकर रुस्तम ने चाहा कि उसे तलवार के घाट उतार दे, परन्तु उसके रोने गिड़गिड़ाने से उसने उसे प्राण-दान देकर कहा "यदि तू मुझे माज़िन्दराँ गढ़ के विजय करने में सहायता दे तो मैं तेरे साथ और भी दया का व्यवहार करूँगा, अन्यथा जान ले कि तू मेरे हाथों से बच नहीं सकता।"

जब उसने रुस्तम से विश्वासघात न करने की सौगन्ध खाई तो उसने कहा "अच्छा, अब तू बता कि महाराज कैकाऊस किस स्थान पर बन्दी किये गये हैं, और श्वेत दानव का निवास कहाँ पर है?" इस पर औलाद ने कहा "यहाँ से थोड़ी दूर पर दो पर्वतों के बीच में एक कारागार बना हुआ है जहाँ पर महाराज कैकाऊस अपने सामन्तों सहित बन्दी हैं। यही स्थान माज़िन्दराँ का द्वार है। इस स्थान पर बारह सहस्र देवों का पहरा है। यहीं पर दानवों का निवास है। इसके मध्य में एक मरुस्थल है। वहाँ पर एक बहुत बड़ा शिला-खण्ड है, जो गढ़ की दीवार का कार्य करता है। इसके पश्चात् दो सहस्र गजों का पहरा है। इस स्थान पर यदि आप अपने समस्त शरीर को लोहा बनालें तो भी उसे पार नहीं कर सकते।"

औलाद की इस बात पर रुस्तम ठठा कर हँसा और बोला "तू केवल मेरा पथ-प्रदर्शक बना रह, फिर देख कि मैं ईश्वर की सहायता तथा कृपा से किस प्रकार इस सुरक्षित स्थान को छिन्न-भिन्न कर महाराज कैकाऊस को बन्धन-मुक्त करता हूँ।"

इसी प्रकार वार्त्तालाप करते हुए यह लोग बहुत दूर निर्विघ्न निकल गये। अकस्मात् रुस्तम को एक पहाड़ी पर अग्नि जलती हुई दिखाई पड़ी। इस अग्नि की ज्वाला को देख कर रुस्तम ने औलाद से पूछा—"यह कौन स्थान है?" इस पर औलाद ने कहा—"यह मिज़िन्दरी नगर का मुख्य द्वार है। यहीं पर बारह सहस्र दानव द्वारपाल के रूप में रहते हैं। इस प्रकार अग्नि प्रज्वलित करना उनका नित्य का कर्म है।"

औलाद के उत्तर को सुनकर रुस्तम ने जान लिया कि अब हम लोग नगर के निकट आगये हैं। उसने नीति का अनुसरण करते हुये उस पथ-प्रदर्शक को फिर एक वृक्ष से बाँध दिया और रख़श को चरने के लिये मुक्त कर स्वयं सो रहा।

प्रातःकाल जब रुस्तम सोकर उठा तो उसने औलाद को वृक्ष से खोल कर उसके गले में अपनी पाश डाल दी और आगे बढ़ चला। थोड़ी दूर चलने के पश्चात् औलाद ने कहा—"महाराज! अब हम लोग एक ऐसे विपदा-पूर्ण स्थान पर आ गये हैं जहाँ से मनुष्य का बच कर चला जाना असम्भव है, क्योंकि इस स्थान के संरक्षक अर्ज़ंग तथा बेदार जंग नाम के दो दानव हैं।"

रुस्तम ने कहा—"इसमें भय की क्या बात है। जब उनके निवास-स्थान के निकट हम लोग पहुँच जाय तो तू मुझे बतला देना।" अतः जब औलाद अर्ज़ङ्गदेव के घर के निकट पहुँचा तो उसने दूर ही से रुस्तम को दिखा दिया कि वह देखो अमुक घर अर्ज़ङ्गदेव का है। रुस्तम अकेला ही उसके डेरे के निकट जा पहुँचा और विकट गर्जन करने लगा। अर्ज़ङ्ग भी अपने डेरे से बाहर आया और रुस्तम से भिड़ गया, परन्तु रुस्तम ने बात की बात में उसका शिर धड़ से पृथक कर दिया और उस शिर को इस वेग से फेंका कि वह दानव मण्डली के बीच में जा गिरा।

अर्ज़ङ्गदेव के शिर को देख कर सब भयभीत हो उठे और वहाँ से भाग खड़े हुये।

अर्ज़ङ्गदेव को मारने के पश्चात् रुस्तम औलाद को साथ ले कर ऊँचे-नीचे मार्गों को पार करता हुआ कारागार के द्वार पर जा पहुँचा और उसके भीतर पहुँच कर कैकाऊस से मिल कर मार्ग का सम्पूर्ण समाचार कह सुनाया। सब बात कहने के पश्चात् वह चाहता ही था कि कैकाऊस की बेड़ी को तोड़े कि इतने में वहाँ के संरक्षक दानवगण जाग उठे और उन्होंने आकर रुस्तम को घेर लिया।

जब रुस्तम भी उनसे युद्ध करने के हेतु बाहर निकला तो सर्व प्रथम उनका मुखिया रुस्तम के सम्मुख आ। उसे देख कर रुस्तम ने कहा, "इतना समझ लो कि मैं वही मनुष्य हूँ जो सप्त दिवस वाले मार्ग की समस्त विपदाओं का दमन करता हुआ यहाँ तक पहुँचा हूँ और मैं ने ही अर्ज़ङ्गदेव का बध किया है। अतः यदि तुम लोगों को अपने प्राण प्यारे हों तो मेरे साथ युद्ध करने का विचार अपने मस्तिष्क से बाहर करके मेरी अधीनता स्वीकार कर लो; अन्यथा जान लो कि तुम में से प्रत्येक प्राणी को यमपुरी का मार्ग देखना पड़ेगा। रुस्तम के इस वक्तव्य से वनदेव ऐसा प्रभावित हुआ कि उसने रुस्तम की अधीनता स्वीकार करके शेष स्वाधीन देवों को युद्ध न करने का आदेश देकर उन्हें उसने कैकाऊस के संगियों को लाने की आज्ञा दी।

अन्य सामन्तों के आ जाने पर रुस्तम ने प्रथम तो सब को बन्धन मुक्त किया। तदन्तर सब को कैकाऊस के समीप रहने का आदेश देकर स्वयं औलाद तथा एक देव को साथ ले कर श्वेत दानव के निवास-स्थान की ओर चल दिया। बहुत दूर चल कर उसे एक सेना दिखाई पड़ी तो उसने देव से पूछा "यह कौन सा स्थान है और वह सेना किस की है?" इस पर देव ने कहा "दयानिधान यही श्वेत देव का स्थान है और वह सेना जो आपको दिखाई पड़ रही है श्वेत दानव की सेना है।" इसके पश्चात् उसने कहा "इन देवों का यह नित्य कर्म है कि रात्रि

के समय यह जागते हैं और सूर्योदय होने के साथ ही यह सो जाते हैं। अतः यदि आप सूर्योदय होने पर इन पर आक्रमण कर देंगे तो निश्चय जानिये कि विजय-श्री निश्चय आप ही को वरण करेगी।" औलाद देव के मतानुसार रुस्तम ने रात्रि वहीं व्यतीत की।

दूसरे दिन प्रातः काल होते ही रुस्तम औलाद तथा देव को लेकर श्वेत देव के स्थान पर गया। देव के कथनानुसार कुछ तो सो गये थे और कुछ अर्ध-निद्रित अवस्था में थे। यह देख का रुस्तम ने अपनी कटार द्वारा उन सब को यमपुरी का मार्ग दिखाना आरम्भ कर दिया। युद्ध निमग्न देवों की चीत्कार सुन कर शेष देव भी जाग पड़े, और लड़ने के उद्देश्य रुस्तम के सम्मुख आये। वह इस समय इस वेग से असि प्रयोग कर रहा था कि किसी देव को उसके निकट आने तक का साहस न होता था इस प्रकार रुस्तम ने अधिकांश दानवों को परलोक की यात्रा करा दी। भीषण-शत्रु के हत्या-काण्ड को देख कर शेष देव अपने-अपने प्राण लेकर भागे।

अब इस स्थान को निर्विघ्न पाकर रुस्तम औलाद तथा सहायक देव को साथ लेकर श्वेत दानव की ओर चला। जब यह लोग उस स्थान में पहुँचे तो किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये। यह न जान पड़ता था कि किस ओर जायें और किस ओर न जायें। पर सहायक देव के नेतृत्व में फिर आगे बढ़े। चलते-चलते सब लोग एक खड्ड के मुख पर पहुँचे। वास्तव में यही श्वेत दानव का शयनगृह था। रुस्तम ने श्वेत देव को ललकारा। शत्रु के भीषण कंठ स्वर को सुन कर श्वेत देव बाहर निकला और रुस्तम से भिड़ गया।

रुस्तम ने क्रोध के आवेश में एक ऐसी तलवार मारी कि उसकी जंघा घायल हो गई। इस घाव के लगते ही उस पिशाच ने रुस्तम को अपनी काँख में दबा लिया। इधर रुस्तम तो यह सोचता था कि किस प्रकार इस नराधम से छुटकारा मिलेगा, उधर श्वेत देव यह विचा करता था कि बस अब आज ही मेरा अन्तिम समय आ गया। सब प

यह कि दोनों इसी प्रकार विविध विचारों में मग्न होकर दूसरे को पराजित करने का उपाय कर रहे थे। अन्ततः जब दोनों थक गये, तो एक दूसरे से पृथक् हो साँस भरने लगे।

इसी बीच रुस्तम की दृष्टि पृथ्वी पर जो पड़ी तो उसने देखा कि पृथ्वी रक्त-रंजित हो गई है। वह जान गया कि उसका असि-प्रहार निष्फल नहीं गया। अतएव वह फिर उत्साहित होकर श्वेत दानव से भिड़ गया। इस बार उसने अवसर पाकर श्वेत देव की कमर पकड़ कर उसे शिर से ऊँचा उठा कर पृथ्वी पर पटक दिया और तुरन्त अपनी कटार द्वारा उसके हृदय को विदीर्ण कर डाला। रुस्तम के इस कार्य के समाप्त करते-करते श्वेत देव के नेत्र सदैव के लिये बन्द हो गये। अब रुस्तम ने दृष्टि फेरी तो देखा कि समस्त खडु रक्त से भर गया है और बाहर के सब देव मर गये हैं। वह चकित हो कर औलाद से पूछने लगा कि इन देवों को किस ने मारा।

रुस्तम को चकित देख कर औलाद ने कहा "महाराज श्वेत देव के प्राण का एक एक अंश सब देवों में था अतः उसके प्राणहीन होते ही सब देव अपने आप मर गये।" इतनी बात समाप्त कर के औलाद ने कर-बद्ध हो कर रुस्तम से कहा "हे दयानिधान! अब मैं आपसे एक पुरस्कार की आशा रखता हूँ।" औलाद की बात सुन कर उस वीर ने तुरन्त उसकी मनोवृत्ति को जान कर कहा "घबराओ नहीं। मैं तुम्हीं को माज़िन्दरां का शासक बनाऊँगा।" इसके अनन्तर उसने श्वेत दानव के हृदय को उसके हाथ में दे दिया।

दानव-संहार के पश्चात् रुस्तम वहाँ से निकल कर फिर कैकाऊस के निकट गया और उसे इस विजय की सूचना दी। कैकाऊस ने रुस्तम की वीरता तथा बुद्धिमानी को देख कर उसे कोटिशः धन्यवाद दिया।

कैकाऊस का माज़िन्दरां के सिंहासन पर बैठना

यहाँ पहुँचने पर दानव-पति ब्नदेव ने तुरन्त एक रत्न-जड़ित सिंहासन कैकाऊस के सम्मुख रख दिया। कैकाऊस के सिंहासनारूढ़ होने के पश्चात् अन्य सामन्त उसके दाहिने बायें पंक्ति-बद्ध खड़े हो गये, और रुस्तम एक दूसरे सिंहासन पर बैठा। अब कैकाऊस ने सब की अनुमति लेकर माज़िन्दराँ-पति को एक पत्र लिखा कर एक वाहक द्वारा भेजा।

माज़िन्दराँ नरेश ने उसे खुलवा कर पढ़वाया। उसमें कैकाऊस ने लिखा था, "मेरे बन्दी होने के पश्चात् ईरान से एक वीर आया है जिसने श्वेत देव तथा अर्ज़ंगदेव को मार कर मुझे बन्धन-मुक्त किया है; अतः मेरा कथन है कि अब तुम मेरी अधीनता स्वीकार कर सुख-पूर्वक राज्य करो; अन्यथा तुम्हें युद्ध करना पड़ेगा और इस युद्ध में तुम्हें अपने राज्य के साथ-साथ प्राण भी गँवाने पड़ेंगे। मैंने यह उपयुक्त समझा कि तुम्हें लिख कर भेज दूँ, अब भविष्य में जो तुम्हारी इच्छा हो करो।"

कैकाऊस के पत्र को सुन कर माज़िन्दराँ का शासक बड़ा क्रोधित हुआ और उसने उत्तर में लिखवा दिया, "कैकाऊस को उस ईरानी व्यक्ति पर इतना अहंकार न करना चाहिये क्योंकि मेरे यहाँ उसके जैसे एक नहीं सहस्रों योद्धा मारे-मारे फिरते हैं। सम्भव है कि उसका यह विचार हो कि श्वेत देव तथा अर्ज़ंग देव के मर जाने से माज़िन्दराँ का शासक भयभीत होकर उनकी अधीनता स्वीकार कर लेगा, यह नितान्त असम्भव है। श्वेत दानव तथा अर्ज़ंग देव से भी अधिक शक्ति-शाली देव अब भी मेरी अधीनता में हैं। इसके अतिरिक्त मेरे पास बारह सौ ऐसे युद्ध गज हैं जिनकी एक चिंघार से ईरानी सेना की श्वास अवरुद्ध हो जाएगी। वह यह सोचते होंगे कि जिस महावीर ने मुझे बन्धन-मुक्त किया है वही माज़िन्दराँ को भी विजय करेगा। वह इस बात को स्वप्न में भी न सोचें। उन्हें विदित

होना चाहिए कि मैंने दया भाव दिखा कर इस बार उन्हें केवल कारागार की साँकलें ही दिखाई हैं। यदि वह चुपचाप ईश्वर को धन्यवाद देते हुये घर न चले गये तो इस बार उन्हें अपने प्राण ही गँवाने पड़ेंगे। यहीं तक नहीं, ईरान का राज्य भी हम लोगों की आज्ञाओं की अपेक्षा किया करेगा। उनको चाहिए कि अपने पूर्वजों की भाँति राज्य विस्तार का विचार त्याग कर ईरान में सुख-पूर्वक राज्य करें।" इतना लिखा कर उसने दूत को पत्र देकर कहा—"कह देना कि यदि वह अपना भला चाहते हों तो इस विचार को त्याग कर मेरी अधीनता स्वीकार कर लें अन्यथा बड़ी हानि उठानी पड़ेगी।"

ईरानी पत्र-वाहक ने लौट कर जब पत्र कैकाऊस के सम्मुख रक्खा तो राजाज्ञा से पत्र खोल कर पढ़ा गया। उत्तर को पढ़ कर तथा दूत द्वारा बहुत सी बातों से अवगत हो कर सब युद्ध के हेतु चिन्ता निमग्न हो उठे। इस पर रुस्तम ने कहा—"एक बार फिर आप माज़िंदरां के शासक को पत्र लिखिये। इस बार मैं स्वयं ही पत्र वाहक बन कर वहाँ जाऊँगा और उनकी शक्ति का पता भी लगाऊँगा फिर जैसा उचित समझा जायेगा किया जायेगा।"

फलतः एक पत्र फिर माज़िन्दराँ के शासक को लिखा गया—"यह अन्तिम पत्र तुम को भेज रहा हूँ, यदि अब भी तुम कुमार्ग को तज कर सुमार्ग पर न आओगे तो मुझे विवश हो कर तुम को इस धृष्टता का फल चखाना ही पड़ेगा।" इस पत्र को रुस्तम को देकर कैकाऊस ने उसे बिदा किया।

जब रुस्तम माजिन्दराँ के निकट पहुँचा तो माजिन्दराँ के शासक को गुप्तचरों द्वारा सूचना मिली कि ईरान नरेश का एक दूसरा पत्र-वाहक आ रहा है। उसका शरीर देख कर ऐसा प्रतीत होता है मानो एक पर्वत चला आ रहा है। उसके पास एक धनुष तथा एक बड़ी भारी गदा है। इसके अतिरिक्त वह जिस अश्व पर सवार है उसका हृष्ट-पुष्ट शरीर तथा चाल ढाल देख चकित हो कर रह जाना पड़ता है।

इस पत्र-वाहक की सूचना पाकर माजिन्दराँ-नरेश ने अपने यहाँ के कुछ वीरों को उसके स्वागत के लिये भेजा। उन्हें यह आदेश भी नरेश ने कर दिया कि किसी न किसी प्रकार तुम उसकी बल-परीक्षा भी कर लेना।

इधर जब रुस्तम ने देखा कि माजिन्दराँ के कुछ योद्धा उसके स्वागत के निमित्त आ रहे हैं तो उसने कौतूहल-वश मार्ग के एक वृक्ष को जड़ समेत उखाड़ लिया और उसे फिरकी की भाँति नचाता हुआ चला। जब उनके समीप पहुँचा तो उसने उस वृक्ष को उनकी ओर फेंक दिया। फलतः उन माज़िन्दरानी योद्धाओं में से कुछ तो उसी वृक्ष से दब गये। जब दोनों ओर के वीर अति निकट पहुँच गये तो माज़िन्दरां के एक वीर ने उसकी ओर अपना पंजा इस अभिप्राय से बढ़ाया कि रुस्तम का भुज-बल देखे।

रुस्तम उसके इस कपट-भाव को तुरन्त ताड़ गया और हँस कर तुरन्त उसके पंजे में अपना पंजा डाल कर इतना बल किया कि माज़िन्दरानी वीर का पंजा ही टूट गया। वह वीर व्यथित हो अपने राजा के निकट गया और अपने पंजे को दिखा कर रुस्तम की सारी बातें कह सुनाईं। इस पर माज़िन्दरां के शासक ने कलाहोर नामी विख्यात वीर को भेजा जो पंजा लड़ाने के कौशल में अग्रगण्य था।

उसने रुस्तम के निकट पहुँच कर कहा—"बच्चों के साथ बल-परीक्षा करना वीरों को शोभा नहीं देता। यदि तुम वीर हो तो आओ मुझसे हाथ मिलाओ।" कलाहोर की बात सुन कर रुस्तम ने उससे पंजा लड़ाया और एक ही बार के बल-प्रयोग में प्रति-द्वन्द्वी के पंजे को तोड़ दिया। अब कलाहोर भी रोता-पीटता राजा के समीप गया और कहने लगा—"महाराज! वास्तव में वह व्यक्ति मानव नहीं दानव है। उससे पार पाना हम लोगों की शक्ति से दूर है।" कलाहोर की बात सुन कर राजा ने जान लिया कि यही रुस्तम है, अतः उसने उसे राज सभा में बुलाया।

राज-सभा में पदार्पण कर रुस्तम सिंह की भाँति सिंहासन की ओर

बढ़ा और पत्र को राजा के सम्मुख रख कर स्वयं एक उपयुक्त स्थान पर बैठ गया। इसी बीच राजा ने रुस्तम से पूछा—"क्या तू ही रुस्तम है?" इस पर रुस्तम ने कहा—"मुझ में तथा रुस्तम में आकाश पाताल का अन्तर है। तो मैं उसका एक तुच्छ सेवक हूँ।" तदन्तर राजा ने पत्र को सुना। पश्चात् क्रोधावेश में इस प्रकार उत्तर लिखवाया—'तू इस प्रकार मुझे भयभीत मत कर। यदि तू मेरी अधीनता नहीं स्वीकार करना चाहता तो युद्ध के लिये तैयार होजा।" यह उत्तर लिखवा कर उसने रुस्तम को दिया। बिदा होते समय रुस्तम ने निर्भीकता से कहा—"हे राजन्! आप कैकाऊस की अधीनता स्वीकार कर लीजिये अन्यथा आप को बड़ी क्षति उठानी पड़ेगी। इसके अतिरिक्त और भी ऊँच-नीच सुझाकर वह राज सभा से चल पड़ा।

माजिन्दराँ के शासक से युद्ध

जब रुस्तम कैकाऊस के निकट आया तो उसने माजिन्दराँ के शासक का उत्तर सुना कर कैकाऊस से कहा—"अब आप कल रण भूमि में पदार्पण कीजिये।" फलतः दूसरे दिन दोनों ओर की सेनायें समर भूमि में आ डटीं। पंक्ति-बद्ध हो जाने के पश्चात् ईरानी सेना में से रुस्तम पहिले बाहर आया। रुस्तम को देख कर माजिन्दराँ के शासक ने बेदिरंग दानव को भेजा।

उसके आते ही रुस्तम ने अपने भाले का एक हाथ उस देव पर ऐसा मारा कि वह वहीं पर निर्जीव होकर गिर पड़ा। बेदिरंग के मरते ही माजिन्दराँ के शासक के आदेशानुसार सारी सेना ने रुस्तम पर आक्रमण कर दिया। इधर ईरानी सेना भी रुस्तम की सहायता को आ पहुँची। दोनों ओर से मार-काट आरम्भ हो गई। एक सप्ताह तक इसी प्रकार भीषण युद्ध होता रहा परन्तु जय किसी की भी न हुई। तब तो कैकाऊस ने उसी रात को ईश्वर से प्रार्थना करते हुए कहा—"हे दुष्ट-दमन! अब आप मेरी सहायता कीजिये, जिससे मैं इस दुष्ट को पराजित कर सकूँ।"

इसी समय आकाश-वाणी हुई—'तू धीरज धर, कल तू अवश्य विजयी होगा। इस वाणी को सुन कर कैकाऊस का मन स्थिर हुआ।"

आठवें दिन जब फिर दोनों सेनायें रण-भूमि में आईं तो रुस्तम ईश्वर का नाम ले कर माज़िन्दरां के शासक की ओर बढ़ा। वहाँ उसे बारह सौ युद्ध-गजों का सामना करना पड़ा। परन्तु उस वीर ने ईश्वर का ध्यान कर के उन मद-मस्त गजों पर अपनी गदा द्वारा आक्रमण करना आरम्भ कर दिया। फलतः हाथी उसकी गदा से व्यथित होकर भाग निकले। अब रुस्तम मार्ग को निर्विघ्न पाकर माजिन्दरां के शासक के समीप जा पहुँचा।

वहाँ पहुँच कर उसे यह ज्ञात हुआ कि यहाँ गदा उपयोगी सिद्ध न होगी, अतः गेव को भाला लाने का आदेश किया। पलक मारते ही गेव भाला ले कर रुस्तम के निकट पहुँच गया और उसे भाला दे दिया। भाले का प्रयोग करते ही रुस्तम ने देखा कि राजा के स्थान पर एक बहुत बड़ी पत्थर की शिला खड़ी है। इस कौतुक को देख कर वह कैका-ऊस के निकट आया और सब लीला कह सुनाई। इस पर कैकाऊस ने ईरानी सैनिकों को वह शिला-खण्ड लाने को कहा, परन्तु सैनिकों तथा अन्य योद्धाओं को विफल मनोरथ होते देख कर रुस्तम ने स्वयं ही उस शिला को उठा कर कैकाऊस के सम्मुख रक्खा।

उस शिला को भूमि पर रख कर रुस्तम ने कहा—"हे माज़िन्दरां के शासक! अब तुम इस शिला-खण्ड से बाहर निकल आओ अन्यथा मैं अपनी गदा द्वारा इसको चूर्ण कर डालूँगा।" रुस्तम की यह बात सुन कर राजा उस शिला के बाहर निकल आया। उसके दृष्टि-गोचर होते ही रुस्तम ने उसका शिर काट लिया।

राजा के मरते ही सेना के पाँव उखड़ गये और वह भाग खड़ी हुई। माज़िन्दरां को विजय करने के पश्चात् कैकाऊस को असंख्य अस्त्र, शस्त्र, धन-रत्न तथा बहुत-सी रमणियाँ हाथ लगीं।

कैकाऊस इस विजय तथा धनादि की प्राप्ति से अपने दुःखों को

एक दम भूल गया । इससे निवृत्त हो कर उसने एक रंग-मञ्च बनाने की आज्ञा दी, और एक सप्ताह तक अपने सामंतों तथा सैनिकों सहित उसी रंग-भूमि में नाना प्रकार के उत्सव मनाता रहा ।

इसके पश्चात् उसने रुस्तम को, बहुत सा धन-धान्य तथा दास-दासियाँ पुरस्कार-स्वरूप देते हुये उसकी पद-वृद्धि की । तदन्तर उसने शेष सामंतों तथा सैनिकों को यथायोग्य धन-धान्य तथा भूमि देकर सम्मानित किया ।

सब समाप्त हो जाने के पश्चात् रुस्तम ने औलाद को कैकाऊस के सम्मुख उपस्थित करते हुये कहा—"महाराज ! इस वीर ने मेरी बड़ी सहायता की है, और इसी के नेतृत्व के कारण मैं आप लोगों तक पहुँच सका । इसने अपनी स्वामि-भक्ति का अमूल्य परिचय दिया है । अतः मेरी विनती यह है कि यदि आप इसे माज़िन्दराँ का शासक नियुक्त कर दें तो दास सदैव आप का कृतज्ञ रहेगा ।"

रुस्तम की इच्छा जान कर कैकाऊस ने औलाद को बुला कर माज़िन्दराँ का राज-मुकुट उसे पहना कर एक भारी उत्सव मनाया ।

इसके कुछ दिन पश्चात् तक कैकाऊस माज़िन्दराँ के सुन्दर स्थान की जलवायु का उपभोग करता रहा । तदन्तर औलाद को न्याय-पूर्वक राज्य करने का आदेश करके सेना सहित ईरान को लौट आया ।

हामावराँ पर आक्रमण—सौदाया से विवाह

माज़िन्दराँ को विजय करके जब कैकाऊस ईरान लौटा, तो सब छोटे-बड़े राजाओं ने उसे राज्य-कर के रूप में बहुत सा धन-द्रव्य भेंट किया, और जिसने विद्रोह किया उसे ईरानी सेना द्वारा अति क्षति उठानी पड़ी । कैकाऊस ने तूरान के भी बहुत से नगरों पर आधिपत्य कर लिया ।

इसके पश्चात् उसने हामावराँ पर चढ़ाई की । उसके योद्धाओं ने हामावराँ के सैनिकों को इतना छकाया कि वहाँ का शासक विवश हो

कर कैकाऊस को राज्य-कर देने लगा। कैकाऊस को जब यह विदित हुआ कि हामावरां के शासक के एक अत्यन्त सुन्दरी पुत्री सौदाया है, तो उसने उसके साथ विवाह का प्रस्ताव लिख भेजा और कुछ कालोपरांत सौदाया का विवाह कैकाऊस के साथ हो गया।

एक दिन हामावरां के शासक ने कैकाऊस को गढ़ में पधारने के हेतु आमंत्रित किया। निमंत्रण स्वीकार कर जाने को उद्यत भी हो गया, पर जब सौदाया को इसकी सूचना मिली तो उसने अपने पति को रोकने के उद्देश्य से कहा—"हे प्राण प्यारे! मेरा पिता अत्यन्त नीच प्रकृति का मनुष्य है। उसके वचन का कोई विश्वास नहीं। अतएव मेरी यह इच्छा है कि आप वहाँ न जाय; क्योंकि मुझे आपके अमंगल की आशंका है।" परन्तु कैकाऊस ठहरा हठी स्वभाव का व्यक्ति उसने सौदाया की एक न सुनी और वहाँ चला ही गया।

कैकाऊस अपने श्वसुर के निमंत्रण पर हामावरां के गढ़ में गया, और सात दिन पर्यन्त हामावरां के शासक ने उसका बहुत आदर सत्कार किया। वह इस सात दिन के आदर सत्कार में जब भूल गया तो आठवें दिन हामावरां के शासक ने उसे उसके सब साथियों सहित बन्दी कर लिया। राजा के बन्दी होते ही उसकी सारी सेना ईरान को लौट गई। इधर अफ़रासियाब को जो यह सूचना मिली तो उसने उचित अवसर जान कर ईरान पर आक्रमण कर दिया और उसे जीत भी लिया, पर ईरानी प्रजा ने उसकी अधीनता स्वीकार न कर रुस्तम की ओर दृष्टि फेरी और सीस्तान जाकर उससे सब समाचार कह सुनाया। इस पर रुस्तम ने हामावरां के नरेश को लिख भेजा—'माजिन्दरां की जो दुर्गति मेरे हाथों हुई है वह तुमसे अविदित न होगी। अतः मेरा परामर्श यह है कि तुम राजा को बन्धन-मुक्त कर दो, अन्यथा हामावरां का स्मृति-चिन्ह भी शेष न रह सकेगा।"

जब हामावरां के नरेश ने रुस्तम का पत्र पढ़ा तो क्रोधवश आपे से बाहर हो गया और उत्तर-स्वरूप लिख भेजा कि अब कैकाऊस की

मुक्ति तो असम्भव है ही पर यदि तू ने इधर आने की भूल की तो तुझे भी कारागार की हवा खानी पड़ेगी। हामावरां नरेश के उत्तर को पढ़ कर रुस्तम सेना सहित उस प्रदेश में चढ़ दौड़ा।

इधर हामावरां का शासक भी मिस्र तथा बर्बर नरेशों की सहायता प्राप्त कर रण-भूमि में आया। रुस्तम ने सर्व-प्रथम मिस्र के शासक को बन्दी किया, फिर बर्बर-सेना युद्ध-शक्ति के अभाव में भाग खड़ी हुई। जब हामावरां ने अपने सहायकों की यह दुर्गति देखी तो तुरन्त रुस्तम के प्रति सन्धि की इच्छा प्रकट की। इस प्रकार रुस्तम ने कैकाऊस तथा अन्य सामन्तों का हामावरां के कारागार से छुटकारा दिलाया। अब कैकाऊस अपनी छः लाख सेना के साथ ईरान को लौटा।

अफ़रासियाब से युद्ध तथा कैकाऊस की विजय

जब अफ़रासियाब को कैकाऊस के आगमन की सूचना मिली तो वह सेना सहित रण-भूमि में आ उपस्थित हुआ। इस समय उसने अपने सैनिकों से कहा—"कोई रुस्तम का वध करेगा अथवा बन्दी कर ले आवेगा उसे मैं अतुल धन-द्रव्य देने के अतिरिक्त अपनी एक पुत्री भी दूँगा"। फलतः बहुत से योद्धा रुस्तम से युद्ध करने के निमित्त आगे बढ़े परन्तु कुछ तो मारे गये और कुछ भाग खड़े हुए। अन्त में अफ़रासियाब स्वयं रुस्तम के सामने आया पर रुस्तम की मार के कारण साहसविहीन हो रण-भूमि त्याग कर तूरान की ओर भागा।" इस समय रुस्तम तथा उसके साथियों ने इतने तूरानियों को मारा कि उनके शव से एक पर्वत खड़ा हो गया।

अफ़रासियाब को इस प्रकार पराजित करके, कैकाऊस फिर ईरान के सिंहासन पर बैठ कर मनुष्य दानव और परियों पर राज्य करने लगा। उसने देवों को अधीन कर उनके हाथों अनेक राज-भवन तथा अन्य गगन-चुम्बी-अट्टालिकाएँ बनवाईं। इस समय इन पर उसका शासन इतना कठोर हो गया था कि सब के सब उसकी मृत्यु की कामना करते

थे। उसके विनाश की युक्ति सोचते हुए एक देव ने एक दिन उससे कहा "महाराज! आपने समस्त भूमण्डल को तो अपने अधीन कर लिया है, अब यदि चन्द्रमा तथा सूर्य-लोक पर भी अपना अधिकार कर लें तो आपके यश एवं ऐश्वर्य की सीमा न रहे तथा जीवन अतीव आनन्द-पूर्ण हो जाय। कैकाऊस उस देव की चाल में आ गया और आकाश-यात्रा की तैयारी करने लगा।

कैकाऊस की आकाश-यात्रा

कैकाऊस की आज्ञानुसार उस देव ने औक़ाब के चार बच्चों को पकड़ कर उन्हें भली प्रकार मांस भोजन करा कर पाला। जब वह शक्तिशाली हो गये तो यात्रा के चार छः दिन पूर्व उन्हें भोजन देना बन्द कर दिया। तदन्तर उन्हें एक रत्न-जटित सिंहासन से बांध कर राजा को उस पर बिठाया। उस देव ने यह उपाय इस उद्देश्य से किया था कि जब सिंहासन बहुत ऊँचा चला जाय तो वह राजा का वध कर डाले, पर वह सफल मनोरथ न हो सका।

कैकाऊस के सिंहासन पर बैठते ही औक़ाब आकाश की ओर उड़ चले। अपनी शक्ति भर वह ऊपर को चले गये, पर अंततः थक जाने के कारण वे सिंहासन के बोझ को न संभाल सके और वह पृथ्वी पर आ गिरा। पर कैकाऊस सिंहासन को बल-पूर्वक पकड़े हुये था। इस कारण वह सकुशल रहा। पृथ्वी पर गिरते समय वह सिंहासन चीन-प्रदेश पर मँडरा रहा था, अतःराजा चीन के एक बन में जा गिरा और वहीं चालीस दिन पर्यंत दुःख झेलता रहा; अन्त में उसके सेवक-गण उसे खोजते हुए वहाँ जा पहुँचे, और उसे ईरान वापिस ले आये। इस प्रकार अपने हठ का प्रायश्चित करता हुआ कैकाऊस फिर सिंहासन पर बैठा।

सोहराब का जन्म

ईरान से लौटने पर एक दिन रुस्तम आखेट के हेतु एक बन में गया। वहाँ उसने एक बन-गर्दभ को मार कर उससे अपनी क्षुधा शांत की

और वहीं काठी के सहारे सो रहा । इधर कुछ तूरानी अश्वारोही अचानक ही आ निकले । उन्होंने रख़्श को जो देखा तो उनके मुँह में पानी भर आया । उसे झट अपने पाश में बाँध लिया । वे उसे अपने राज्य में ले आये और वहाँ एक घोड़ी के साथ उसका जोड़ा बनाया ।

इधर जब रुस्तम सोकर उठा तो रख़्श को न पाकर बहुत दुखी हुआ । अतः वह उसके टाप-चिह्नों का अनुसरण करता हुआ उसकी खोज में आगे बढ़ा । चलते-चलते वह समनगान में पहुँचा । जब वहाँ के शासक को रुस्तम के आगमन की सूचना मिली तो वह स्वयं ही उसके स्वागत के हेतु आया, और उसे अपने घर चलने को कहा ।

उसके निमंत्रण को स्वीकार करने के बजाय रुस्तम ने क्रोधित हो कर कहा—"तुम्हारे मनुष्य मेरे रख़्श को बन्दी कर लाये हैं; अतः यदि तुम किसी प्रकार का उपद्रव नहीं चाहते तो मेरा रख़्श फौरन मुझे दे दो ।" इस पर समनगान के शासक ने विनम्र होकर कहा—"आप मेरे स्थान पर चल कर उसे पवित्र कीजिए, और आज की रात्रि वहीं सुख-पूर्वक बिताइए । कल आप का रख़्श आपको मिल जायेगा ।" रख़्श को पा जाने की आशा से रुस्तम प्रफुल्लित हो कर उसके राज-प्रासाद को गया ।

रात को जब रंग-भवन से बिदा हो कर रुस्तम अपने शयनागार में गया तो थोड़ी देर ही लेट पाया होगा कि एक परम सुन्दरी रमणी उस भवन में प्रवेश करती दीख पड़ी । जब वह समीप आई तो प्रश्नोत्तर द्वारा रुस्तम ने उसका परिचय एवं अभिप्राय जान लिया । तदन्तर वह वहाँ से चली गई । अपनी प्रेम पात्री तहमीना की प्रार्थना के अनुसार रुस्तम ने उसके पिता समनगान के शासक की अनुमति प्राप्त की और उसके साथ विवाह कर लिया । ईश्वर की कृपा से उसने गर्भ धारण किया । दूसरे दिन रुस्तम को अपना रख़्श जो मिला तो वह सीस्तान जाने को उद्यत हो गया । तहमीना उसके वियोग से दुखी होकर बहुत रोई, पर विवश थी । चलते समय रुस्तम ने उसे एक मोहरा दिया और कहा—'यदि पुत्र हो तो उसकी भुजा पर बाँध देना, और यदि पुत्री हो तो उसके

केशों में गूँथ देना।" इतना कह कर तथा उसे धीरज देकर रुस्तम वहाँ से विदा हुआ।

नियत कालोपरांत तहमीना ने एक पुत्र को जन्म दिया जो आकृति में ठीक रुस्तम के समान था। तहमीना ने उसका नाम सोहराब रक्खा और यत्न-पूर्वक उसका लालन-पालन करने लगी। उसके बल को देख कर उसकी दश वर्ष की ही अवस्था में समनगान के लोग उससे भय खाने लगे।

इधर रुस्तम ने कुछ रत्न तहमीना की भेंट स्वरूप भेजे और पुछवाया कि उसने पुत्र का जन्म दिया है अथवा पुत्री को इस पर तहमीना ने कहला भेजा कि आपके पुत्री हुई है।

नियत कालोपरांत एक दिन सोहराब अपनी माता के पास आकर बोला—"माँ! लोग मुझ से मेरे पिता का नाम पूछते हैं तो मुझ से कुछ भी कहते नहीं बनता! तू मुझे सचमुच बतादे कि मैं किस का पुत्र हूँ।" इस पर तहमीना ने कहा—"मेरे लाल! तू जगत-ख्यात वीर-शिरोमणि रुस्तम का पुत्र है जिसके भय से देव-दानव भी भर पेट अन्न नहीं खाते।" माँ की बात सुन कर सोहराब ने पूछा—"फिर किसी सेवक द्वारा तू मेरे पिता के पास मेरा समाचार क्यों नहीं पहुँचा देती।" इस पर तहमीना ने उत्तर दिया—"तेरा समाचार पाते ही तेरा पिता तुझे अपने पास बुला लेगा, और मैं आधार-विहीना हो तड़प-तड़प कर मर जाऊँगी।" माँ की बात सुनकर सोहराब मचल ही तो गया और बोला "मैं तो पिता के पास अवश्य जाऊँगा।" पुत्र का बाल-हठ देख कर तहमीना ने कहा—"मुझे अफरासियाब की ओर से तेरे अनिष्ट की आशंका है। वह तेरे पिता के हाथों कई बार पराजित हो चुका है।" इस पर सोहराब ने कहा—"रुस्तम के समान पिता और मेरे समान पुत्र जहाँ हो वहाँ कोई कर ही क्या सकता है! मैं ईरान तथा तूरान को जीत कर अपने पिता को सिंहासनारूढ़ करूँगा तथा हर घड़ी उसकी सेवा किया करूँगा।" इतना कह कर वह अपने नाना के पास आया

और अस्त्रादि लेकर अश्वशाला में गया और रख़श के बछेड़े को अपने योग्य समझ कर उसे सवारी के लिये साथ लिया।

सोहराब द्वारा ईरान-विजय का प्रयत्न

अश्व-शाला से लौट कर सोहराब सेना एकत्रित करने लगा। उधर जब अफरासियाब को सोहराब के ईरान आक्रमण की सूचना मिली तो उसने उसे बुला कर प्रसन्नता प्रकट की और कहा "तुम ईरान नरेश को सिंहासन से अवश्य उतारो। मैं धन-जन से तुम्हारी सहायता करूँगा।" इतना कह कर उसने बहुत सा धन एवं सेना उसे दी! इसके पश्चात् उसने अपने दो विश्वासी सामन्त हूँमा तथा बारमाँ को बुला कर कहा— "तुम सोहराब के साथ जाओ, पर यह ध्यान रहे कि रुस्तम और सोहराब एक दूसरे का परिचय न जान पावे। मुझे पूरा विश्वास है कि रुस्तम कैकाऊस की ओर से सोहराब के साथ युद्ध करने के लिये आयेगा, और सोहराब उससे अधिक शक्तिशाली होने के कारण उसे पराजित करेगा। रुस्तम की मृत्यु के पश्चात् तुम किसी उपाय से सोहराब का भी बध कर डालना, जिस से मैं निर्भीक होकर ईरान-विजय करके उसका शासक बनूँ।" हूँमा तथा बारमाँ को इस भाँति समझा कर उन्हें सोहराब के पास जाने का आदेश किया। वे दोनों सुहराब की सेना में आकर मिल गये और उसके विश्वास-पात्र बन गये।

इस प्रकार सेना सुसज्जित कर सोहराब ईरान की ओर चल पड़ा। मार्ग में उसे एक सीमा-गढ़ मिला, जिसका संरक्षक हजीर नाम का एक योद्धा था। वह तूरानी सेना को आक्रमणकारी होते देख कर उसके सामने आ डटा और रण-भूमि में पहुँच कर उसने अपने प्रतिद्वन्द्वी को ललकारा। इधर से सोहराब उससे युद्ध के किंचित आगे बढ़ा। दोनों वीरों के सामने होते ही हजीर ने अपने भाले का प्रहार किया। जब भाला सोहराब के शरीर में घुस गया तो उसने उसे घोड़े की पीठ पर से खींच लेना चाहा, पर सफल-मनोरथ न हो सका। अब सोहराब

की बारी आई।" उसने भाले के एक ही प्रहार में हजीर को उसके घोड़े की पीठ पर से उठा कर पृथ्वी पर दे पटका और बन्दी बनाकर उसे सेना में भेज दिया।

हजीर के बन्दी होने की बात सुनते ही उसके एक सेना-नायक कज़दहुम की गिर्द आफ़रीद नाम्नी रण-दक्ष वीर पुत्री तुरन्त शस्त्रास्त्र से सुसज्जित होकर रण-भूमि में आई। इसके वीरवेश को देख कर सोहराब चकित हो गया और यह जानने का प्रयत्न करने लगा कि यह स्त्री है अथवा पुरुष। इसी समय गिर्द आफरीद ने बाण-वर्षा आरम्भ कर दी। बाणों को विफल करने के हेतु सोहराब ने ढाल को मुख के सामने कर लिया और भाला द्वारा उसे पृथ्वी पर ला गिराया। अपनी अवस्था का ज्ञान होते ही गिर्द आफ़रीद अपनी तलवार से भाले को काट कर फिर घोड़े पर सवार हो गई, और तलवार ले कर सोहराब पर झपटी। सोहराब ने उसे अपनी पाश से बन्दी कर जो खींचा तो वह फिर घोड़े पर से पृथ्वी पर आ गिरी। इस बार उसके शिर का मुकुट धरती पर गिर गया जिससे उसके केश वायु के झोंकों से लहराने लगे।

सोहराब उसकी सुन्दरता देख कर मोहित हो गया। इसी समय गिर्द आफ़रीद ने कहा "यदि तुम मुझे मुक्त कर दो तो मैं तुम्हें बहुत सा धन द्रव्य दूँ, क्योंकि मैं ही इस गढ़ की अधिकारिणी हूँ। सोहराब उसके प्रस्ताव से सहमत हो गया और उसने उसे मुक्त कर दिया।"

जब गिर्द आफ़रीद बन्धन-मुक्त हो कर अपने गढ़ के भीतर आई तो उसने अपने पिता से सारी कथा कह सुनाई। उन लोगों ने सोहराब के बल की कथा सुन कर यही निश्चय किया कि इस गढ़ को त्याग देना ही उत्तम होगा। अतः सब लोग रातों रात ईरान की राजधानी में जा पहुँचे।

इधर प्रातःकाल जब तूरानियों को गढ़ में से किसी का शब्द न सुन पड़ा, तो उन्होंने गढ़ के द्वार को तोड़ करके भीतर प्रवेश किया

परन्तु उसे निर्जन पाकर सोहराब को बड़ा आश्चर्य हुआ; साथ ही अपनी प्रेयसी के विलुप्त हो जाने से उसे आन्तरिक वेदना भी हुई।

उधर गिर्द आफ़रीद का पिता जब राज सभा में पहुँचा तो उसने सोहराब के आगमन की सूचना देकर उसके बल तथा बुद्धि की प्रशंसा की और इसके प्रमाण में उसने हजीर के बन्दी होने तथा गिर्द आफ़रीद के पराजित होने की बात कही। कज़दहुम द्वारा सोहराब की बात सुन कर कैकाऊस बड़ा भयभीत हुआ और उसने रुस्तम के नाम तुरन्त ही एक पत्र लिखवाया और गेव को उस पत्र को देकर यह कहा "जितना शीघ्र हो सके तू रुस्तम को ले आ।"

जब गेव कैकाऊस का पत्र लेकर रुस्तम के निकट गया और रुस्तम ने उसे पढ़ा तो उसे बड़ा अचम्भा हुआ। उसने गेव से सोहराब की आकृति पूछी। जब उसे यह ज्ञात हुआ कि उसका मुख ठीक साम की भाँति है तो वह सोचने लगा कि कहीं ऐसा तो नहीं है कि यही वीर तहमीना का पुत्र हो, फिर सोचने लगा "तहमीना ने तो कहला भेजा है कि मेरे पुत्री हुई है।" वह इसी ध्यान में मग्न था कि गेव ने कहा—"शाहंशाह की आज्ञा है कि तुम शीघ्र ही ईरान पहुँच जाओ।" इस पर रुस्तम ने कहा "एक आध दिन तुम विश्राम कर लो फिर चलेंगे।" अतः उसने गेव को सात दिन तक अपने अतिथि-सत्कार से सम्मानित किया।

आठवें दिन गेव के कहने पर रुस्तम ईरान आया। जब वह कैकाऊस के सामने उपस्थित हुआ तो राजा ने कहा—"मैंने तो तुमसे अति शीघ्र आने को कहा था, और तुमने इतना विलम्ब कर दिया। तुमको क्या, चाहे राजा के प्राण रहें अथवा जावें। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि तुम मेरे मारे जाने के पश्चात् ईरान का राज-सिंहासन हस्तगत करना चाहते हो। मुझे ऐसे सहायकों तथा वीरों की आवश्यकता नहीं है।"

इतना कह कर राजा ने तोस से कहा, "तुम इन दोनों को ले जा

कर सूली पर चढ़ा दो।" राजा की आज्ञा के अनुसार तोस ने गेव तथा रुस्तम का हाथ पकड़ा। तोस का यह कर्म तथा अपना अपमान रुस्तम को असहनीय हो गया। अतः उसने तोस को ऐसा तमाचा मारा कि वह भूमि पर लोट गया। तदन्तर उसने कैकाऊस से कहा, "मुझे न तो तुम्हारा भय है और न तुम्हारी सेना का। आज तुम मेरे ही कारण इस सिंहासन पर बैठे हो। इस पर तुम्हारा यह साहस कि तुम रुस्तम को सूली चढ़ाने की आज्ञा देते हो। यदि तुम्हें सूली देने की इतनी प्रबल इच्छा है तो मैं तो जाता हूँ और जब सोहराब तुम्हारे पास आये तो उसे सूली देना।" इतना कह कर रुस्तम रख्श पर सवार हो कर सीस्तान की ओर चल दिया।

रुस्तम को क्रोधित हो कर जाते देख सारी जनता के प्राण सूख गये, तब गोदर्ज ने जाकर कैकाऊस को समझाया कि ऐसी विपदा के समय आपने रुस्तम को इस प्रकार क्रोधित कर दिया। अब बताइये कि सोहराब के साथ युद्ध करने के लिये कौन जाएगा। गोदर्ज़ की बात सुन कर कैकाऊस पश्चाताप करता हुआ बोला कि अच्छा अब तुम जाओ और शीघ्र रुस्तम को मना कर ले आओ। अतः गोदर्ज़ अन्य सभासदों के साथ रुस्तम के समीप जाकर बहुत रोया गिड़गिड़ाया तथा अनेक प्रकार से उसे समझा-बुझा कर वापिस ले आया।

रुस्तम के फिर राज-सभा में पदार्पण करने पर कैकाऊस स्वयं सिंहासन से उतर कर उसके पास गया और उसे गले से लगा कर अपनी भूल की क्षमा माँगने लगा। इस पर रुस्तम भी रो पड़ा। रुस्तम के लौट आने की ख़ुशी में उस दिन कैकाऊस ने एक रंग-मंच बनवा कर सारी रात्रि अमोद-प्रमोद में बिताई।

युद्ध के लिये प्रस्थान

दूसरे दिन कैकाऊस अपनी सेना लेकर रण-भूमि की ओर चला। जब गढ़ के निकट पहुँचा तो उसने सेना को वहीं डेरा डालने की आज्ञा दी।

रात के समय रुस्तम अपने शिविर में से निकल कर सोहराब की सेना में लुकता छिपता पहुँचा। सोहराब के शिविर के समीप पहुँच कर वह उसको ध्यानपूर्वक देखने लगा। उसने देखा कि उसका मुख ठीक साम की भाँति है और उसके शरीर की गठन उसके अपने शरीर से भी कहीं अधिक सुदृढ़ है। इसी बीच ज़िन्दा नाम के एक व्यक्ति ने उसे देख लिया। वह बाहर निकल कर रुस्तम के समीप आया ही था कि रुस्तम ने एक घूँसा ऐसा कस कर जमाया कि वह वहाँ का वहीं ठंडा हो गया। उसके धराशायी होते ही रुस्तम वहाँ से खिसक गया और अपनी सेना में जा पहुँचा। इधर एक दूसरा व्यक्ति किसी कार्यवश उस ओर से आ निकला। जब उसने एक निष्प्राण शव को पड़ा देखा तो झट मशाल लाकर उसको देखने लगा। उसने देखा कि यह शव और किसी का नहीं स्वयं ज़िन्दा का है तो उसने इसकी सूचना सोहराब को दी। जिन्दा की मृत्यु का समाचार पाकर सोहराब अत्यधिक क्रोधित हुआ और उसने प्रतिज्ञा कि यदि कल मैं इस हत्या का बदला ईरानियों के रक्त से न लूँ तो मेरा नाम सोहराब नहीं।

रुस्तम सोहराब युद्ध

दूसरे दिन प्रातःकाल होते ही सोहराब ने हूमा तथा बारमा को सेना सुसज्जित करने की आज्ञा देकर स्वयं हजीर के पास आकर बोला "यदि तुम मेरे प्रश्नों का ठीक ठीक उत्तर दे दोगे तो मैं तुम्हें मुक्त कर दूँगा अन्यथा तुम्हें यमपुरी का मार्ग दिखा कर छोडूँगा।" इसके पश्चात् जब उसे हजीर के सत्य कहने का विश्वास हो गया तो वह उसे गढ़ के सब से ऊँचे स्थान पर ले गया।

वहाँ पहुँचकर वह एक-एक करके समस्त शिविरों के स्वामी का परिचय पूछने लगा जिसे हजीर ने सत्य-सत्य सब बता दिया। अन्त में जब सोहराब ने कहा—"अच्छा अब यह बताओ कि उस शिविर में जिस के सामने काविया नी पताका गड़ी हुई है कौन नायक रहता है।" तो

हजीर मन में सोचने लगा कि यदि मैं रुस्तम का नाम बतला दूँ तो कहीं ऐसा न हो कि वह एकाएक उस पर आक्रमण कर बैठे और उसका बध कर डाले अतः उसने कहा—"यह कोई चीनी-नायक है और मैं उसके नाम से परिचित नहीं हूँ।" उसकी बात सुन कर सोहराब ने कहा—"मैं रुस्तम का पता जानना चाहता हूँ।" सोहराब की इस बात से हजीर की शंका और भी दृढ़ हो गई और उसने संकल्प कर लिया कि चाहे मैं मारा ही क्यों न जाऊँ पर रुस्तम का भेद इसे न बताऊँगा। इस पर दृढ़ होकर सोहराब के प्राणहरण की धमकी देने पर भी हजीर ने रुस्तम का चिन्ह न बताया। अन्त में सोहराब विवश हो कर अपने शिविर में लौट आया, और कवच तथा शस्त्रास्त्र धारण कर वह रण भूमि में आ डटा और अपने प्रतिद्वन्दी को ललकारने लगा।

उसके सिंह गर्जन को सुन कर ईरानी सेना के किसी योद्धा का साहस न हुआ कि वह उसके सम्मुख आता। अतः कैकाऊस ने रुस्तम से कहला भेजा—"अब तुम्हीं युद्ध के लिये जाओ।" फलतः रुस्तम शस्त्रों से सुसज्जित होकर सोहराब के सम्मुख आ डटा।

रुस्तम उसके सामने आते ही अपने गत युद्धों का पराजय पूर्ण वर्णन करने लगा। इस पर सोहराब ने मन में सोचा कि माता के कथनानुसार इस वीर के शरीर में रुस्तम के समस्त चिन्ह दीख पड़ते हैं, अतः अनुमानतः यह रुस्तम ही है। इस पर रुस्तम ने सर्वदा की भाँति कहा—"मैं तो रुस्तम का एक तुच्छ सेवक हूँ। मुझ में और उसमें आकाश-पाताल का अन्तर है।" उसके इतना कहने पर भी सोहराब को विश्वास न हुआ और उसने फिर दोबारा उससे पूछा—"यदि तुम रुस्तम हो तो सत्य को प्रकट कर दो।" परन्तु फिर भी रुस्तम ने अपने को छिपाये ही रक्खा। अन्त में सोहराब ने विवश होकर उसे शस्त्र उठाने को कहा।

फिर क्या था दोनों ओर से भालों का प्रहार आरम्भ हो गया।

प्रत्येक प्रहार पर भालों में से चिनगारियाँ निकल-निकल कर वीरों के मन को उत्साहित करने लगीं। भालों की नोक टूट जाने पर सोहराब ने तलवार खींची, फलतः रुस्तम भी अपनी खड्ग निकाल कर उस पर टूट पड़ा। दोनों वीर अपने-अपने रण कौशल के अनुसार असि-प्रहार करते और साथ ही अपनी रक्षा का भी ध्यान रखते। खड्ग के प्रहारों से दोनों वीरों के कवच टूक-टूक हो गये। अन्त में असि भी टूट गई।

असि हीन होते ही दोनों वीरों ने बल-परीक्षा करनी आरंभ की। रुस्तम ने सोहराब का पट बन्द पकड़ करके इतना बल प्रयोग किया कि यदि वह उस बल का प्रयोग किसी पर्वत पर भी करता तो निःसंदेह वह पर्वत अचल से चल हो जाता, पर धन्य है सोहराब! कि अपने घोड़े की पीठ पर टस से मस तक न हुआ। इसके पश्चात् सोहराब ने भी रुस्तम का पट बन्द पकड़ उसे भूमि पर लाना चाहा परन्तु वह भी निष्फल रहा।

अपने बल को निरर्थक होते देख कर सोहराब ने रुस्तम के एक गदा ऐसी मारी कि वह तिलमिला कर दूर हट गया। रुस्तम की पीड़ा का उपहास करते हुये सोहराब ने कहा—"क्या इसी बल पर तुम्हें अहंकार था जो मेरे साथ युद्ध करने के लिए चल पड़े।" इस पर रुस्तम ने कहा—"अच्छा अब तो संध्या हो चुकी है, कल पर इस बात का निर्णय छोड़ता हूँ कि दोनों में से कौन शक्ति-शाली है।"

इसके पश्चात् सोहराब अपनी गदा ले ईरानी सेना के भीतर घुस पड़ा और प्रलय-काण्ड मचाने लगा। उधर रुस्तम भी खड्ग हाथ में ले कर टूट पड़ा और तूरानियों को नष्ट-भ्रष्ट करने लगा। इसी बीच रुस्तम को यह ध्यान आया कि कहीं सोहराब कैकाऊस पर आक्रमण न कर बैठे, अतः वह तूरानी सेना में से लौट कर सोहराब से बोला, "यदि अभी तेरी इच्छा युद्ध की हो तो फिर आ। सोहराब भी बहुत थक गया था अतः रुस्तम के सम्मुख न आकर अपनी सेना में चला गया।

इधर रुस्तम भी अपने शिविर में लौट कर अपने भाई ज़वारा को बुलाने ही को था कि एक सैनिक ने आकर कहा, "आप को महाराज याद कर रहे हैं।" अतएव वह उनके समीप जाकर युद्ध की सारी बातें बता कर फिर अपने शिविर में लौट आया और ज़वारा से बोला, "यदि मेरी मृत्यु हो जाय तो तुम लोग उससे युद्ध न करना, प्रत्युत सेना सहित सीस्तान जाकर माता पिता को समझाना कि भाग्य के आगे किसी का वश नहीं चलता। अतएव तुम लोग धीरज धरो। इसके पश्चात् वह ईश्वर से प्रार्थना करता हुआ बोला, "हे दयामय, अब मैं तेरी ही शरण में हूँ। तू मुझे इस पर विजयी कर के मेरी लाज रख।" इतना कह कर वह अपने बिछौने पर लेट कर सो गया।

उधर जब सोहराब अपने शिविर में गया तो सोचने लगा "माता जी के कथनानुसार मेरा मन बार-बार यही कहता है कि यही वीर रुस्तम है, पर ईश्वर जाने क्या होने वाला है कि यह मनुष्य अपने को इस प्रकार छिपाता ही जाता है।" सोहराब को चिन्ता-मग्न देख कर हूमा तथा बारमा ने इसका कारण पूछा तो सोहराब ने उनसे सच-सच कह दिया। तब हूमा तथा बारमां ने कहा, "आप किस भ्रम में पड़े हुये हैं। यह रुस्तम है ही नहीं क्योंकि उसका चलन यह है कि जब वह रण-क्षेत्र में आता है तो ऊँचे कंठ-स्वर में अपने प्रतिद्वन्दी को अपना नाम बतला कर परिचय देता है। जिससे उसका शत्रु भय-भीत हो जाय और वह सहज ही में उसे पराजित कर देता है।" हूमां तथा बारमां के कपट-पूर्ण वचनों से सोहराब की चिन्ता किसी अंश तक कम तो हुई, पर वास्तव में उसका मन चंचल ही बना रहा और बार-बार वह यही सोचता रहा कि हो न हो यही रुस्तम है। इसी उधेड़ बुन में उसे नींद आ गई और फिर सवेरा हो गया।

युद्ध का प्रथम दिवस तथा रुस्तम की पराजय

दूसरे दिन सूर्योदय होते ही दोनों वीर अपने-अपने वाहनों पर

सवार हो समर-भूमि में आ डटे। इस समय सोहराब का मन चञ्चल हो उठा, अतः उसने रुस्तम से कहा, "मेरी हार्दिक इच्छा यही है कि हम दोनों संधि कर लें क्योंकि मेरा मन बार-बार यही कहता है कि इस युद्ध से कहीं संधि उत्तम होगी। इसके अतिरिक्त तेरे शरीर में रुस्तम के सभी चिन्ह प्रत्यक्ष दिखलाई देते हैं। अतः मुझे ऐसा भासित होता है कि तुम्हीं ज़ाल के पुत्र रुस्तम हो। अब कृपया तुम अपना नाम बतला दो।" इस पर रुस्तम ने विचार किया कि कहीं ऐसा न हो कि यह वीर कपट-व्यवहार करें, अतः उसने कहा, "इन बातों का परित्याग कर अब तुम घोड़े से उतर कर मल्ल-युद्ध के लिये तत्पर हो जाओ।" निदान रुस्तम के हठ से विवश हो कर सोहराब भी घोड़े से उतर कर उसके सम्मुख आया।

सोहराब के युद्ध-स्थान में आते ही रुस्तम उससे गुथ गया। अब दोनों वीर अपनी-अपनी कला का प्रदर्शन करने लगे। अन्त में सोहराब अवसर पाकर रुस्तम को पटक कर उसकी छाती पर चढ़ बैठा और चाहता ही था कि अपनी कटार से उसका हृदय विदीर्ण कर डाले, कि इतने में रुस्तम ने चिल्ला कर कहा, "हाय! तुम यह क्या अन्याय कर रहे हो। मेरे देश की यह प्रथा है कि जब कोई वीर अपने शत्रु को दो बार पटक लेता है तो उसका बध करता है।" अतः नादान बालक रुस्तम की छाती से उतर पड़ा और दूसरी बार मल्ल-युद्ध की प्रतीक्षा करने लगा। परन्तु रुस्तम ने कहा, "अब आज नहीं कल फिर युद्ध होगा।" अतएव दोनों संग्राम-भूमि से लौट कर अपने अपने शिविर में जा पहुँचे।

जब हूमाँ ने सोहराब से सब बातें सुनीं तो उसने कहा, "उस पराजित वीर ने तुम से छल करके अपने को बचा लिया। अब आप भविष्य में ऐसी भूल कभी न करना।"

इधर जब रुस्तम अपने डेरे में आया तो रो-रो कर ईश्वर से प्रार्थना करके कहने लगा, "हे भगवन्, तू मेरा पूर्व बल फिर मुझे दे दे,

जिससे मैं अपने शत्रु को पराजित कर सकूँ। किसी समय रुस्तम में इतना बल था कि उसके पैदल चलने से पृथ्वी फट जाती थी, अतः उसने विवश हो कर ईश्वर से प्रार्थना की थी कि तू मेरे बल को थोड़ा कम कर दे जिससे मैं पृथ्वी पर चल सकूँ। अपने पूर्व बल की प्राप्ति की प्रार्थना करने के पश्चात् रुस्तम सो गया।

युद्ध का द्वितीय दिवस—सोहराब का वध तथा रुस्तम का विलाप

दूसरे दिन प्रातः-काल जब रुस्तम सो कर उठा तो अपने को पूर्व-शक्ति-सम्पन्न पा कर अत्यन्त प्रसन्न हुआ, और झट शस्त्र-धारण कर ईश्वर की प्रार्थना की, तदनन्तर रख़्श पर सवार होकर रण-स्थल में आ पहुँचा। उधर सोहराब भी बड़ी प्रसन्नता के साथ समर भूमि में पदार्पण कर के बोला—"कल तू मुझसे छल कर अपने प्राण बचा ले गया। पर आज मैं तेरी एक न सुनूँगा।"

इतनी बात कहने के पश्चात् दोनों भिड़ गये। पहिले तो बड़ी देर तक दोनों बल प्रयोग करते रहे। परन्तु अन्त में रुस्तम ने अपना बल भरपूर प्रयोग कर सोहराब को शिर से ऊँचा उठा कर धरणी पर पटक दिया, फिर तुरन्त उसकी छाती पर चढ़ कर अपनी कटार द्वारा उसका हृदय विदीर्ण कर डाला।

इस समय सोहराब ने कहा—"हाय! मैं यहाँ किस अभिप्राय से आया था और क्या हो गया? मुझ जैसा भाग्यहीन और कोई न होगा, कि अपने पिता का दर्शन भी न कर सका।" इस पर रुस्तम ने उसके पिता का नाम तथा चिह्न पूछा—फिर यह सब ज्ञात कर ढाढ़े मार कर रोने लगा। "हा पुत्र! मैं ही रुस्तम हूँ! हे विधाता! तू ने यह क्या दिखाया कि मैंने अपने हाथों अपने हृदय को कटार मार कर विदीर्ण किया!" इतना कह कर वह सोहराब से लिपट गया।

इधर जो ईरानी सेना ने यह देखा तो तुरन्त उधर ही को दौड़ पड़ी।

जब जवारा तथा अन्य सामन्तों को यह ज्ञात हुआ कि घायल वीर अन्य कोई नहीं। स्वयं रुस्तम का पुत्र है तो सब चिल्ला-चिल्ला कर रोने लगे।

इसी बीच रुस्तम को याद आया कि कैकाऊस के पास विषहर व्रणविरोपण औषधि है, अस्तु उसने गोदुर्ज़ से कहा—"तुम राजा के पास जाकर कहो कि रुस्तम की प्रार्थना है कि आप थोड़ी सा मरहम दे दीजिये जिससे उसके पुत्र के प्राण बच जायें। उसके नीरोग होने पर मेरे अतिरिक्त आप के एक और सेवक की अभिवृद्धि होगी जो आजन्म बिना-दामों का रह कर हर घड़ी आपकी सेवा तथा रक्षा किया करेगा।"

गोदुर्ज़ के चले जाने के पश्चात् सोहराब ने कहना आरम्भ किया, "जिस समय मैं युद्ध के लिये चला मेरी माता ने बुला कर मुझे आप के समस्त चिह्नों को भली-भाँति बतला दिया था, जिसके अनुसार मैंने आप को पहिचान कर आप से आप का नाम बारबार पूछा। परन्तु दुर्भाग्यवश आपने अपना नाम नहीं बताया। फिर भला कौन बताता! मैंने नीच हीजर से भी आप के विषय में बहुत पूछा पर उसने भी आप का कुछ पता न दिया। सच है कर्म की गति को कोई टाल नहीं सकता।"

सोहराब के दुःख-पूर्ण वृतान्त को सुन कर जवारा तथा रुस्तम फूट-फूट कर रोने लगे, जिसे सुन कर उस स्थान के पशु-पत्ती भी आँसू बहाने लगे।

इसी बीच फिर सोहराब ने कहना आरम्भ किया—"आप लोगों को विदित होना चाहिये कि संसार में कोई अमर होकर नहीं आया है; अतः आप लोग अपने मन को शान्त कर के मेरी कुछ इच्छाओं को सुन लीजिये।" इस पर रुस्तम ने रोना कम कर के उससे कहा "हे पुत्र! कहो तुम्हारी क्या इच्छा है? मैं अपने प्राण दे कर भी उसे पूर्ण करने का यत्न करूँगा।"

इस पर सोहराब ने कहा—"मेरी मृत्यु के पश्चात् आप तूरान पर आक्रमण न करें तथा हूँमा और बारमाँ को किसी प्रकार का कष्ट न दें; क्योंकि वह मेरी जन्म-भूमि है।" इतना सुन कर रुस्तम ने उसे स्वीकार किया और फिर विलाप करने लगा।

उधर जब गोदुर्ज़ ने कैकाऊस को रुस्तम की अवस्था की बात बता कर मरहम माँगी तो उसने कहा—"तुमने स्वयं सुना है कि रुस्तम ने मुझे कितनी कड़ी बातें कही हैं। इसके अतिरिक्त सोहराब ने भी मुझे बहुतेरे कटु वचन कहे हैं, फिर भला मैं किस प्रकार ऐसे शक्ति-शाली शत्रु के लिये औषधि दे सकता हूँ।" राजा से निराश हो कर गोदुर्ज़ ने लौट कर रुस्तम से कहा "उस हठी ने मरहम नहीं दिया।" यह सुन कर रुस्तम स्वयं दौड़ता हुआ कैकाऊस के पास गया तो उसे सूचना मिली कि वह अन्तःपुर में है। बड़ी देर के पश्चात् जब वह बाहर आया तो रुस्तम ने उससे सारा वृतान्त कहा।

इसी समय एक मनुष्य ने आकर कहा कि सोहराब के प्राण-पखेरू उड़ गये। इस अशुभ सूचना को पाकर रुस्तम रोता हुआ वहाँ आया और पुत्र के शव से चिपट कर कहने लगा—"हे पुत्र! इस पापी पिता से इतनी घृणा करते थे कि उस के आने के पूर्व ही चल दिये।"

इसी प्रकार बहुत देर तक रोने-धोने के पश्चात् रुस्तम ने सोहराब के शव को ताबूत में रखा और शिविर के निकट आया, पश्चात् समस्त वस्तुओं को जला कर फिर रोने लगा। इसी समय कैकाऊस भी आकर उसके सामने शोक प्रगट करने लगा और बहुत सी ज्ञान-पूर्ण बातें कह कर उसे धीरज बँधाने लगा।

कैकाऊस की बात सुन कर रुस्तम ने कहा—"महाराज! जो होना था सो तो हो ही गया। अब आप से केवल यही एक प्रार्थना है कि मेरे मृत-पुत्र की यह अन्तिम इच्छा थी कि ईरानी नरेश तूरान पर आक्रमण-कारी न हों। इसके अतिरिक्त उसने यह भी कहा है कि हूँमा तथा बारमाँ को किसी प्रकार का कष्ट न होने पावे; अतः आप से अब यही

प्रार्थना है कि अब आप हूँमा तथा बारमां और उनके सैनिकों को सकुशल चले जाने दें।" रुस्तम की बात सुन कर कैकाऊस ने कहा—"तुम्हारे शोकातुर होने से मैं भी शोक-ग्रस्त हो गया हूँ अतः मैं तुम्हारे कथनानुसार तूरान पर आक्रमण कभी न करूँगा।"

इसके पश्चात् रुस्तम ने ज़वारा को हूँमा व बारमां के साथ जीहूँ नदी तक जाने को कहा। वह तूरानी नायकों को नदी किनारे तक पहुँचा कर लौट आया।

रण-भूमि से चल कर जब रुस्तम सीस्तान के निकट पहुँचा तो ज़ाल इस दुःखद संवाद की सूचना पा कर रोता पीटता अपने पौत्र के शव के निकट आया और कभी रुस्तम को पकड़ कर विलाप करता तो कभी सोहराब के शव से लिपट कर चीत्कार करता।

सारांश यह कि समस्त प्राणी इसी प्रकार रोते-कलपते सीस्तान पहुँचे। वहाँ रूदाबा ने जो पौत्र के शव को देखा तो अचेत हो कर गिर पड़ी। चेत आने पर सोहराब के शरीर तथा बाहु-बल की बात कह कह कर विलाप करने लगी। इसी प्रकार बड़ी देर तक सब शोक-मग्न रहे। अन्त में सबने रोते कलपते सोहराब के मृतक संस्कार को सम्पन्न किया और घर वापस हुआ।

इस शोक से रुस्तम का हृदय इतना शिथिल हो गया कि वह घर छोड़ कर कहीं न जाता था और एकान्त में बैठ कर पुत्र की याद में आँसू बहाया करता था।

शाहनामा

तृतीय भाग

रुस्तम के पुत्र फरायज़ का जन्म—तहमीना की मृत्यु

सोहराब की मृत्यु के एक मास पर्यन्त रुस्तम के पिता ज़ाल ने जब उसकी वह क्षीण दशा देखी तो उसने अपनी पत्नी से तहमीना के लाने के विषय में परामर्श किया। उसकी स्वीकृति मिलने पर वह थोड़ी सी सेना लेकर अपनी पुत्र-वधू को लाने के लिये चल पड़ा। जब ज़ाल समनगान पहुँचा और उसके आगमन की सूचना तहमीना को मिली तो वह पुत्र-वियोग के अपार दुःख से इतनी विह्वल हो गई कि कर्त्तव्या-कर्त्तव्य-शून्य हो राज-महल के बाहर निकल दौड़ी और अपने श्वसुर से चिपट कर सोहराब का बल तथा वीरता का बखान बिलख-बिलख कर करती हुई विलाप करने लगी। इसको सुन कर मनुष्य तो क्या पशु-पक्षी भी शोकाभिभूत हो शिर धुनने लगे। तहमीना और ज़ाल दोनों ही सोहराब की याद में इसी भाँति कुछ काल पर्यन्त विलाप करते रहे। जब उन लोगों के शोक का आवेग कुछ कम हुआ तो ज़ाल ने अपनी पुत्र-वधू के प्रति ये शब्द कहे—"बेटी तहमीना! आज तुम्हारे पास मैं इस उद्देश्य से आया हूँ कि तुमको अपने साथ ले जाऊँ और उस राज-महल को, जो इस समय श्मशान से भी अधिक शून्य तथा भयानक प्रतीत होता है एक बार फिर से आबाद करूँ। प्रिय पुत्र रुस्तम ने सोहराब की मृत्यु के पश्चात् एकान्तवास ही ग्रहण कर लिया है। यदि तुम चलोगी तो वह फिर से इस संसार में प्रवेश कर सकेगा।"

तहमीना अब तक रो रही थी, उसके नेत्र पुत्र-वियोग के दुःखद आँसुओं से भीगे हुये थे। क्रोधावेग के कारण उसके आँसू एक दम सूख गये और वह पैरों से कुचली हुई सर्पिणी की भाँति फुफकारती हुई बोली:—

"पिता जी! क्या कहा? मैं चलूँ? कहाँ? सीस्तान? और फिर किसके पास? उस पुत्र-हन्ता रुस्तम के पास? जिसने कि क्रूरता के साथ अपने पुत्र का बध किया, जिसने कि स्वामि-भक्ति का आडम्बर रच कर युद्ध-प्रथा का उल्लंघन करते हुये मेरे हृदय के टुकड़े को चूर-चूर कर दिया। जिस छल तथा अन्याय-पूर्वक उस नन्हें से बालक के टिमटिमाते हुये जीवन-दीप को सर्वदा के लिये निर्वासित कर दिया। नहीं पिता जी नहीं। मैं वहाँ कदापि नहीं जा सकती। मैं ऐसे हत्यारे का मुख देखना भी घोर पाप समझती हूँ। पिताजी, आप लौट जाइये और मुझे अपनी अवस्था तथा भाग्य पर यहीं आँसू बहाने दीजिये। मैं वहाँ जाकर तथा उस हत्यारे का मुख देख कर अपने दुख को दूना नहीं करना चाहती। हे जगदीश्वर! क्या अब भी तेरी इच्छा पूर्ण नहीं हुई? क्या तू अभी कुछ और दिखाना चाहता है? नहीं-नहीं, मैं अपनी सामर्थ्य भर तो तेरी इच्छाओं का भरसक प्रतिरोध करूँगी। अन्यथा विधाता के क्रूर करों द्वारा अंकित भाग्य-लिपि का भोग भोगूँगी ही।" इतना कह कर वह फिर बिलख-बिलख कर रोने लगी। ज़ाल फिर समझाने लगा—"धीरज धरो बेटी! यह मैं मानता हूँ कि रुस्तम पुत्र-हन्ता है, पर उसने यह हत्या अनजान में की है। वह इस हत्या का दण्ड सहने और प्रायश्चित करने को उद्यत है। तुम चलो, जो कुछ भी प्रायश्चित तथा दण्ड उसके लिये नियत करोगी, वह उसे सहर्ष स्वीकार करेगा।"

तहमीना उत्तर देती हुई बोली—"क्या कहा? वह दण्ड भुगतने तथा प्रायश्चित करने को तैयार है! और जो दण्ड मैं नियत करूँगी, वह उसे सहर्ष स्वीकार करेगा। नहीं-नहीं, पिता जी, यह नितान्त असम्भव है। वह सांसारिक-कीर्ति तथा यश का लोभी मेरे नियत किये हुये कठोर प्रायश्चित को कभी नहीं कर सकेगा। पिता जी! मैं जिस प्रायश्चित को नियत करूँगी वह भी इस पुत्र-हत्या की भाँति संसार में अद्वितीय होगा, जिसको करने का सामर्थ्य उसमें है ही नहीं। इसके अतिरिक्त मैं उसे इस प्रायश्चित का भोगी बना कर उसकी भाँति

कलंकिनी बन कर जीना नहीं चाहती। अतएव मैं यही उचित समझती हूँ कि सीस्तान न जाऊँ।"

ज़ाल ने पूछा—"पुत्री, क्या मैं भी सुन सकता हूँ कि तुमने कौन सा प्रायश्चित उसके लिये नियत किया है?"

तहमीना ने उत्तर दिया—"नहीं, पिता जी! आप उसे न सुनें यही अच्छा है, क्योंकि उसके श्रवण मात्र से आपका कोमल हृदय विदीर्ण हो जायेगा।"

तहमीना की इस बात को सुन कर ज़ाल ऐसे वीर का हृदय सचमुच ही काँप गया, इस पर भी उसने अपने हृदय को कठोर कर तहमीना से कहा—"नहीं बेटी, ऐसा न होगा। तुम बतलाओ तो सही कि वह दण्ड कौन सा है।"

तहमीना कुछ तीव्र होकर बोली—"पिताजी, यदि आप हठ ही करते हैं तो सुनिये कि जिस प्रकार रुस्तम ने अपने खञ्जर से मेरा प्राणाधार पुत्र का रक्त पीकर अपनी शोणित पिपासा को शान्त किया है उसी प्रकार मेरी कटार भी उसके लोहू से रक्तमयी होकर उसके पाप का प्रायश्चित करेगी और योंही मेरी पुत्र-वियोग की प्रचण्ड ज्वाला शान्त होगी। कहिए पिता जी! अब तो सुन लिया न दण्ड-विधान। अब आपका क्या विचार है? क्या वह मेरे इस प्रायश्चित को स्वीकार कर सकेगा?"

तहमीना के इस दण्ड-विधान को सुन कर ज़ाल शिर से पाँव तक सिहर उठा और तनिक देर तक मौन रहा। थोड़ी देर पश्चात् वह स्तब्धता को भंग करता हुआ बोला—"हाँ बेटी तहमीना, मैंने तुम्हारे इस दण्ड को सुन लिया। पर क्या तुम मुझको यह बता सकती हो कि सोहराब की मृत्यु का उत्तरदायी केवल रुस्तम ही है या तुम भी?"

तहमीना चकित होकर बोली—"क्या कहा? मैं भी उसकी मृत्यु का कारण हूँ? नहीं, कदापि नहीं। मैंने तो इस आपत्ति से बचे रहने के हेतु अपने सहोदर भ्राता को सोहराब के साथ भेजा था, परन्तु

रुस्तम ने तो उसको भी मार डाला। अब भला आप ही बताइये कि मैं किस प्रकार इस पाप की भागी हूँ।"

ज़ाल ने उत्तर दिया—"अच्छा, यदि तुमको अपनी भूल नहीं दीख पड़ती तो मैं ही बतलाता हूँ। जिस समय सोहराब का जन्म हुआ था उसके कुछ दिनों पश्चात् रुस्तम ने अपना अनुचर तुम्हारे पास यही जानने के निमित्त भेजा था कि उसके पुत्र हुआ है अथवा पुत्री। तुमने पुत्र-प्रेम-वश उसको असत्य सम्वाद कहला भेजा। परिणाम यह हुआ कि वह अंधकार में बना रहा और समझता रहा कि उसके कन्या हुई। यदि तुम उस स[illegible]त्र-प्रेम से पागल होकर असत्य न कहतीं तो आज रुस्तम पुत्र का बधिक बन कर इस संसार में कलंकित तथा दुखी न होता। मेरे विचार से तो तुम्हीं इस पाप-काण्ड में प्रवृत्त हुई।"

ज़ाल की इस खरी बात को सुन कर तहमीना ने मौन धारण कर लिया और मन ही मन इस बात की सचाई पर ध्यान-पूर्वक सोचती रही, धैर्य का बाँध फिर टूट गया और वह बिलख-बिलख कर रोने लगी। अब ज़ाल ने अपने वार्त्तालाप का ढंग बदला और उसका ध्यान धैर्य तथा ज्ञान की ओर आकर्षित करता हुआ बोला—"बेटी, इस संसार में जो आया है वह मृत्यु को अवश्य प्राप्त होगा। इसके लिये तीन बातों की अपेक्षा रहती है। प्रथम कारण, द्वितीय स्थान, तृतीय समय। जब तक कि इन तीनों में से एक का भी अभाव रहता है तब तक प्राणि-मात्र में से किसी की मृत्यु नहीं होती। जो कुछ भाग्य में अंकित होता है वह अटल और अचल है। सोहराब की मृत्यु रुस्तम ही के हाथ थी और उसको भी पुत्र-हत्या से कलंकित होना बदा था। यही कारण है कि तुमने अपने पति के साथ विश्वासघात किया और तुम उससे असत्य बोलीं। यहीं से विधाता की उस क्रूर क्रीड़ा का आरम्भ समझो।

"अब मेरा विचार तो यह है कि तुम इन बातों का ध्यान अपने हृदय से निकाल दो और मेरे साथ चल कर अपनी गृह को स्वर्ग

बनाओ। कोई भी प्राणी इस संसार में स्थायी रूप से रहने के लिये नहीं आता। ईश्वर जाने कितनी बार तुम उसकी माता हुईं और कितनी बार वह तुम्हारा पुत्र। अतएव अब तुम इन बातों को भुला कर मेरे साथ चलो और रुस्तम के विदीर्ण हृदय को पत्नी प्रेम से जुड़ाओ।"

ज़ाल की इन सत्य तथा ज्ञान-पूर्ण बातों ने तहमीना के हृदय पर जादू का काम किया और उसने विवश होकर अपने पति के पास जाने की स्वीकृति दे दी। ज़ाल उसको विदा कर अपनी जन्म-भूमि सीस्तान को लौट आया। वहाँ पहुँच कर और पति को देख कर तहमीना का हृदय फिर विह्वल हो उठा, पर कुछ समय पश्चात् वह साधारण गृहस्थिनी की भाँति रहने लगी। कुछ काल उपरान्त उसने एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया। ज़ाल ने इस बच्चे का नाम फ़रामर्ज़ रक्खा। इतना सब होते हुये भी तहमीना सोहराब की याद अपने हृदय से न भुला सकी। और वह फ़रामर्ज़ के प्रसव के एक मास पश्चात् ही इस असार-संसार का परित्याग कर अपने प्रिय पुत्र से जा मिली।

राजकुमार सियावश का जन्म तथा शिक्षा

एक दिन गेव तथा तोस दोनों आखेट के लिए जेहूँ नदी के निकट एक वन में गये। आखेट करते-करते वन के एक घने भाग में जा पहुँचे, जहाँ उन्हें एक अत्यन्त लावण्यमयी स्त्री दीख पड़ी; जो नितान्त अकेली थी। उस सुन्दरी को ऐसे गहन वन में अकेली देख कर वे उसके निकट गये और देखते ही उसके सौंदर्य पर मुग्ध हो गये। उन्होंने उसका परिचय प्राप्त करने के उद्देश्य से पूछा—"हे सुकुमारी, तुम इस निर्जन वन में कैसे आईं और तुम किसकी पुत्री हो?" यह सुन कर उस सुन्दरी ने कहा, "मैं बुलग़ार की राज कन्या हूँ। मेरे पिता फरीदूँ राजा के वंशज हैं। मेरे इस निर्जन वन में आने का कारण यह है कि मेरे सौंदर्य पर मुग्ध हो कर आस-पास के राजाओं ने मेरे पिता के पास विवाह के

सन्देश भेजे, पर उन्होंने स्वीकृति न दी। मेरे पिता की हार्दिक अभिलाषा थी कि वह मेरा विवाह तूरान के राजा पशंग से करें। एक दिन पशंग ने इस अभिप्राय का सन्देश मेरे पास भेजा भी पर मुझे पशंग से घृणा थी अतः मैंने पिता के इस विचार का विरोध किया। परिणाम यह हुआ कि उन्होंने मेरी इस ढिठाई के उपलक्ष में मुझे बहुत मारा। उनके इस दुर्व्यवहार से असन्तुष्ट हो मैं पितृ-गृह से निकल भागने का अवसर खोजने लगी। एक दिन अनायास ही मुझे यह सुअवसर मिल गया और मैं एक घोड़े पर सवार होकर निकल पड़ी। चलते-चलते मैं जेहूँ नदी के तीर पर पहुँची। यहाँ पहुँचते-पहुँचते मेरा घोड़ा इतना थक गया कि एक पग भी न चल सका। यह देख कर मुझे यह आशंका हुई कि कहीं ऐसा न हो कि मुझे भागी हुई जान कर मेरे पिता अपने गुप्तचर छोड़ें और मैं उनके हाथों बन्दी हो जाऊँ। यह सोच कर मैंने अपना घोड़ा वहीं पर छोड़ दिया और पैदल चलने लगी। चलते-चलते मैं इस वन में आ पहुँची और इसकी निर्जनता देख कर यहीं निवास करने लगी। उसकी कहानी को सुन कर सौन्दर्य लुब्ध तोस ने कहा, "मैं इसको अपनी धर्म-पत्नी बनाऊँगा।" यह सुन कर गेव ने कहा "नहीं यह मेरी गृह-लक्ष्मी बनेगी।" यहाँ तक कि दोनों में वाद-विवाद आरम्भ हो गया।। अन्ततः यह निर्णय हुआ कि इस राजकुमारी को राजा कैकाऊस के पास ले चलें और वह जिस को कहे वही इसके साथ विवाह करे। अतएव उस राजकुमारी को लेकर वे राजा के पास आये और उसका निर्णय माँगा। जब राजा कैकाऊस ने उसके लावण्य को देखा तो वह स्वयं उस पर मुग्ध हो गया और गेव तथा तोस से बोला, "यह राजकुमारी तुम लोगों के योग्य नहीं है। यह आज से मेरे रनिवास की शोभा बढ़ायेगी।" अतएव उसने गेव तथा तोस को उससे वञ्चित करके स्वयं उसके साथ विवाह कर लिया। विवाह के कुछ कालोपरांत बुलगार की उस राजकुमारी ने एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया, जिस का नाम कैकाऊस ने सियावश रक्खा। कैकाऊस ने ज्योतिषियों को बुलवा कर उसका

जन्म-पत्र बनवाया और उसका भविष्य पूछा । ज्योतिषियों ने कहा, "महाराज! इस पुत्र की भाग्य-रेखाएँ अच्छी नहीं हैं।" बादशाह ने जब सुना तो उनको बड़ा दुःख हुआ, पर विधि के विधान में हस्तक्षेप करने का दुस्साहस कौन कर सकता है। राजा विवश होकर चुप हो रहा। धीरे-धीरे सियावश बढ़ने लगा, पर राजा उसकी ओर से निराश हो चुका था इस कारण उसकी विद्या-प्राप्ति की ओर तनिक भी ध्यान न दिया। सियावश के भाग्य कि उन दिनों रुस्तम को कार्यवश कैकाऊस के पास आना पड़ा। उसने जब इस सुन्दर राज कुमार को देखा तो मोहित हो गया और राजा से कहा, "यदि महाराज मुझे आज्ञा दें तो मैं राजकुमार सियावश को राजनीति तथा युद्ध-कौशल की दीक्षा के हेतु अपने साथ ले जाऊँ।" राजा ने स्वीकृति दे दी और राजकुमार रुस्तम के साथ ज़ाबुलिस्तान चला गया। वहाँ पहुँच कर कुछ ही समय में वह राजनीति एवं युद्ध-विद्या में निष्णात हो गया।

कुछ कालोपरांत सियावश ने रुस्तम के प्रति अपने पिता के दर्शन की अभिलाषा प्रकट की। वह यह सुन कर प्रसन्न हुआ और अपनी स्वीकृति दे दी। राजकुमार सियावश यात्रा की तैयारी करने लगा, पर उसे जब यह ज्ञान हुआ कि रुस्तम उसके साथ नहीं जायगा तो वह बहुत उदास हो गया और रुस्तम के पास पहुँच कर रोने लगा और कहने लगा "मैं आप को कदापि नहीं छोड़ सकता, आपको मेरे साथ अवश्य चलना होगा।" सियावश का यह प्रेम-पूर्ण आग्रह देख कर रुस्तम मना नहीं कर सका। फलतः वह भी उसके साथ ईरान गया। जब वह राजधानी के निकट पहुँचा और कैकाऊस को उसके आगमन की सूचना मिली तो वह सब को लेकर उसके स्वागत के हेतु आगे बढ़ा और अपने साथ राज-महल में ले आया। यहाँ पर जब उसने सियावश की विद्या, बुद्धि, रण-कौशल तथा राज-नीति में निपुणता देखी तो रुस्तम को इसके हेतु धन्यवाद दिया तथा सियावश की तीक्ष्ण-बुद्धि की प्रशंसा की।

सियावश को पिता के पास रहते-रहते सात वर्ष योंही बीत गये। एक दिन कैकाऊस ने मन में विचार किया कि मैं इसको मावुरुल नहर का शासक बना दूँ जिससे वहाँ जाकर यह सुख-पूर्वक राज्य करे। वह इसी विचार-सागर में डूबता-उतराता ही था कि अचानक उसकी प्रथम पत्नी रुदाबा, उसके पास जा पहुँची और कैकाऊस से विनय-पूर्वक कहने लगी, 'हे प्राणेश्वर! मेरी इच्छा है कि मैं अपनी पुत्रियों में से किसी एक का विवाह राजकुमार सियावश से कर दूँ। कहिये आप का क्या विचार है?" कैकाऊस ने जब रुदाबा का यह विचार सुना तो कहा—"प्रिये मुझे तो तुम्हारे इस प्रस्ताव से तनिक भी विरोध नहीं है। यदि सियावश तुम्हारे इस प्रस्ताव को स्वीकार कर ले तो इससे अच्छा और क्या हो सकता है। यह कह कर उसने उनको विदा किया।" रनिवास में पहुँचते ही रानी रुदाबा ने सियावश को बुला भेजा। वह भी पिता की आज्ञा लेकर रुदाबा के पास गया। पर रुदाबा राक्षसी प्रकृति की मारी थी, वह अपने सौतेले पुत्र सियावश पर स्वयं ही मोहित हो गई और कामवश हो उसने उसको अपनी दोनों भुजाओं में कस लिया और उसका मुख चूमने लगी। सियावश उसके इस घृणित कार्य को मातृस्नेह मात्र समझा। वह राक्षसी इसी प्रकार सियावश में कामोद्दीपन का प्रयत्न करती रही, पर जब कृत-कार्य न हो सकी तो उसने अपनी पुत्रियों को बुला भेजा, जो अपनी सुन्दरता के कारण स्वर्ग-अप्सराओं को भी लज्जित करती थीं। उनके आगमन पर रुदाबा ने कहा—"प्यारे सियावश! मेरी इन पुत्रियों में से जिसे तुम चाहो मैं उसी का गठ-बन्धन तुम्हारे साथ कर दूँ ताकि तुम दोनों दाम्पत्य प्रेम में जकड़ कर अपने जीवन को सुख-पूर्वक बिताओ। उसकी इन बातों को सुन कर सियावश ने एक बार उन सुन्दर युवतियों की ओर आँख उठाई पर कुछ भी उत्तर नहीं दिया। जब रुदाबा को कुछ भी उत्तर न मिला तो उसने समझा कि सम्भवतः सियावश लज्जा-विभूत हो कुछ उत्तर नहीं देता। अतएव उसने उस सब

को विदा कर दिया और जब एकान्त हो गया तो उसने फिर उसी प्रकार का पापाचरण आरम्भ कर दिया। यहाँ तक कि अपनी काम-वासना को चरितार्थ करने के लिये उस कुलटा ने अपने हाव-भावों का ही प्रयोग नहीं किया, वरन् स्पष्ट शब्दों में प्रस्ताव कर दिया। सियावश ने उसके कुत्सित विचार को सुनते ही स्पष्ट कह दिया कि मैं आप की किसी भी पुत्री से विवाह करने को उद्यत हूँ पर आप मेरी माता हैं, अतएव आप का दूसरा प्रस्ताव नितांत असंगत है। इसे मैं कदापि स्वीकार नहीं कर सकता। सियावश के इस उत्तर ने उसकी पाप-वासना की तरंगों को बाँध बन कर रोक दिया। वह तुरन्त समझ गई कि मैं कृत-कार्य्य न हो सकूँगी। साथ ही उसने यह भी विचार किया कि यदि मैं बल-प्रयोग करती हूँ तो यह भी तो राज कुमार है, कहीं ऐसा न हो कि भण्डा फूट जाय और मैं कलंकित हो जाऊँ। यह सोचकर उसने उस को बन्धन-मुक्त कर दिया। सियावश अवसर पाते ही वहाँ से चलता बना।

अपने घृणित-कार्य्य में सफल न हो कर रुदाबा कैकाऊस के निकट गई और उसको सियावश की स्वीकृति का शुभ-सन्देश सुनाया। जिसे सुन कर उसने रुदाबा की पुत्री के विवाह का प्रबन्ध पूर्ण रीति सम्पन्न कर दिया।

इधर सियावश ने उसके चंगुल से छूटकर भवन में आकर साँस ली। वहाँ पहुँच कर वह अपनी माता के व्योहार पर पर्याप्त समय पर्यन्त विचार करता रहा।

अन्ततः उसने निश्चय किया कि एक तो यह मेरी माता नहीं, दूसरे यह सुनने में आया है कि यह मायाविनी है और इसका परिचय मुझे उस के अश्लील व्योहारों से मिल भी चुका है, अतः अब मेरे लिए यही हितकर है कि मैं भूल से भी उससे एकान्त में न मिलूँ और उससे भी अधिक हितकर मेरे लिए यह है कि यदि अवसर मिले तो यहाँ से चलता बनूँ। इस निर्णय पर पहुँच कर उसने इसको कार्यान्वित करना आरम्भ कर दिया। जब रुदाबा उसे बुलाती तो वह टाल-मटोल कर

जाता। उसके इस व्योहार से रूदाया को विश्वास हो गया कि अब सियावश उसके हाथ आने वाला नहीं, अतः उसने उसके विरुद्ध षड्यन्त्र रचना आरम्भ किया। एक बार उसने उस पर व्यभिचार का दोषारोपण किया जिससे कैकाऊस का मन सियावश की ओर से फिर ही गया और उसने उससे कहा—"तुम को अपनी सच्चाई के प्रमाण-स्वरूप अग्नि-परीक्षा देनी होगी।" सियावश ने कहा "पिता जी मैं सर्वथा प्रस्तुत हूँ।" अग्नि-प्रचण्ड की गई और वह उसके अन्दर प्रवेश कर कुशल-पूर्वक बाहर आ गया। इससे कैकाऊस पर इतना उलटा प्रभाव पड़ा कि वह रूदाया से विमुख हो गया और उसका वध करने चला परन्तु सियावश की प्रार्थना पर उसे छोड़ दिया। सियावश ने तो पिता से प्रार्थना कर के रूदाया को जीवन-दान दिलाया और वही उस की हत्या का अवसर ढूँढ़ने लगी। किसी ने सत्य ही कहा है :—

दास ने (?)

भले भलाई पै लखै लखै निचाई नींच,
सुधा सराहिय अमरता गरल सराहिय मीच।

सियावश का अफ़रासियाब से युद्ध—बलख़ पर विजय

राजकुमार सियावश के जन्म-पत्र को देख कर ज्योतिषियों ने राजा से कहा था कि इसके भाग्य में सुखपूर्वक जीवन बताना नहीं लिखा। कैकाऊस ने ईश्वर की इच्छा के विरुद्ध उसको मादरुलनहर का शासक बनाना चाहा, चाहा कि अपनी मृत्यु के उसने पश्चात् उसको समस्त ईरान का राजा बनावे, पर विधाता ने अपनी प्रपंचना रूदाया के हाथों आरम्भ कर दी।

उन्हीं दिनों तूरान के शासक अफरासियाब ने फिर ईरान पर आक्रमण किया और जब इसका समाचार कैकाऊस को मिला तो वह मन में विचार करने लगा कि अफरासियाब कितना नीच है। उसको अपने वचन का ध्यान ही नहीं रहता। प्रथम तो वह आक्रमणकारी होता है, पर

जब परास्त होता है तो सन्धि के लिए गिड़गिड़ाता है। ख़ैर इस बार मैं स्वयं जाऊँगा और उसको परास्त कर के बलख़ पर अपना अधिकार करूँगा। इधर जब सियावश को यह समाचार मिला तो उसने सोचा "ईश्वर ने अच्छा अवसर दिया। चलो इसी बहाने इस दुष्टा माया-विनी का साथ छूटा। बस वह सीधा अपने पिता के पास आया और प्रार्थना की कि पिता जी आपकी अवस्था रणभूमि में जाने की कदापि नहीं। ईश्वर की कृपा से मैं आपकी सेवा करने योग्य हो गया हूँ। आज्ञा दीजिये कि मैं स्वयं जाकर अफरासियाब को उसके इस कार्य का दण्ड दूँ।" सिया-वश को इस बात को सुन कर कैकाउस बोला—"प्रिय पुत्र तुम अभी निरे बालक हो और वह अफरासियाब तुम्हारी अपेक्षा अधिक बली, छली तथा अनुभवी है; अतएव तुम्हारा युद्ध में जाना असंगत होगा।" यह सुन कर सियावश ने कहा "पिता जी! अधिक तो मैं नहीं कह सकता, पर मेरी प्रार्थना केवल यही है कि आप अपनी स्वीकृति दे दें।" जब कैकाऊस ने देखा कि सियावश रणक्षेत्र में जाने के लिये इतना उत्सुक और दृढ़ निश्चयी है तो उसने अपनी स्वीकृति दे दी और साथ ही यह भी कहा "मैं तुम को अकेला नहीं जाने दूँगा, मैं भी साथ चलूंगा।" सियावश को अपने पिता की स्वीकृति जैसे ही मिली वैसे ही उसने अपनी यात्रा की समस्त आवश्यक वस्तुएँ एकत्र करनी आरम्भ कर दीं। इधर जब रुस्तम को यह विदित हुआ कि सियावश तथा महाराज कैकाऊस युद्ध पर जा रहे हैं तो वह उनकी सेवा में उपस्थित हो हाथ जोड़ कर विनय-पूर्वक बोला "महाराज,! जब तक आपके इसके शरीर में रक्त और रक्त में जोश है तब तक आपको इतनी भारी यात्रा की आपत्तियों में पड़ने की आवश्यकता नहीं। मेरा तो यही कहना है कि यहीं राज-धानी में रह कर आप राजकाज देखें और इस तुच्छ सेवक को राजकुमार सियावश के साथ उस अभिमानी तथा विश्वासघाती अफरासियाब के के मुख-मर्दन के हेतु जाने की आज्ञा दें।" कैकाऊस ने रुस्तम की स्वामि-भक्ति-पूर्ण उक्ति को सुन कर अपना युद्ध का जाना स्थगित कर दिया

और उसके जाने की आज्ञा देकर अपने युद्ध-मंत्री के पास इस आदेश का एक आज्ञा-पत्र भेजा "कारणवश मैं स्वयं युद्ध में नहीं आ रहा हूं, वरन अपने स्थान पर रुस्तम को भेज रहा हूँ; अतएव तुम शीघ्र ही सेना एकत्र कर के बलख की ओर प्रस्थान करो।" इस आज्ञा-पत्र को हरकारे के हाथ भेज कर वह सियावश को कुछ आवश्यक बातें समझाने लगा। और उसे एक भारी सेना देकर युद्ध के लिये विदा किया।

ईरानी सेना अपने राज्य से प्रस्थान करके सीधी बलख की ओर चल पड़ी। जब वह बलख के निकट पहुँची तो तूरान की सीमा का रक्षक भी अपनी सेना-सहित रण-क्षेत्र में आ धमका, परन्तु थोड़ी ही देर के युद्ध के पश्चात् ही उसके पाँव उखड़ गये और वह भाग कर बलख नगर में जा छिपा। जब सियावश और रुस्तम को यह ज्ञात हुआ कि युद्ध-क्षेत्र से भाग कर बलख में जा छिपा है तो उन्होंने भी अपनी सेना को बलख की ओर प्रस्थान करने की आज्ञा दी।

इधर जब अफ़रासियाब को यह ज्ञात हुआ कि सीमा-रक्षक ने ईरानियों की सेना से परास्त होकर बलख़ में शरण ली है तो उसने अपने दामाद करसियोस की अध्यक्षता में एक नई सेना उसकी सहायता को भेजी जो बलख़ पहुँच कर सीमा-रक्षक से जा मिली। सहायता प्राप्त कर एक बार फिर उस सीमा-रक्षक में रणक्षेत्र में जा डटने का साहस उत्पन्न हो गया। इधर ईरानियों की सेना भी पड़ाव पर पड़ाव मारती हुई बलख के निकट आ गई। दोनों ओर की सेना पंक्ति-बद्ध होने लगीं। संक्षेप यह कि दो दिन तक घोर संग्राम हुआ, रण-क्षेत्र में मृतकों के शरीर रक्त की नदी में नावों की भाँति डूबने-उतराने लगे। घायलों के आर्त्तनाद से सारा रणक्षेत्र प्रति-ध्वनित हो उठा। जिस ओर कान उठता था मारो-मारो का ही शब्द सुनाई पड़ता था। तूरानियों के पाँव उखड़ ही गए और दूसरे दिन संध्या समय उन्हें पीठ दिखाई पड़ी। वे जेहूं नदी पार कर भागे और जाकर अफ़रासियाब को समाचार दिया कि महाराज बलख़ का देश सियावश के अधीन हो चुका

दूसरी ओर राजकुमार ने बलख़ के अधिकृत हो चुकने पर यह विचार किया कि जीहूँ नदी को पार कर तूरानियों की सेना पर फिर आक्रमण किया जाय और उसका एक दम सर्वनाश कर दें। परन्तु उसके युद्ध-मन्त्रियों ने उसे समझाया "आप जल्दी न कीजिये, प्रत्युत इस विजय की सूचना महाराज कैकऊस को देते हुये अपनी यह इच्छा भी उन पर प्रकट कर दीजिए। देखिये उनका क्या मत है। यदि वह आज्ञा दें तो हम लोग नदी पार कर आपके अभिमतानुसार कार्य करेंगे, अन्यथा जो उनकी आज्ञा हो वही किया जाय क्योंकि अभी आप उनके राज्यहठ से बिलकुल अपरिचित हैं।" सियावश को विवश होकर यह बात माननी पड़ी और एक अनुचर द्वारा कैकाऊस के पास विजय का संदेश तथा अपनी इच्छा लिख भेजी।

जब अनुचर पत्र लेकर महाराज की सेवा में जा उपस्थित हुआ और कैकाऊस ने विजय-समाचार सुना तो बहुत प्रसन्न हुआ और सियावश तथा रुस्तम को बधाई देने के पश्चात् यह लिखा "अफ़रा-सियाब बड़ा ही धूर्त है, अतएव जब वह स्वयं जेहूँ नदी के इस पार आये तो आक्रमण करो अन्यथा तुमको अकारण ही उस पार जाने की आवश्यकता नहीं।"

इस उत्तर को पढ़ कर सियावश का कोई वश न चला, मन मसोस कर रह जाना पड़ा। उसने उस पराजित किये हुये नगर पर ही संतोष किया।

सियावश की सेवा में अफ़रासियाब की भेंट

जब करस्योज़ तथा उसकी सेना ईरानियों से पराजित होकर भागी तो सीधे अफ़रासियाब के पास पहुँची और उसको अपनी पराजय का दुःखद समाचार सुनाया। जब अफ़रासियाब ने ईरानियों की विजय का सन्देश सुना तो उसके मुख पर निराशा की कालिमा छा गई और उसी चिन्तित अवस्था में अपने शयनागार में जाकर पड़ रहा। कुछ देर

विचार-मग्न रहने के पश्चात् वह निद्राभिभूत हो गया। उसी निद्रित अवस्था में उसने एक भयंकर स्वप्न देखा कि वह अपनी सेना-सहित एक ऐसे विकट जंगल में जा फँसा जो सर्पों से परिपूर्ण है। सहसा उसने अपना शिर आकाश की ओर उठाया तो देखा बादलों में से एक भयंकर भुजंग निकला और उसकी सेना की ओर बढ़ चला। इतने ही में एक आँधी आई जिसमें से सहस्त्रों सैनिक उत्पन्न हो गये। और उसकी सेना पर आक्रमणकारी हुये। संक्षेप यह कि उन्होंने उसकी सेना का सर्वथा विध्वंस कर डाला, यहाँ तक कि उसका एक भी सैनिक जीवित न बचा। इसके पश्चात् वह सब उसे बन्दी करके ले गये और कैकाऊस के सम्मुख उपस्थित किया। उस समय एक अत्यन्त सुन्दर युवक उसके निकट बैठा था। इसके पहुँचते ही वह सुन्दर युवक झट अपनी तलवार म्यान के बाहर निकाल कर उसके ऊपर झपट पड़ा और बिना कुछ कहे-सुने उसने अपनी तलवार को उसके पेट में भोंक दिया और वह उसके घाव से चिल्ला उठा। इस आर्त्तनाद के साथ ही अफ़रासियाब की नींद टूट गई और भय के कारण उसका सारा शरीर काँपने लगा।

उसका भय जब कम हुआ तो उसने तुरन्त अपने दामाद को बुला कर स्वप्न का वृत्तांत कहा। सब बातें सुन कर उसने अफ़रासियाब को सान्त्वना देते हुए कहा "महाराज! आप व्यर्थ चिंता न करें, ऐसे भयानक स्वप्नों का फल उलटा ही होता है। इस स्वप्न से अन्ततः यह विदित होता है कि अब की बार आप ही विजयी होंगे। भय धैर्य का परित्याग कर ईरानियों पर चढ़ाई करने की तैयारी कीजिये।"

करस्योज द्वारा इतना धैर्य बंधाये जाने पर भी अफ़रासियाब का आश्वासन न हो सका। उसने तुरन्त ही ज्योतिषियों को बुला भेजा और उनसे अपने इस हृदय-विदारक स्वप्न का फल पूछा। थोड़ी देर पश्चात् सब ने एक मत होकर अफ़रासियाब से कहा "महाराज! इस स्वप्न का फल आप के लिये हितकर नहीं है, अतएव कुशल इसी में है कि आप कैकाऊस से सन्धि कर लीजिये और जो भी प्रस्ताव वह उपस्थित करे उसे मान लीजिये, अन्यथा

असम्भव नहीं कि स्वप्न के परिणाम स्वरूप-महाराज के शरीर को कष्ट झेलना पड़े।"

अफ़रासियाब ने ज्योतिषियों की बात मान ली और कैकाऊस से सन्धि कर लेने को उद्यत हो गया। उसने सन्धि के निमित्त एक प्रार्थना-पत्र लिख कर सियावश के पास करस्योज़ द्वारा भेजा, साथ ही तूरान की अनेक अमूल्य तथा नवीन वस्तुएँ भी उसकी भेंट स्वरूप भेजीं।

जब करस्योज़ प्रार्थना-पत्र लेकर राज-सभा में पहुँचा तो सियावश स्वयं उसके स्वागत को उठा और सप्रेम उसे नियत आसन पर बैठने का आदेश किया। उसने बैठने के पूर्व अफ़रासियाब का प्रार्थना-पत्र तथा भेंट सियावश की सेवा में उपस्थित करके विनय-पूर्वक सब सन्देश कह सुनाया। सियावश उस पत्र को पढ़ कर तथा भेंट की वस्तुओं को देख कर बहुत प्रसन्न हुआ और एक रंग-मञ्च सुसज्जित करने की आज्ञा दी। संध्या समय सुरा-देवी ने उस रंग-मञ्च को अपने पदार्पण से स्वर्ग-मय बना दिया। अर्ध-रात्रि पर्यन्त वे सब सुख-भोग करते रहे। अन्त में करस्योज़ सियावश से क्षमा माँग कर अपने लिये नियत किये हुये शयनागार में जाकर निद्रा-देवी की गोद में निश्चिन्त होकर पड़ रहा।

जब करस्योज़ रंग-मञ्च से विदा होकर शयनागार की ओर अग्रसर हुआ तो सियावश भी रुस्तम को लेकर अपने मंत्रणागार में गया और उससे अफ़रासियाब की सन्धि की प्रार्थना तथा अपने निमंत्रण पर परा-मर्श करने लगा और रुस्तम से बोला—

"प्रिय रुस्तम! अफ़रासियाब के पत्र और भेंट तथा करस्योज के वार्त्तालाप से ऐसा प्रतीत होता है कि भविष्य में अफ़रासियाब विद्रोह न करेगा क्योंकि इसके प्रमाण में उसने मुझे आमंत्रित किया है। मेरे मता-नुसार यदि मैं उसके यहाँ जाऊँ और उससे सन्धि कर लूँ तो इस में कोई हानि नहीं है। बोलो, तुम्हारा क्या मत है?"

रुस्तम ने उत्तर दिया—"राजकुमार मुझे यह कहने के लिये क्षमा कीजिये कि अभी आप बालक हैं; आप इस विश्वासघाती की बातों में न आयें,

क्योंकि इसने इसी प्रकार सहस्रों बार छल किया है। जब-जब इसकी पराजय हुई तब-तब इसने सन्धि का षड्यंत्र रचा और ज्यों ही उसमें फिर तनिक सी शक्ति आई नहीं कि तुरन्त सेना लेकर चढ़ दौड़ा। उस का हृदय कभी साफ नहीं हो सकता। मेरा तो यही परामर्श है कि आप उससे सन्धि कदापि न करें और न तूरान को ही जायें। और यदि आप की इच्छा यही है तो जो प्रस्ताव मैं आप के समक्ष उपस्थित करूँ उसको लिख भेजिये। यदि वह सहमत हो जाय तो सन्धि करने में कोई हानि नहीं है।"

रुस्तम द्वारा संधि की शर्त्तें

रुस्तम द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रस्ताव को सियावश ने अफरासियाब को लिख भेजा, जिसे उसने स्वीकार कर लिया। पश्चात् रुस्तम सियावश से विदा होकर कैकाऊस के पास पहुँचा और राजकुमार का पत्र देकर युद्ध, विजय तथा सन्धि-प्रार्थना का समस्त वृत्तान्त विस्तार-पूर्वक उससे कहा। सम्पूर्ण समाचार को ध्यान-पूर्वक सुनने के पश्चात् कैकाऊस बोला—"मैं सन्धि नहीं चाहता। मेरी इच्छा है कि मैं तूरान-विजय कर राज कुमार को वहाँ का शासक नियुक्त करूँ।" रुस्तम ने कहा—"महाराज! सन्धि युद्ध की अपेक्षा अधिक लाभ-प्रद होती ही, अतएव यदि आप इस सन्धि-प्रस्ताव से सहमत हो जाँय तो अति उत्तम है। मनुष्य अपनी प्रकृति के प्रतिकूल कदापि नहीं जा सकता इसका उदाहरण आपको अपने हठ में स्वयं मिल जायगा।" रुस्तम की उपयुक्त बातें सुनकर कैकाऊस की क्रोधाग्नि भभक उठी और उसने आवेश में कहा "यदि तुम वहाँ नहीं जाना चाहते तो मैं किसी अन्य पहलवान को वहाँ भेजूँगा।" फलतः उसने तोस को वहाँ भेज दिया।

अपने गुप्त-चर द्वारा राजा के हठ तथा कार्य का समाचार जब सियावश को ज्ञात हुआ तो उसको बड़ा खेद हुआ और उसने यह प्रतिज्ञा की कि अब मैं कैकाऊस का साथ छोड़ कर अफ़रासियाब के पास चला

जाऊँगा। अतएव तोस के आगमन के पूर्व ही उसने एक पत्र अफ़रासियाब को लिखा "कैकाऊस ने मेरी प्रार्थना को स्वीकार नहीं किया और उसने तोस को मेरे स्थान पर नियुक्त किया है जो तुम से युद्ध करेगा। अब मेरी यही हार्दिक इच्छा है कि आप की सेवा में उपस्थित होकर आप ही को पिता मान कर अपना शेष जीवन आप की सेवा में बिताऊँ।"

अफ़रासियाब ने सियावश को अपना पुत्र मान लिया और वह भी कैकाऊस की सेना का भार अपने स्थानापन्न को सौंप कर तूरान की ओर चल दिया।

जब अफ़रासियाब को सियावश के आगमन का समाचार मिला तो वह स्वयं अपनी सेना की एक टुकड़ी तथा प्रमुख नेताओं को साथ लेकर उस की अगवानी के हेतु चल पड़ा। जब दोनों निकट पहुँचे तो सियावश शिष्टाचार के अनुसार नत मस्तक हुआ और अफ़रासियाब ने भी उसको अपने हृदय से लगा लिया। संक्षेप यह कि दोनों राज भवन पहुँचे। और सियावश वहाँ सुखपूर्वक रहने लगा।

कुछ कालोपरांत उसने गुल शहर नामी एक सुन्दरी स्त्री से विवाह कर लिया और गृहस्थ आश्रम का सुख भोगने लगा। एक दिन उसके एक साथी ने उससे कहा "राज कुमार! यदि आपका विवाह अफ़रा-सियाब की पुत्री फ़िरंगीयश से होता तो अति-उत्तम होता।" सियावश को जब उसके द्वारा फिरंगियश की सुन्दरता का परिचय मिला तो उसने दूसरे दिन एक व्यक्ति द्वारा फ़िरंगियश तथा अपने उस सम्बन्ध का का संदेश अफरासियाब के पास भेजा। अफ़रासियाब तो ऐसे अवसर की प्रतीक्षा कर ही रहा था। उसने तुरंत अपनी स्वीकृत दे दी। अपने इस विवाह का प्रस्ताव अफ़रासियाब के पास भेजने के समय उसने अपनी प्रथम पत्नी गुल शहर से भी इस विवाह की बात चलाई। वह इस शुभ सन्देश को सुन कर गद्गद् हो गई। वह स्वयं भी तो यही चाहती थी कि किसी न किसी प्रकार सियावश अफ़रासियाब का जामाता हो जाय।

संक्षेप यह कि सियावश का विवाह फिरंगियश के साथ हो गया। विवाह के उपलक्ष में अफरासियाब ने सियावश को बहुत से मूल्यवान हीरे, जवाहरात, घोड़े, हाथी, रथ, दास-दासियाँ तथा सोने-चाँदी के पात्र भेंट किये। इसके अतिरिक्त उसने ख़ुतन देश का राज-मुकुट भी उसको पहना दिया। कुछ समय तक तूरान में रहने के पश्चात दोनों पति-पत्नी तूरान से बिदा हो कर ख़ुतन पहुँचे और सुखपूर्वक रहने लगे।

अफ़रासियाब के हाथों सियावश की हत्या।

कुछ समय तक ख़ुतन देश में निवास करने के पश्चात् सियावश वहाँ से गंगा नदी की ओर चल पड़ा। वहाँ पहुँच कर उसने एक सुन्दर स्थान पर अपने राजमहल तथा गढ़-निर्माण के हेतु चुना और सहस्रों कारीगर लगा कर अपनी इच्छानुसार गढ़, राजमहल तथा अन्य भवन बनवाये। प्रत्येक भवन में उसने क्योमर्स, जमशेद, फरुंख, फरीदूँ, मनोछर, कैकुबाद, काऊस, पशंग, अफ़रासियाब, तरीमान, रुस्तम, जाल तथा अन्य पूर्वजों के चित्रों को अंकित कराया। उन चित्रों के देखने से ऐसा प्रतीत होता था जैसे वे सब सजीव हैं और बोल ही पड़ेंगे। जब यह समाचार अफ़रासियाब को मिला तो उसने और बहुत से कारीगर तथा कोष देकर उसकी सहायता की।

जिस समय सियावश फिरंगीयश के साथ ख़ुतन प्रदेश को जाने को था उस समय उसकी प्रथम पत्नी गुलशहर गर्भवती थी, अतएव वह उसको उसके पिता के पास ही छोड़ आया था। जब नौ मास पूरे हुए तो उसने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम फ़रूद रक्खा गया। अफ़रासीयाब ने यह शुभ-सन्देश अपने जामाता करस्योज़ के द्वारा सियावश के पास भेजा। वह शुभ-सन्देश तथा अन्य बहुमूल्य वस्तुएँ लेकर करस्योज़ सियावश के पास चल दिया।

करस्योज़ प्रत्यक्ष रूप में तो सियावस के प्रति सदा ममता का व्योहार करता था पर उसके हृदय में सियावश के प्रति ईर्ष्या थी। उसकी

हार्दिक इच्छा थी कि सियावश का या तो कोई बध कर दे अथवा उसको देश निकाला दे दिया जाय, क्योंकि सियावश की इतनी मान-मर्यादा उसको नहीं सुहाती था। जब वह तूरान से चला तो सारे मार्ग भर वह यही विचार करता जाता था कि कौन सा उपाय करें कि सियावश अफरासियाब के चित्त से उतर जाय और वह सफल-मनोरथ हो।

इन्हीं विचारों में निमग्न हुआ वह सियावश के पास पहुँच गया। सियावश ने उसका अत्यधिक आदर-सत्कार किया। भिन्न-भिन्न प्रकार के भोजन बनवाये, और एक रंगमञ्च सजवा कर तथा उसमें सुरा, सुन्दरी और नृत्य-गान का पूर्ण रूप से प्रबन्ध कर उसका सम्मान किया। हाँ, केवल एक कार्य्य उसने नहीं किया। वह यह कि जब करस्योज राज-सभा में पहुँचा तो सियावश ने सिंहासन से उठकर उसकी आराधना नहीं की। उसका यह आत्मभिमान ईर्ष्यालु करस्योज़ को असह्य हो गया। वह सोचने लगा कि सियावश की दृष्टि में मेरा कुछ भी मूल्य नहीं। मैं उससे ज्येष्ठ हूँ, न कि वह उसने दृढ़ निश्चय कर लिया कि यदि मैंने अपने इस निरादर का बदला सियावश से न लिया तो मेरा नाम करस्योज़ नहीं। वहाँ पर दो-चार दिन रह कर करस्योज़ अफ़रासियाब के पास लौट गया।

मार्ग में उसने अपने हृदय में विचार किया कि इस जीवन में सियावश से बदला लेने का इससे अधिक सुअवसर कदापि न मिलेगा। उसने अफरासियाब के पास पहुँच कर अन्य समाचार कहने के पश्चात् कहा "महाराज! सर्प का बच्चा सर्प ही होता है। आप उसे कितना ही प्यार करें, दूध पिलावें, पर अवसर मिलने पर वह बिना डसे न रहेगा। ठीक वही अवस्था इस समय सियावश की है। जब से उसने आ की कन्या के साथ विवाह किया है और ख़ुतन तथा अन्य देशों का राजा हुआ है तब से उसके अभिमान का ठिकाना नहीं। अब वह मुझको तथा आपको कुछ भी नहीं समझता। अब उसका अभिमान अति की सीमा का उल्लंघन कर गया है। देखिए तो सही कि जब मैं

उसकी राज-सभा में पहुँचा तो वह अभिमानवश मेरे अभिवादन तथा शिष्टाचार के लिये अपने सिंहासन से उतरा तक नहीं। मुझे तो यह आशंका है कि कैकाऊस से मिल कर वह तूरान पर आक्रमण न कर दे और आपका बध करके स्वयं ही तूरान का शासक न हो जाय।"

करस्योज़ की इन बातों ने अग्नि में घृताहुति का कार्य किया। एक तो अफरासियाब धूर्त्त था ही उस पर भी करस्योज़ ने सियावश के प्रति असत्य तथा शंकापूर्ण बातें कह कर उसका हृदय फेर दिया। वह विचारने लगा कि अब क्या करना उचित है। यदि मैं सियावश की हत्या कर डालूँ तो यह अनुचित होगा, क्योंकि वह मेरा दामाद है, और यदि उसको बन्दी बनाकर रक्खूँ तो विद्रोह की आशंका है। अन्त में उसने उसे उसके पिता कैकाऊस के पास भेज देने का निश्चय किया और अपने इस निश्चय को उसने करस्योज़ पर प्रकट भी कर दिया। कपटी तथा द्वेषी करस्योज़ ने आपत्ति उठाते हुए कहा 'महाराज! यदि आप उसको उसके पिता के पास भेज देंगे तो वह आपके देश की समस्त गुप्त बातें अपने पिता को बता देगा। इसका परिणाम निश्चय ही बहुत भयावह होगा। मेरा विचार तो यह है कि उसको यहाँ बुला कर बन्दी कर दीजिये फिर वह कहीं भी न जा सके।" कुछ वाद-विवादोपरांत अफरासियाब करस्योज़ के मत से सहमत हो गया और कहा "तुम स्वयं जाओ और उसको किसी छल से यहाँ तक ले आओ।" इतना कह कर उसने एक आदेश-पत्र सियावश को लिखा जिसमें शीघ्र चले आने की आज्ञा थी। वह आदेश-पत्र लिखकर उसने करस्योज़ को दिया और स्वयं जाने का आदेश किया।

करस्योज़ अफ़रासियाब से बिदा होकर सियावश के निकट पहुँचा और अफ़रासियाब का पत्र उसको दिया। पत्र पढ़कर सियावश चलने को उद्यत हो गया। करस्योज़ ने अब विचार किया "यदि सियावश अफ़रासियाब के पास जायेगा तो निश्चय ही वह सब बातें उससे कहेगा और जब उसको मेरे कपट-पूर्ण व्यवहार का पता चलेगा तो निश्चय ही

मेरा बध कर डालेगा। सुतरां उसने सियावश से कहा, "यदि तुम गुप्त रख सको तो मैं तुमसे एक बात कहना चाहता हूँ।" सियावश ने वचन दिया कि वह उसकी बात किसी से भी न कहेंगे। करस्योज़ ने कहा, "अफ़रासियाब आप की ओर से सशंक हो गया है और उसने अपने मार्ग का रोड़ा हटाने ही के उद्देश्य से आपको बन्दी बनाने के निमित्त ही इस समय बुला भेजा है।" इस प्रकार उसने सियावश को अफ़रासियाब की ओर से शंकित कर दिया। अब उसने अफ़रासियाब को एक पत्र में लिख भेजा "फिरंगीयश के अस्वस्थ होने के कारण मैं श्रीमान् की सेवा में उपस्थित नहीं हो सकूँगा, एतदर्थ क्षमा-प्रार्थी हूँ।"

विधि विधान-वश करस्योज़ की बुद्धि ही मारी गई। करस्योज़ का उत्तर पाते ही सियावश तुरन्त तूरान की ओर चल पड़ा। वहाँ पहुँच कर उसने राजा से कहा, "सियावश का इतना अभिमान हो गया है कि उसने मेरा घोर अनादर किया। मुझे अपने सिंहासन के नीचे बिठाया और जब आपका पत्र उसको दिया तो उसने उसे बिना पढ़े ही फाड़ डाला और आवेशपूर्वक कहा, "जाओ! अफ़रासियाब से कह दो कि मैं उसके आधीन नहीं हूँ और न मैं उसकी आज्ञा को ही मान सकता हूँ। उनसे जो कुछ करते बने करे। यदि वह युद्ध का अभिलाषी हो तो मैं उससे किसी भाँति कम नहीं हूँ और न उससे भय ही खाता हूँ।" इस उत्तर से अफ़रासियाब की क्रोधाग्नि धधक उठी और सेना एकत्र करके उसने तुरन्त सियावश पर आक्रमण कर दिया।

इधर जब सियावश को इस आक्रमण की सूचना मिली तो उसने करस्योज़ के कथन को प्रामाणिक माना और सोचने लगा, "यदि मैं वहाँ जाता तो या तो बन्दी कर लिया जाता या मौत के मुख में डाल दिया जाता।" इन्हीं विचारों में मग्न वह अपनी स्त्री पास पहुँचा और समस्त वृत्तांत उससे कहा। फिरंगीयश ने कहा, "मेरी अनुमति तो यह है कि आप ईरान की ओर भाग जायें क्योंकि अब मेरे पिता ने अपने वचन का पालन न करते हुये अपने आश्रित पर आक्रमण किया है तो सम्भव नहीं कि

वह आप की हत्या भी कर डाले।" यह सुन कर सियावश ने कहा, "तुम भी तो मेरे साथ चलो।" उसने उत्तर दिया, 'मेरे पाँच मास का गर्भ है, अतएव मेरे लिये इतनी बड़ी यात्रा असम्भव है। पहिले आपको अपनी प्राण-रक्षा आवश्यक है। उसके पश्चात् ईश्वरेच्छा होगी तो मैं भी आपकी सेवा में आ उपस्थित होऊँगी।' सियावश ने कहा, 'अच्छा मैं तो जाता हूँ परन्तु इस बात का ध्यान रहे कि यदि मेरे पुत्र हो तो तुम उसका नाम कैखुसरो रखना और उसको देख कर अपने हृदय को धीरज देना।" इतना कह कर और एक सहस्र सैनिकों को साथ लेकर वह ईरान की ओर चल पड़ा।

अभी वह थोड़ी ही दूर गया होगा कि सामने से अफ़रासियाब सेना-सहित आता हुआ दिखाई दिया। जब दोनों सेनाएँ एक-दूसरे के निकट आ गईं तो युद्ध आरम्भ हो गया। अफ़रासियाब की असंख्य-सेना के सामने सियावश के इने-गिने सैनिक न ठहर सके, फलतः सियावश के अतिरिक्त शेष सभी सैनिक वीर-गति को प्राप्त हुये। सियावश की वीरता को देख कर करस्योज् ने सोचा यदि एक-एक करके युद्ध होगा तो निश्चय ही सियावश सब को तलवार की घाट उतार देगा, अतएव सब एक साथ मिल कर उस पर बाण-वर्षा करें; परन्तु अधिकांश सैनिकों ने यह विचार प्रकट किया, "उसे जीवित ही बन्दी करना अत्युत्तम है।" अतः सियावश को बन्दी बना कर अफ़रासियाब के सम्मुख उपस्थित किया गया।

जब सियावश बन्दी हो गया तो अफ़रासियाब उसको लेकर उसकी राजधानी में आया और वहाँ के सुदृढ़ गढ़ एवं अतुल ऐश्वर्य-पूर्ण भवनों को देख कर आश्चर्य-चकित हो गया। इतने ही में उसकी पुत्री फिरंगीअस रोती-बिलखती उसके चरणों में आकर गिर पड़ी और कहने लगी "पिता जी! आपको यह क्या हो गया है जो एक आश्रयहीन को आश्रय देकर फिर उसकी हत्या करने पर तुल गये हैं। मुझे आश्चर्य है कि आप किस प्रकार अपनी पुत्री का सौभाग्य-सिन्दूर उसके शिर से सर्वदा के लिये पोंछ सकेंगे।

पिता जी ! कृपा कीजिये और अपने जामाता का वध करके अपने हाथों को कलंकित न कीजिये। संसार में यदि कोई सुनेगा तो क्या कहेगा। आप किसके जाल में फँस कर यह जघन्य एवं अमानुषिक कार्य करने को उद्यत हुए हैं। फिरंगीयश इसी प्रकार रोती तथा बिलखती अपने पिता से अपने पति के जीवन-दान की प्रार्थना करती रही, परन्तु उस नर-पिशाच का पाषाण-हृदय नाम-मात्र को भी न पसीजा। दूसरे दिन प्रातःकाल अफ़रासियाब ने सियावश के वध की आज्ञा दे ही दी। आज्ञानुसार सियावश वध-स्थल में उपस्थित किया गया। वध किये जाने से पूर्व ईश्वर प्रार्थना के लिये उसे थोड़ा सा समय दिया गया। ईश्वर के प्रति अपनी अंतिम प्रार्थना करते हुए उसने कहा "हे दयामय ! यदि तू वास्तव में दीन-बंधु है तो मेरे वीर्य से एक ऐसे वीर पुत्र को जन्म दे जो मेरे शत्रुओं से मेरी इस निरपराध हत्या का बदला ले सके।" उसकी बात समाप्त भी न हो पाई थी कि अफरासियाब के संकेत से उसका शिर धड़ से अलग कर दिया गया। और सारी पृथ्वी एक निरपराधी के रक्त से रंजित हो गई।

जब फिरंगियश को सियावश के वध का दुःखद समाचार मिला तो वह विलाप करती हुई उसके शव के पास आई और सेनापति तथा अन्य मुख्य व्यक्तियों को नीच-ऊँच कहने लगी। अभाग्यवश करस्योज़ भी वहाँ उपस्थित था। उसने जब यह सब सुना तो सेनापति से कहा "कोई ऐसा आयोजन किया जाय जिससे सियावश का चिन्ह मात्र भी सर्वदा को इस संसार से मिट जाय। यह सुन कर सेनापति ने वधिक को तुरन्त आज्ञा दी कि फिरंगीयश की ऐसी पिटाई करो कि गर्भपात हो जाए। उसकी इस कठोर आज्ञा को सुन कर उपस्थित जनता रोमांचित हो उठी। फिर भी किसी व्यक्ति का यह साहस न हुआ कि उससे इस हृदयहीन आज्ञा को वापिस लेने की प्रार्थना करता।

पर विधि के अटल विधान को कौन टाल सकता है। अभी न जाने क्या भवितव्य शेष था। अफ़रासियाब का प्रधान-मन्त्री उसी अवसर

पर वहाँ आ पहुँचा। उसने अफ़रासियाब के निकट जाकर कहा "महाराज अब तक जो कुछ भी हुआ सो हुआ पर अब आपकी यह आज्ञा अत्यन्त निन्दनीय है। वीर पुरुष स्त्री के साथ ऐसा नीच व्यवहार कभी नहीं करते। एक निःसहाय तथा अबला नारी पर ऐसा अत्याचार ईश्वर को भी असह्य होगा। मेरी प्रार्थना है कि आप फिरंगीयश को इस कठोर-दण्ड से मुक्त कर दें और यदि आज्ञा दें तो मैं उसको अपने घर ले जाकर रक्खूँ।" इस समय फिरंगीयश का भाग्य कुछ अच्छा ही था जो अफ़रासियाब ने अपने प्रधान-मन्त्री की इस प्रार्थना को स्वीकार कर लिया, पर साथ ही उसको यह आदेश भी दे दिया कि यदि इसके पुत्र हो तो तुम ही उसे मेरे सम्मुख उपस्थित करना। उसने नतमस्तक हो राजाज्ञा को शिरोधार्य किया और वहाँ से विदा होकर फिरंगियश को साथ ले अपने भवन की ओर चल दिया।

उक्त घटना के कुछ कालोपरांत जब अफ़रासियाब को करस्योज के कपट-व्यवहार का ज्ञान हुआ तो अपनी नृशंसता पर बहुत पछताया और अन्ततः करस्योज़ अफ़रासियाब के चित्त से एक दम उतर गया।

कैखुसरो का जन्म—अफ़रासियाब का भयंकर स्वप्न

पीरान के घर पहुँच कर फिरंगियश सुख-पूर्वक रहने लगी। अपेक्षित अवधि व्यतीत होने पर फिरंगीयश ने एक तेजस्वी तथा सुन्दर पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम उसके पिता के अन्तिम आदेशानुसार कैखुसरु रक्खा गया। कैखुसरो के जन्म के पश्चात् पीरान ने विचार किया यदि मैंने अपनी प्रतिज्ञानुसार अफ़रासियाब के सम्मुख इसे ले जाकर उपस्थित किया तो निश्चय ही वह सियावश की भाँति इसका भी वध कर डालेगा।" यह सोच कर उसने कुछ विश्वास-पात्र नौकरों के साथ उसे एक निर्जन वन में भेज दिया और स्वयं निश्चिन्त हो कर बैठ रहा। इधर कैखुसरु के जन्म ले लेने पर एक दिन रात्रि के

समय अफ़रासियाब ने एक स्वप्न देखा। उसने देखा "एक मनुष्य हाथ में दीपक लिये हुये आया है और सियावश भी उसके साथ है। निकट पहुँच कर उसने देखा कि उसके हाथ में एक रत्नजड़ित तलवार है और वह अफ़रासियाब से कह रहा है—'ओ मायावी और अभिमानी, अब तू अपनी मोह-निद्रा से सचेत हो जा! धन्य है वह घड़ी कि कैखुसरू ने जन्म लिया।' वह इस स्वप्न को देख कर काँप गया और घबड़ा कर उठ बैठा।

बिछौने से उठ कर अफ़रासियाब ने तुरन्त ही पीरान को बुलाया। जब वह आ गया तो अफ़रासियाब ने अपने स्वप्न की बात उससे कह सुनाई और कैखुसरू के जन्म लेने के विषय में प्रश्न किया। उसने उत्तर दिया "महाराज! आपका स्वप्न अक्षर-अक्षर सत्य है, कैखुसरू का जन्म निस्संदेह हुआ है। पर मैंने तो प्रसव-काल के पश्चात् ही उसे वन में डलवा दिया है।" अफ़रासियाब ने क्रोधाभिभूत उससे पूछा "तूने उसे मेरे सम्मुख उपस्थित क्यों नहीं किया।" उसने उत्तर दिया "महाराज, मैं आप का हितैषी होता हुआ आप को बचा कर पाप का भागी बनता अर्थात् जिस प्रकार आपने सियावश की निरपराध हत्या की उसी प्रकार यह निश्चय था कि आप उसका भी बध कर डालते।" अतएव मैं यह किस प्रकार देख सकता था कि आप दो-दो निर्दोषों की हत्या के उत्तरदायी हों। यही सोच कर मैंने आप को इस निरपराधी की हत्या से बचाने के लिये स्वयं ही उसको वन में फेंकवा दिया।" अफ़रासियाब पीरान का यह वक्तव्य सुन कर मौन हो रहा और फिर उस बालक के बारे में कुछ न पूछा।

उपर्युक्त घटना के दस वर्ष पश्चात् जब कैखुसरो कुछ-कुछ समझदार हो गया तो पीरान ने कुछ विद्वान् तथा युद्ध-कौशल में निपुण पदाधिकारियों को उसकी उचित दीक्षा के हेतु नियुक्त कर दिया और स्वयं एक दिन अफ़रासियाब के सम्मुख उपस्थित होकर बोला, "महाराज! बड़े आश्चर्य की बात है कि जिस बालक को मैंने वन में फिकवा दिया था

उसको एक बन पशु अपनी माँद में उठा ले गया और माता-पिता की भाँति उसने उसका भरण-पोषण किया। पर साथ ही यह भी ज्ञात हुआ है कि वह निरा पशु तथा पागल है। पीरान की इन बातों ने अफ़रासियाब को चकित तथा भयभीत कर दिया। अतएव उसने आज्ञा दी कि उस बालक को लाकर शीघ्र उपस्थित किया जाय।

यह आज्ञा पाते ही पीरान ने एक व्यक्ति को कैखुसरो के लाने के हेतु भेज दिया। साथ ही उसे यह भी समझा दिया कि वह उस बालक को यह बतला दे कि राजा के सम्मुख उपस्थित होते समय वह पागलों जैसा व्यवहार करे।

पीरान के आदेशानुसार वह व्यक्ति कैखुसरो के पास गया और पीरान का संदेश देकर तथा सब कुछ समझा-बुझा कर उसको अफ़रासियाब के सम्मुख ले आया। उस बालक ने आते ही राजा को अभिवादन किया जिस से वह लज्जित हो गया। तत्पश्चात् अफ़रासियाब ने उससे बहुत से प्रश्न किये पर उलटे-सीधे उत्तर सुनकर उसको निश्चय हो गया कि यह बालक सचमुच पागल है। अब वह उस ओर से निश्चिंत हो गया और उसी समय पीरान से कहा, "अब तुम इस बालक को फिरंगीयश को दे दो और उससे कह दो कि वह कैखुसरो को लेकर अपने मृत-पति के निवास स्थान पर जाकर रह सकती है।"

अफ़रासियाब के उक्त आदेशानुसार कैखुसरो फिरंगीयश के पास भेज दिया गया और वह उसको लेकर अपने पुराने निवास-स्थान पर फिर जा पहुँची। उसने वहाँ पहुँच कर अपने राज-भवन को श्मशान से भी अधिक भयानक तथा निर्जन पाया। राज-भवन की यह दुर्दशा तथा पति की समाधि को देख-देख कर वह फूट-फूट कर रोने लगी। पर विवश थी, कर ही क्या सकती थी। अन्ततः अपने पुत्र सहित वहीं रह कर दिन बिताने लगी।

कैकाऊस द्वारा तूरान विजय

यह पूर्व प्रसंग में लिखा जा चुका है कि जब सियावश को यह विदित हुआ कि कैकाऊस उसके प्रस्ताव से सहमत नहीं हुआ और उसने रुस्तम के स्थान पर तोस को भेजा है तो उसने तुरन्त एक पत्र कैकाऊस के पास लिख भेजा था जिसमें कि उसने रूदाबा का अपने साथ अपवित्र प्रेम तथा उसका वहिष्कार, रूदाबा का खिन्न होकर उसकी मृत्यु के हेतु उपाय सोचना, कैकाऊस को उसके वध के लिये। अकारण ही विवश करना, अपना युद्ध के बहाने ईरान त्याग करना, तथा अपने और अफ़रासियाब के बीच सन्धि के प्रस्ताव पर सहमत न होकर रुस्तम के स्थान पर तोस को नियुक्त करना, आदि सारी बातें सविस्तार लिखी थीं। और साथ ही यह भी लिख दिया था, "अब मैं आग की शरण से निकल कर अफ़रा-सियाब की शरण में जाता हूँ।" जब इस आशय का पत्र कैकाऊस को मिला था तो वह विह्वल हो उठा। रात-दिन वह इसी चिन्ता में डूबा रहता था "किसी न किसी उपाय से सियावश को फिर अपने पास बुलाऊँ"। वह अफ़रासियाब के छल-कपट से भली-भाँति परिचित था, अतएव उसको सियावश के प्राणों का भय सर्वदा लगा रहता था।

कुछ कालोपरांत सियावश की हत्या का समाचार उसे मिला जिससे उसकी आशंका सत्य प्रकाशित हुई। वह उस समाचार को सुनकर अत्यन्त दुखी हुआ और प्रतिरोध की अग्नि उसके हृदय में धधक उठी। उसने एक दूत तुरन्त ही रुस्तम के नाम एक पत्र देकर काबुल भेजा। उस पत्र में उसने सियावश के वध का दुखद समाचार रुस्तम को लिख भेजा और उसको ईरान आने का शीघ्र आदेश किया।

पत्र पाते ही रुस्तम ईरान को चल पड़ा और वहाँ पहुँच कर राज-सभा में उपस्थित हुआ तो कैकाऊस उसे देख कर फूट-फूट कर रोने लगा। थोड़ी सी देर में उसने सारा वृत्तान्त आद्योपांत कह सुनाया। सब कुछ सुनने के पश्चात् उसने कहा "महाराज! इतने बड़े राजा के हेतु

यह प्रशंसनीय नहीं है कि वह इतना दारा-भक्त बने और समस्त राज-काज उसी की ही मंत्रणानुसार करे। मेरी इच्छा तो यह है कि अब आपको उस बन्धन से मुक्त कर दूँ।" यह सुन कर कैकाऊस मौन हो रहा। उसकी सहमति समझ कर रुस्तम वहाँ से उठ कर रनिवास पहुँचा और पहुँचते ही रूदाबा का शिर धड़ से अलग कर दिया।

रनिवास से लौटने पर उसने एक बहुत बड़ी सेना एकत्रित की जिसमें कि बालक, युवा तथा वृद्ध सभी थे। वह तूरानियों के रक्त की प्यासी सेना को लेकर तूरान पर चढ़ दौड़ा। सीमा पर पहुँचते ही उसे पंजाब के शासक के साथ युद्ध करना पड़ा। उसे पराजित तथा बध करके वह और चल आगे पड़ा।

जब अफ़रासियाब को सीमा के रक्षक के खेत रहने का समाचार मिला तो उसने तुरंत ही अपने प्रिय पुत्र मारक को युद्ध के लिये भेजा। जब मारक रण-क्षेत्र में पहुँचा तो फ़रामर्ज़ उससे युद्ध करने के निमित्त आगे आया। थोड़ी देर तक तो दोनों युद्ध करते रहे, पर अन्ततः फ़रामर्ज़ ने मारक को पराजित कर के बन्दी कर लिया और रुस्तम ने उसे तुरन्त ही कैकाऊस के पास भेज दिया। कैकाऊस ने ज्यों ही अफ़रासियाब के पुत्र को देखा त्यों ही उसके पुत्र-वियोग की अग्नि फिर भड़क उठी और उसने तुरन्त ही उसके बध की आज्ञा दे दी। आज्ञानुसार तोस खञ्जर लेकर उसके वध के उद्देश्य से निकट आया। जब मारक ने काल को अपने शिर पर खड़ा देखा तो लगा रोने-गिड़गिड़ाने और बिनती करने। तोस का हृदय उसके रोने के कारण द्रवित हो आया। वह उसे रुस्तम के निकट प्राण-दान के उद्देश्य से ले आया। पर रुस्तम ने शपथ-पूर्वक कहा "मैं तूरान के किसी बच्चे को जीवित न छोड़ूँगा। अतएव इसको प्राण-दान कदापि नहीं मिल सकता।" रुस्तम की इस प्रतिज्ञा को सुन कर तोस ने तुरन्त उसका शिर काट लिया और कैकाऊस की आज्ञा से उसे गढ़ के फाटक पर लटकवा दिया।

मारक की हृदय-विदारक हत्या का दुःखद समाचार जब अफ़रासियाब

को मिला तो वह बहुत दुखी हुआ क्योंकि अपने सब पुत्रों में वह उसे अधिक प्रिय था। रोने बिलखने के पश्चात् उसने भी एक बड़ी सेना एकत्रित की और रण-स्थल की ओर चल पड़ा। उसकी सेना इतनी अधिक थी कि उसके कारण आच्छादित धूलि से सूर्य छिप गया था और ऐसा प्रतीत होता था मानो रात्रि हो गई है। जब अफरासियाब की सेना ईरानियों के सम्मुख पहुँची तो पीरान के भाई पीलसम ने रुस्तम से युद्ध करने की आज्ञा माँगी और कहा "मेरी हार्दिक इच्छा है कि मैं एक बार अपने गदा-प्रहार से उसका सारा गर्व चूर्ण कर दूँ और बन्दी बना कर आपके सम्मुख उपस्थित करूँ।" पीलसम की यह बात सुन कर अफरासियाब उसे आश्वासन देते हुए बोला "वीर! यदि आज तुम रुस्तम को बन्दी बना सको अथवा उसका बध कर सको तो मैं अपना आधा राज्य तथा एक कन्या तुम्हें दे दूँगा।" पीरान ने जब यह सुना तो बोला "महाराज रुस्तम एक अनुभवी वीर है। हमें तो आशा नहीं है कि पीलसम युद्ध-स्थल से जीवित भी लौट सकेगा।" यह सुन कर अफ्रासियाब ने कहा "पीरान! तुझे ज्ञात होना चाहिये कि पीलसम युवा तथा पराक्रमी है और मुझे दृढ़ आशा है कि वह रुस्तम का अन्त कर के ही लौटेगा।" इतना कह कर उसने एक उत्तम भाला उसे समर्पित करके युद्ध-स्थल की ओर प्रस्थान करने की आज्ञा दी।

पीलसम अफरासियाब से बिदा होकर रण-क्षेत्र में आ उपस्थित हुआ और ललकार कर बोला "वह रुस्तम जिसको कि लोगों ने अजेय समझ रक्खा है कहाँ है? आये मेरे सम्मुख आज ही तो उसे युद्ध का स्वाद मिलेगा।" उसकी उक्त दर्प-पूर्ण वाणी को सुनकर गेव अपना घोड़ा कुदा कर रण-क्षेत्र में आया और बोला "तुझ जैसे सैनिकों से युद्ध करना रुस्तम के लिए अपमान की बात है। आप प्रथम मुझसे ही निपटारा कर लें, फिर रुस्तम को बुलायें।" यह कह कर जैसे ही गेव ने चाहा कि अपनी तलवार से पीलसम के टुकड़े कर डाले वैसे ही पीलसम ने भी क्रोधित हो कर अपना भाला गेव की पेटी में घुसेड़ कर चाहा कि उसे घोड़े की

पीठ पर से खींच ले। गेव की यह अवस्था देख कर फरामर्ज़ से न रहा गया। वह झपट कर आया और अपनी तलवार से भाले के दो टुकड़े कर दिये। जब पीलसम सफल न हो सका तो तुरत ही अपनी तलवार निकाल कर दोनों पर झपटा और दोनों को ही उसने घायल कर दिया।

गेव तथा फ़रामर्ज़ को घायल होते देख कर रुस्तम भी अपने रख़्श को एड़ लगा कर मैदान में आया और पीलसम को सम्बोधन कर बोला "अरे बालक! तू जिस रुस्तम को खोजता था वह आ पहुँचा है। आगे बढ़ और हृदय की समस्त इच्छाओं को पूर्ण कर।" रुस्तम के शब्द ज्यों ही पीलसम के कान में पड़े त्यों ही वह फरामर्ज़ तथा गेव को छोड़ कर उसकी ओर झपटा। रुस्तम के निकट पहुँचकर वह बोला "मेरी इच्छा है कि मेरे और तेरे युद्ध के बीच यह दोनों अश्वारोही न पड़ें क्योंकि वीरों को उचित है कि चाहे वह धराशायी ही क्यों न हो जायँ। युद्ध की पूर्ण परिपाटी को ध्यान में रखते हुए किसी की सहायता न लें। पीलसम के यह गर्व-पूर्ण वचन सुनकर रुस्तम ने तब दोनों घायल वीरों को सेना में चले जाने का आदेश दिया। गेव तथा फ़रामर्ज़ के बाग मोड़ते ही पीलसम ने तलवार का एक हाथ रुस्तम के शिर पर ही दे दिया। इस आघात से रुस्तम के शिर में पीड़ा होने लगी। वह विचार करने लगा कि अब तक तो तूरान में कोई ऐसा वीर जन्मा नहीं यह है तो कौन है। यह युद्ध-कला में प्रवीण तथा बलिष्ठ दीख पड़ता है। अतः इससे संभल कर युद्ध करना चाहिए। इतना सोच कर उसने अपना भाला उसकी पेटी में फंसा कर उस को घोड़े की पीठ पर से ऊपर उठा लिया और तूरान की सेना के सम्मुख लेजा कर पृथ्वी पर दे पटका और बोला "ओ कपटी अफ़रासियाब! आ, और इसको अपना आधा राज्य तथा पुत्री दे। इस जैसा वीर तेरी सेना में अब नहीं है, जो तेरा दामाद बन सके। और इसको क्या कहूँ कि इसने स्त्री तथा धन के लोभ में पड़ कर अपने जीवन को संकट में डाला। अरे नीच, जब तूने सियावश को अपने मायाजाल में फँसा कर निर्दयतापूर्वक उसके जीवन का अन्त किया तो फिर तू

किसका विश्वास भाजन बन सकता है ? इतना कह कर अपनी सेना की ओर चल दिया। उस दिन फिर कोई रुस्तम से युद्ध के लिए आगे नहीं आया।

दूसरे दिन जब सूर्योदय हुआ तो अफ़रासियाब अपने सेनापति तथा अन्य वीरों को बुला कर पूछने लगा कि आज कौन योद्धा रुस्तम से युद्ध में प्रवृत्त होगा। पहिले थोड़ी देर तक तो सब मौन रहे, पर अन्त में सेनापति बोला "महाराज ! हम लोगों के पक्ष में केवल पीलसम ही एक ऐसा वीर था पर जब रुस्तम ने उसको ही तिनके की भाँति उठाकर पृथ्वी पर दे पटका तो भला अब किसका साहस है कि वह अपने प्राण गंवाने के लिए उसके संमुख जाये ? हाँ, यदि आप मुझसे भी कहें तो मैं भी उस सिंह के मुख में जान बूझ कर कदापि नहीं जाऊँगा, चाहे आप अपने हाथों से ही मेरा वध क्यों न कर डालें।" जब अफ़रासियाब ने देखा कि कोई भी योद्धा रुस्तम से युद्ध करने का साहस नहीं करता तो विवश होकर वह स्वयं ही उससे युद्ध करने को उद्यत हुआ।

उपर्युक्त वार्त्तालाप के पश्चात् अफ़रासियाब ने घोड़े की बाग रण-स्थल की ओर फेरी और मैदान में पहुँच कर रुस्तम को ललकारा। रुस्तम ने जो अफ़रासियाब का कंठ-स्वर सुना तो बोला "आज विधाता ने स्वयं ही उसको भेज दिया अब मैं जाकर उससे सियावस की हत्या का बदला चुकाऊँ।" यह कहता हुआ वह रण-स्थल में आ उपस्थित हुआ। प्रथम तो दोनों ओर से वाण-वर्षा हुई, तत्पश्चात् भाले चमकने लगे। एक बार अफ़रासियाब ने अवसर पाकर भाला रुस्तम के पेट में घुसेड़ दिया। भाला पेटी को चीरता हुआ रुस्तम के शरीर में जा चुभा। पर कुशल यही हुई कि रुस्तम को गहरा घाव नहीं लगा। इधर रुस्तम ने इसी अवस्था में जो भाला चलाया तो वह प्रतिद्वन्दी के घोड़े के सिर में लगा। रुस्तम की उस चोट को घोड़ा सहन न कर सका और पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसके गिरते ही रुस्तम ने चाहा कि अपने भाले द्वारा अफ़रासियाब को पृथ्वी पर से ऊँचा उठा ले कि इतने ही में हूँमा ने

सेना से निकल कर रख़्श पर अपनी गदा चलाई। गदा की चोट से रख़्श विचलित हो उठा, परन्तु ईश्वर की कृपा से रुस्तम उसकी पीठ पर निश्चल बैठा रहा। इस घटना के बीच अफ़रासियाब को अवसर जो मिला तो वह झट दूसरे घोड़े पर चढ़ अपने प्राण लेकर भाग खड़ा हुआ।

अफ़रासियाब को भागता देख रुस्तम हूँमां के ऊपर पिल पड़ा। जब हूँमां ने देखा कि तबेले की बला बन्दर के सिर आना चाहती है तो तुरन्त ही घोड़े की बाग मोड़ कर भागा; फिर भी रुस्तम ने उसका पिण्ड न छोड़ा और उसके पीछे अपना घोड़ा डाल ही दिया। ईरानी सेना ने जब रुस्तम को इस प्रकार पीछा करते देखा तो स्वयं तूरानियों पर आक्रमणकारी हुई। बड़ी देर तक युद्ध होता रहा। अन्त में तूरानी सेना के पाँव उखड़ गये और वह पीठ दिखा कर भाग खड़ी हुई। ईरानियों ने उसका पीछा किया और इस भगदड़ में भी बहुतों को परलोक की यात्रा करा दी।

रुस्तम तथा उसके सैनिकों के हाथों मरती-खपती जो सेना शेष रह गई वह अफ़रासियाब के पास जा पहुँची। जब अफ़रासियाब ने अपनी सेना से अपनी पराजय का समाचार सुना तो अचानक उसे कैख़ुसरो का ध्यान हो आया। वह सोचने लगा कि कहीं ऐसा न हो कि कैख़ुसरो रुस्तम के हाथों में पड़ जाय। अतएव उसने तुरंत अपने सेवकों द्वारा कैख़ुसरो को बुलवा कर कहा "तुम लोग इस को लेकर चीन नदी के उस पार ले जाओ क्योंकि वहाँ शत्रुओं का कोई भय नहीं है।"

इधर अफ़रासियाब तो कैख़ुसरो को अपने सैनिकों की रक्षा में चीन नदी के उस पार भेजने में व्यस्त था, उधर रुस्तम प्रत्येक तुर्क को परलोक की यात्रा के लिये भेजने लगा। यहाँ तक कि जिस किसी ने अफ़रासियाब का नाम लिया वही उसके बलिदान का बकरा बना। निरीह प्रजा को छोड़ कर उसने शेष सभी तुर्कों का बध कर के बहुत सा धन, घोड़े तथा हाथी लूट मार कर एकत्रित किये। ईरान की ओर प्रस्थान

करने के पूर्व उसने गेव को राजकुमार कैखुसरो की खोज में भेज कर फ़रामर्ज़ को तूरान के पराजित भाग का संरक्षक नियुक्त कर दिया। इन कार्यों से छुट्टी पाकर वह सब लूट का धन, घोड़ा, हाथी, नौकर चाकर तथा अन्य बहुमूल्य वस्तुएं लेकर कैकाऊस के सम्मुख पहुँचा। कैकाऊस सब समाचार सुन कर तथा धन इत्यादि देख कर अतीव प्रसन्न हुआ।

गेव द्वारा कैखुसरो की खोज

रुस्तम के चले जाने के पश्चात् गेव भी अपने घोड़े शब्देज़ पर चढ़ कर कैखुसरो की खोज में अकेला ही चल पड़ा। पहिले उसने चीन की नदी की ओर प्रस्थान किया। राह चलते प्रत्येक सवार से वह कैखुसरो का पता पूछता, पर कोई भी उसे संतोष-प्रद उत्तर न देता। पता न मालूम होने पर वह उस अश्वारोही का बध कर डालता, क्योंकि उसे भय था कि कहीं कोई जाकर तूरान के शासक से इस मर्म को प्रकट न करदे। वह कैखुसरो की खोज में इतना तन्मय था कि उसे अपने भोजन तथा नींद तक की याद न आती थी।

गेव के प्रस्थान के पश्चात् उसके पिता गोदर्ज़ ने स्वप्न देखा कि गेव कैखुसरो की खोज में अकेला ही मारा-मारा फिरता है। जब सवेरे उसकी आँख खुली तो उसने कुछ विश्वास-पात्र व्यक्तियों को उसके पास भेजा कि वह उसके साथ दिन-रात रह कर कैखुसरो की खोज करें। वह लोग चल तो दिये पर गेव की भाँति वह भी भटकते ही रहे और उन्हें उसका कुछ भी पता नहीं मिला। करते क्या, गोदर्ज़ की आज्ञा से विवश थे।

योंही खोजते-खोजते एक दिन गेव को कुछ अश्वारोही दिखाई पड़े। जब वह निकट आये तो उन्होंने गेव से पूछा "तुम कौन हो और इस निर्जन स्थान में कैसे आ निकले।" गेव ने उत्तर दिया "मैं एक आखेट के पीछे-पीछे यहाँ आ निकला और अब लौटने का मार्ग भूल कर यहीं भटक रहा हूँ।" इसके पश्चात् गेव ने फिर उनसे तुर्की भाषा में ही

पूछा "आप कौन हैं और किस ओर जाने का विचार रखते हैं ?" उन लोगों ने कहा "हम अफ़रासियाब के सैनिक हैं और कैख़ुसरो के पास जा रहे हैं।" यह सुन कर गेव उनके साथ हो लिया। चलते-चलते रात हो गई, अतः एक स्थान पर उन लोगों ने अपना डेरा डाला। गेव कई दिन का थका था, पड़ते ही गाढ़ी निद्रा में निमग्न हो गया। जब वह सो गया तो वन-अश्वारोहियों को कुछ शंका हुई और वे सोचने लगे कि यह कोई ईरानी न हो, जो हम लोगों को छल रहा हो। अतएव वह सब उसको सोता छोड़ कर चल दिये।

दूसरे दिन प्रातःकाल जब गेव सो कर उठा तो उन अश्वारोहियों में किसी का चिन्ह तक नहीं दिखाई पड़ा। विवश हो वह उसी पते पर जिसे कि उसने उन लोगों से पूछा था, चल दिया। अन्ततः चलते-चलते वह एक सोते के निकट जा पहुँचा। वहाँ उसने देखा कि एक सुन्दर युवक जिसको देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि वह कोई राजकुमार है, उसी सोते के किनारे मदिरा-पात्र अपने हाथ में लिये बैठा है। यह देख कर वह आगे बढ़ा और निकट पहुँच कर अभिवादन करते हुए पूछा "हे राजकुमार ! क्या मैं यह जान सकता हूँ कि आप ही सियावश के पुत्र कैख़ुसरो ?" उसके इस प्रश्न को सुन कर कैख़ुसरो ने हँस कर कहा "हाँ" और फिर कहा "मुझे विश्वास है कि तुम ही गोदर्ज़ के पुत्र गेव हो।" उसकी इस बात को सुन कर गेव घोड़े से उतर पड़ा और उसके सम्मुख जाकर अपने शिर को अभिवादन के रूप में झुका दिया। आश्चर्य-चकित हो उसने पूछा "राजकुमार ! आपने मुझे पहिचान कैसे लिया ?' उसने उत्तर दिया "मेरे पिता के राजभवन में समस्त पहलवानों के चित्र अंकित हैं और मेरी माता ने मुझे सब के नाम से परिचित करा दिया है। अब यदि रुस्तम, तोस तथा गोदर्ज़ भी आयें तो पल भर में मैं उनको पहिचान सकता हूँ।" जब गेव ने यह बात सुनी तो उसका कौतूहल शांत हो गया।

थोड़ी देर बैठने के पश्चात् कैख़ुसरो ने फिर गेव से पूछा "भला

तुम तो बताओ कि तुमने मुझे किस प्रकार पहिचान लिया।" गेव ने उत्तर दिया "हे राजकुमार, आपका सुन्दर मुख तथा तेजस्वी रूप स्वयं ही आपके राजवंशी होने का सजीव प्रमाण है और इन्हीं चिन्हों से मैंने आपको पहिचाना। अब यदि आप मेरी धृष्टता को क्षमा करें और अपनी भुजा को नग्न करके दिखा दें तो पुष्ट प्रमाण का अभाव न रहे। कैखुसरो ने उसकी इस प्रार्थना को स्वीकार कर तुरन्त अपनी भुजा खोल दी। जब गेव ने भुजा पर अपेक्षित काला चिह्न देखा तो गद्गद् हो गया और झट अपना मस्तक पृथ्वी पर टेक दिया। प्राचीन काल में प्रत्येक राज-वंश का एक चिह्न होता था जो कि उसकी सन्तान की भुजा पर अंकित रहता था और यह वही चिह्न था जिसको देखने के लिये गेव इतना उत्सुक था।

शिष्टाचार के पश्चात् गेव ने राजकुमार को घोड़े पर सवार कराया और फ़िरिंगियश के पास चल दिया। वहाँ पहुँच कर उसने ईरान तथा तूरान के युद्ध का सारा वृत्तान्त उन लोगों से कहा। यह समाचार सुन कर फिरिंगियश ने कहा, "अब तुम लोगों की भलाई इसी में है कि तुरन्त तूरान छोड़ कर ईरान के लिये प्रस्थान करो।" उसने गेव से कहा, "यहीं निकट में एक अश्वशाला है। तुम वहाँ से जाकर एक तेज़ घोड़ा ले आओ।" गेव ने तुरन्त उसकी आज्ञा का पालन किया और दो अच्छे घोड़े लेकर फिरिंगियश के सन्मुख उपस्थित हुआ। वे तीनों उन्हीं घोड़ों पर सवार होकर ईरान की ओर चल दिये।

इधर पीरान के गुप्तचरों ने जब उस अश्वारोही को अपने स्थान पर न पाया तो सीधे कैखुसरो के कारागृह की ओर गया। जब वहाँ पहुँच कर उन लोगों ने देखा कि कैखुसरो भी नहीं है तो सीधे पीरान के पास पहुँचे और उस अश्वारोही तथा कैखुसरो के निकल भागने का वृत्तान्त आद्योपान्त कह सुनाया। उसने कैखुसरो की रक्षा का भार अपने सिर लिया हुआ था, अतः अपने हृदय में बहुत डरा और इसी सोच

तथा क्रोध में उसने गुलबाद को गेव, कैखुसरो तथा फिरिंगियश की खोज में सेना-सहित भेज दिया।

गुलबाद उससे विदा होकर कैखुसरो की खोज में निकले। चलते-चलते गुलबाद उस स्थान पर पहुँच गया जहाँ वह तीनों विश्राम के हेतु सो रहे थे। ज्योंही वह लोग उनके निकट पहुँचे कि गेव की नींद टूट गई। उसने जब इन लोगों को देखा तो तुरन्त अपनी तलवार तथा गदा लेकर इन लोगों से जुट गया। गेव इतनी वीरता से लड़ा कि अकेले ही गुलबाद की समस्त सेना को धराशायी कर दिया। गुलबाद ने जो यह देखा तो प्राण लेकर भागा और पीरान के पास पहुँच कर सब वृत्तान्त कह सुनाया।

गुलबाद तथा उसके संगियों को परास्त करके गेव कैखुसरो के निकट आया और उसे जगा कर उससे सब समाचार कह सुनाया। कैखुसरो ने कहा, "फिर तुमने मुझे क्यों नहीं जगाया और अकेले ही युद्ध क्यों करते रहे।" यह सुन कर गेव ने बड़ी नम्रता के साथ कहा, "राजकुमार आप के प्रताप की छाया ही सर्वदा हम लोगों की सहायता करती है और उसी के बल पर हम लोग आपके शत्रुओं का दमन करते हैं।" यह कह कर उसने, जैसा कुछ भोजन जुटा सका उन लोगों को खिलाया और उस स्थान को छोड़ कर अपनी यात्रा फिर आरम्भ कर दी।

इधर गुलबाद के पहुँचने तथा सब समाचार सुनने पर पीरान के क्रोध की सीमा न रही। वह तुरन्त असंख्य सैनिक लेकर गेव तथा अपने बन्दियों के लिये चल दिया और इस वेग से चला कि दो-दो दिवस की यात्रा एक ही दिन में पूरी करता था। अन्ततः वह गेव के पड़ाव के निकट जा पहुँचा। उस समय फिरिंगियश के अतिरिक्त और सब गाढ़ निद्रा में निमग्न थे। उसने जब दूर से सेना को आते देखा तो यह अनुमान कर लिया कि गुलबाद के पराजित होने का समाचार पाकर पीरान स्वयं ही आ रहा है। अतएव उसने गेव तथा कैखुसरो को जगा दिया और पीरान के आगमन की सूचना दे दी। यह सुन कर कैखुसरो

ने कहा "मामा अब क्या भय है। इस समय तो हम भी दो हैं।" गेव ने जब यह सुना तो कहने लगा "राजकुमार जब तक मेरे शरीर में रक्त तथा रक्त में नाम-मात्र को भी जीवन शेष है, तब तक आप को युद्ध में जाने की कोई आवश्यकता नहीं। मैं अकेला ही उनसे युद्ध करूँगा।" कैखुसरो ने कहा "ऐ वीर यह तो ठीक है परन्तु तनक तुम यह तो सोचो कि पीरान की इतनी बड़ी सेना से तुम अकेले किस प्रकार लड़ सकोगे। मेरी इच्छा है कि मैं तुम्हारी सहायता करूँ" गेव ने कहा, "हे राजकुमार, प्रथम तो तुम को युद्ध का कुछ अनुभव नहीं, अतएव चिन्ता इस बात की है कि कहीं तुम को कोई घाव न लग जाय। दूसरे यह कि मैं भी रुस्तम की भांति युद्ध में किसी की सहायता नहीं लेता। रुस्तम ने इस विषय में कई बार मेरी परीक्षा ली और प्रत्येक बार उत्तीर्ण होने पर उसने प्रसन्न हो कर अपनी पुत्री का हाथ मेरे हाथ में दिया था।" 'अब आप मुझे निश्चिन्त होकर युद्ध करने दें और किसी ऊँचे स्थान पर चढ़ कर देखें कि मैं कैसा युद्ध करता हूँ। "राजकुमार विवश होकर गेव के प्रस्ताव से सहमत हो गया और गेव अकेला ही रणक्षेत्र में अवतीर्ण हुआ।

इधर तूरान की ओर से पशन नामक योद्धा अपना भाला नचाता हुए रणांगण में उतरा और आते ही बोला 'गेव तू ईरान से आकर राजकुमार को चुरा कर भागना चाहता है। याद रख कि आज तू जीवित कदापि नहीं लौट सकता।" इतना कह कर उसने अपनी गदा का प्रहार गेव के शिर पर किया। गदा के आघात से उसके शिर से रक्त की धारा बह चली परन्तु धन्य वीर गेव कि ऐसी करारी चोट खाकर भी अपने घोड़े पर अटल और अचल बैठा रहा और प्रतिरोध में उसने अपने भाले को इस वेग से चलाया कि वह पशन की हड्डियों को तोड़ता हुआ कलेजे में जा घुसा और रक्त की धार बह चली। पशन इस सांघातिक चोट को न सह सका और तुरन्त घोड़े के नीचे जा गिरा।

पशन के धराशायी होते ही पीरान अपना घोड़ा कुदा कर रणभूमि

में आ पहुँचा और कहने लगा — "ओ गेव, तूने अब तक तूरान की सेना के साथ युद्ध किया है परन्तु अब तू संभल जा। देख तेरा काल तेरे शिर पर आ गया है। तेरे कवच को चूर-चूर कर अब तुझे कफन पहनाऊँगा।" यह सुन कर गेव ने उत्तर दिया—"अरे कायर, तू किस से बातें कर रहा है। मैं वही गेव हूँ जो तेरी दोनों पत्नियों को चीन से ले गया था। उस समय क्या किया था तू ने! रुस्तम के अतिरिक्त इस संसार में और कोई वीर नहीं है जो मुझ से युद्ध कर सके।" इस बात से पीरान के मुख की भावभंगियाँ विकृत हो गयीं और वह भीत हो गया। फिर भी प्रकाश्य रूप में कहने लगा 'जा मैंने तुझे मुक्त कर दिया। अब तू चुपचाप चला जा" पीरान की इस भय-संयुक्त क्षमा की बात सुन कर गेव ने कहा "तू ने तो मुझे मुक्त कर दिया पर मैं तो तुझे मुक्त नहीं कर सकता। तुझे बन्दी रूप में ईरान ले जाऊँगा।" इतना कह कर उसने अपना घोड़ा बढ़ाया। पीरान ने जो यह यह देखा तो रण-भूमि से भागा। परन्तु गेव कब छोड़ने वाला था। उसने तुरन्त अपनी नागपाश फेंक कर उसका गला जकड़ लिया और लगा अपनी ओर खींचने। तूरानियों ने जो अपने सेनापति को इस प्रकार विपद्-ग्रस्त देखा तो तुरन्त गेव पर फट पड़ी और लगी बाण, तलवार तथा गदा की वर्षा करने। परन्तु ईश्वर जाने कि गेव का शरीर था कि वज्र कि उसको इस आक्रमण तथा प्रहार का नाम-मात्र भी घाव न लगा। इस अवसर पर गेव का युद्ध अवश्य दर्शनीय था। वह एक हाथ से पीरान को अपनी ओर खींचता था और दूसरे से अपनी गदा द्वारा शत्रुओं का कचूमर निकाल रहा था। मारते तथा मार खाते हुये वह पीरान को खींच कर कैखुसरो के निकट ले गया और कमन्द उसके हाथ में देकर स्वयं फिर शत्रुओं में जा घुसा। कहाँ तक कहें कोई भी योद्धा उसका सामना न कर सका और सब के सब भाग खड़े हुये।

तूरानियों को भगा कर वह फिर राजकुमार के पास आया और पीरान के बध की आज्ञा माँगी। पर कैखुसरो तथा फिरिंगियश ने सियावश की मृत्यु से लेकर अपने भागने तक की कथा कह सुनाई और

कहा, "यह सर्वदा से हम लोगों का शुभचिन्तक रहा है अतएव इसको प्राण-दान देना उचित है।" फिरंगियश तथा कैखुसरो की यह बात कर्ण-गोचर होते ही गेव बोला, "राजकुमार मैंने यह शपथ खाई है कि मैं पृथ्वी को पीरान के रक्त से रंजित करूँगा।" जब राजकुमार को गेव की शपथ का भान हुआ तो उसने कहा, "अच्छा तुम अपने खञ्जर से इसके कान में छेद कर दो। इस भाँति जब इसका रक्त पृथ्वी पर टपकेगा तो तुम्हारी भी शपथ पूर्ण हो जायगी और इसको भी प्राण-दान मिल जायगा। गेव ने राजकुमार के कथनानुसार आचरण किया और कर्ण छेद कर पीरान को बन्धन-मुक्त कर दिया।

गेव के हाथ से छुटकारा पाते पीरान अफ्रासियाब के पास चला गया। पीरान जब अफ्रासियाब के पास पहुँचा तो उसने अपनी पराजय, बन्धन तथा मुक्ति का सारा वृत्तान्त कह सुनाया। अफ्रासियाब यह सम्पूर्ण वृत्तान्त सुन कर अत्यन्त खिन्न हुआ और उसी समय प्रत्येक सीमा रक्षक को इस आशय की आज्ञा भेजी कि अमुक वेषधारी दो पुरुष और एक स्त्री को जहाँ कहीं पाओ मार डालो और स्वयं एक बहुत बड़ी सेना लेकर इन तीनों की खोज में चल दिया।

पीरान को जीवनदान देने तथा उसके चले जाने के पश्चात इन तीनों ने भी अपना रास्त लिया। चलते-चलते ये लोग जेहूँ नदी के तट पर पहुँचे। उस समय जेहूँ बाढ़ पर थी। कैखुसरो तथा फिरंगियश को थोड़ी दूर पर छोड़ गेव घाट के संरक्षक के पास पहुँचा और पार जाने को उससे नाव माँगी। मुखिया ने गेव से आज्ञा-पत्र माँगा, परन्तु गेव द्वारा यह जान कर कि उनका आज्ञा-पत्र खो गया है कहा, "फिर तो मैं तुमको पार उतारने में विवश हूँ।" परन्तु फिर क्षण भर ठहर कर बोला, "यदि वह काला घोड़ा मुझे दे दो तो मैं तुम्हें पार करा दूँ।" गेव ने कहा यह घोड़ा तो राजकुमार का है और मेरा इस पर कोई अधिकार नहीं है। यह सुन कर वह फिर बोला "अच्छा यदि तुम घोड़ा न देकर बाँदी को ही मुझे दे दो। तो भी मैं तुम्हारा कार्य कर दूँ।" गेव ने कहा

"यह तो राजकुमार की माता हैं, अतएव यह भी असम्भव है।" तीसरी बार संरक्षक ने कहा "अच्छा तो तुम मुझे यह मुकुट ही दे दो' परन्तु उसकी यह माँग भी स्वीकृत न हुई। अन्त में उसने कहा "यदि कुछ नहीं हो सकता तो कम से अपना कवच ही दे दो।" इस बार गेव ने फिर नकारात्मक उत्तर देकर कहा "इसके अतिरिक्त और जो कवच तुम माँगो दे सकता हूँ।" परन्तु इससे वह सहमत न हुआ और कहने लगा "इन चारों वस्तुओं में से तुम एक भी नहीं दे सकते तो मैं भी तुम्हें पार नहीं कर सकता।"

गेव संरक्षक के इस निराशापूर्ण उत्तर को सुन कर चुप हो गया, फिर बोला—"यदि तुम नाव न दोगे तो हम लोग पैदल ही नदी पार कर लेंगे।" गेव की इस अनहोनी बात को सुन कर वह हँसने लगा। परन्तु गेव इस पर दृढ़ होकर राजकुमार के पास गया और उससे सम्पूर्ण वृत्तान्त कह कर उसने फरीदूँ के जेहूँ नदी को पैदल ही पार करने की कथा कह सुनाई। फरीदूँ की इस कथा ने कैखुसरो के हृदय पर बड़ा अच्छा प्रभाव डाला। फलतः उसने तुरन्त अपना घोड़ा पानी में डाल दिया। और गेव तथा फिरंगिशश भी नदी में उतर गये। यह लोग अभी नदी का आधा पाट भी पार न कर पाये थे कि अफरासियाब आँधी की भाँति तीर पर आ गया और कैखुसरो तथा उसके संगियों को इस प्रकार नदी पार करते देख कर तुरन्त नाविकों को बुलाया। और उनका पीछा करने के लिये प्रस्तुत हो गया। परन्तु उसके सेनापति हूमा ने उसको समझाया कि महाराज आप ऐसा कार्य्य न कीजिये क्योंकि आप के पास थोड़ी सी सेना है और जेहूँ के उस पार ईरानियों की असंख्य सेना पड़ी है। ऐसी अवस्था में आपका उस पार जाना असंगत है और मृत्यु को न्योता देना है। हूमा की यह बात उसके हृदय में जँच गई, उसने अपना विचार स्थगित कर दिया और अपनी राजधानी की ओर लौट पड़ा।

इधर कैखुसरो भी ईश्वर की सहायता तथा अपने प्रताप से जेहूँ नदी को सकुशल पार कर के दूसरे तट पर पहुँचा। वहाँ गेव ने राजकुमार

के सकुशल आ पहुँचने का शुभ-सन्देश कैकाऊस के पास भेजा। पत्र को पढ़ते ही कैकाऊस गद्‌गद् हो उठा और ईश्वर को धन्यवाद देने के पश्चात् तुरन्त तोस, गुर्ग, गोदुर्ज तथा अन्य प्रधान काजियों को उसके स्वागत के लिये भेजा। जब यह लोग राज-सभा में पहुँचे तो उचित शिष्टाचार तथा प्रेम-प्रदर्शन के पश्चात् कैकाऊस ने एक दूसरा रत्न जटित सिंहासन मँगाया। सिंहासन आ जाने पर कैकाऊस ने राजकुमार को उस पर आरूढ़ कराया।

ईरान का कैखुसरो के अधीन होना

कैखुसरो को सिंहासनारूढ़ करने के पश्चात् कैकाऊस समस्त राज दरबारियों को सम्बोधन कर के बोला "आपको यह ज्ञात है कि कैखुसरो मेरा पौत्र है और आत्मा का अंश है। मेरी हार्दिक इच्छा है कि मैं उसे अपना उत्तराधिकारी बनाऊँ।" कैकाऊस के इस भाषण को सुनकर सभी ने नतमस्तक हो स्वीकृति प्रकट की, केवल तोस ही एक व्यक्ति निकला जो राजा के इस प्रस्ताव से सहमत न हुआ और राज-सभा से उठकर चला गया।

राज-सभा से निकल कर तोस सीधा फ़रेबुर्ज़ के पास गया और राज-सभा का सारा वृतान्त उससे कह सुनाया। उसने यह भी कहा "उसके पुत्र होने के कारण प्रथम उत्तराधिकारी आप ही हैं। मेरी यह इच्छा है कि ईरान के शासक आप ही हों।" तोस की इन बातों को सुन कर उसने भी अपने पिता के इस कार्य्य को अनुचित बतलाया और तोस के प्रस्ताव के प्रति सहमति प्रकट की। जब तोस ने फ़रेबुर्ज़ को भी इस बात पर दृढ़ देखा तो उसने सब से पृथक हो कर उसकी राजगद्दी की। फ़रेबुर्ज़ ने इसके उपलक्ष में उसे बहुत सा धन-धान्य दिया। और तोस सहर्ष वहाँ से बिदा होकर अपने भवन में आया।

कैकाऊस के भाषण के दूसरे दिन गोदुर्ज़ ने एक दूसरे राज-भवन में एक नवीन सिंहासन रखवा कर बड़े उत्साह के साथ कैखुसरो की राजगद्दी

की तैयारी की। ईरान के समस्त पदाधिकारी, राजा के सम्बन्धी तथा सब पहलवान उसमें सम्मिलित हुए। गोदुर्ज़ ने सब का उचित स्वागत किया। इसी बीच उसे ध्यान आया कि तोस तथा फ़रेबुर्ज़ अब तक नहीं आये। अतएव उसने अपने पुत्र गेव को उनके बुलाने के हेतु भेजा। जब गेव तोस के पास पहुँचा तो तोस ने कहा "तुम्हारे पिता का यह कार्य कितना उपहासास्पद है। उसने कैखुसरो को राज्याधिकारी बना कर न्याय की हत्या की है। उचित तो यह था कि फ़रेबुर्ज़ को जो वास्तव में राजा का पुत्र तथा प्रथम उत्तराधिकारी है, राजमुकुट पहनाता। उसने उस वनमानुष को राजा बनाया है। मैं यह अन्याय सहन नहीं कर सकता और न कभी उसके सम्मुख नत-मस्तक ही हो सकता हूँ।" गेव ने कहा "तोस तनक ध्यान से सोचो, सियावश भी तो राजा का पुत्र था, परन्तु अफ़रासियाब के हाथों अकारण अकाल मृत्यु का ग्रास हुआ दूसरे यह कि कैखुसरो स्वयं भी वीर है। उसने फरीदूँ की भाँति जेहूँ नदी को बिना नौका के पार किया था। अतएव प्रथम तो उसकी वीरता देख कर फिर सियावश की आत्मा की शान्ति के लिए उसको यह राजगद्दी देना अन्याय नहीं बल्कि न्याय है।" इतना सब समझाने बुझाने पर भी तोस सहमत न हुआ। गेव विवश हो अपने पिता के पास लौट गया।

अपने पिता के निकट पहुँच कर गेव ने सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया। तोस के इन दृढ़ तथा क्रान्तिकारी विचारों को सुन कर गोदुर्ज़ आपे से बाहर हो गया और गरज कर बोला "अच्छा मैं स्वयं जाता हूँ और उसे उसके इन घृणित विचारों का फल चखाता हूँ, सर्वदा के लिये उसका चिह्न तक मिटाये देता हूँ।" इतना कह कर वह अपने घोड़े पर सवार होकर तथा युद्ध-शस्त्रों से सुसज्जित होकर दो सहस्र सैनिकों को साथ ले तोस के पास चल दिया।

जब तोस को गोदुर्ज़ के आगमन का समाचार मिला तो वह भी अपनी सेना-सहित रण-भूमि में आकर डट गया। जब दोनों सेनाएँ एक दूसरे के सम्मुख आ गईं तो तोस ने मन में विचार किया कि इस युद्ध

से राजा के अतिरिक्त हमें क्या लाभ होगा। दूसरे यह कि अफ़रासियाब को जब इस फूट का ज्ञान होगा तो वह तुरन्त ही सेना लेकर चढ़ दौड़ेगा। अतएव उत्तम तो यह है कि प्रथम हम दोनों राजा के पास चलें। वह जो निर्णय करे वही हो। अतएव उसने गोदुर्ज़ को इसी आशय का पत्र लिखा। जब गोदुर्ज़ ने पत्र पढ़ा तो वह सहमत हो गया।

इधर जब कैकाऊस को यह सूचना मिली कि गोदुर्ज़ ने तोस पर चढ़ाई कर दी है तो उसने तुरन्त एक दूत द्वारा इस आशय का पत्र भेजा "तुम यह क्या अन्धेर कर रहे हो जो आपस ही में रक्त-पात करने को उद्यत हो गये हो। तुम दोनों तुरन्त मेरे पास आओ।" कैकाऊस के इस पत्र को पाकर तोस तथा गोदुर्ज़ दोनों कैकाऊस के निकट गये और सारी बातें, सविस्तार कह सुनाईं। इसके अतिरिक्त गोदुर्ज़ ने कहा 'ऐ तोस! आख़िर तो तू नौज़र ही का पुत्र है। वह क्रोधी प्रकृति का जीव था और तू पागल।" गोदुर्ज़ की यह बात सुन कर तोस को क्रोध आ गया और कहने लगा "भला तू ही कहाँ का राजा या राजकुमार था। तू तो असफ़हान का एक साधारण लोहार था परन्तु हमारी ही शरण में आकर आज इस पद को प्राप्त हुआ है और हम ही से ऐसी नीच बातें करता है।" तोस की इन बातों ने गोदुर्ज़ की क्रोधाग्नि में घृत का कार्य्य किया और वह भभक कर बोला "ए तोस! मुझे लोहारी कार्य से कोई घृणा नहीं है। पुरुष का आभूषण वीरता है। तुझे विदित हो कि वह मेरा ही पिता कावा था जिसने कि भरी राज सभा में ज़ोहाक के आज्ञा-पत्र को टुकड़े-टुकड़े कर दिया था। यह विजय-चिह्न दुरफ़श कावयानी मेरी ही पिता की स्मृति है। ध्यान रख कि मैं उसी का पुत्र हूँ। भला तेरा इतना साहस जो मुझसे युद्ध करे।"

गोदुर्ज़ की यह अपमान-जनक बातें सुन कर तोस गरज कर बोला "हे नीच! सचेत हो और अपनी जिह्वा का कार्य संचालित न कर। यह मैं जानता हूँ कि तू वीर है। परन्तु याद रख कि मैं भी कायर नहीं

हूँ । यदि तेरी गदा पहाड़ की भाँति भारी है तो मेरी तलवार से अलबुर्ज तक जल की भाँति तरल हो कर बह निकलता है । यदि तेरे बाण शत्रु के शरीर को छिन्न-भिन्न कर सकते हैं तो मेरा भाला भी शत्रु के हृदय को बेध सकता है ।" तोस तथा गोदुर्ज के इस वाद्विवाद से कैकाऊस शंकित हो उठा और उसको यह भय होने लगा कि कहीं यह दोनों एक दूसरे पर आक्रमण न कर बैठें । अतएव उसने दोनों को डाँट कर मौन धारण करने की आज्ञा दी । थोड़ी देर मौन रहने के पश्चात् गोदुर्ज बोला "महाराज । अच्छा तो यह होगा कि आप फरेबुर्ज को भी बुलाइये और दोनों की परीक्षा लीजिये । जो उत्तीर्ण हो वही राजसिंहासन का उत्तराधिकारी बनाया जाय ।" कैकाऊस गोदुर्ज के इस मत से सहमत हुआ और कैखुसरो तथा फरेबुर्ज को बुला कर बोला "मेरे प्रिय पुत्रो, मेरी इच्छा है कि अब मैं तुम दोनों में से एक को राज्य का उत्तराधिकारी बनाऊँ । परन्तु भय इस बात का है कि यदि मैं तुम्हें उत्तराधिकारी घोषित करता हूँ तो कैखुसरो को उलहने का अवसर मिल जायगा और यदि उस का राज्य-तिलक करता हूँ तो तुम को बुरा मालूम होगा । अतएव तुम दोनों में से जो ज़र-पहन गढ़ को विजय करेगा वही राज्य का उत्तराधिकारी होगा ।"

कैकाउस की उक्त बातें सुन कर फ़रेबुर्ज झट बोल उठा "पिता जी ! मुझे आज्ञा दीजिए ताकि जा कर उस गढ़ पर विजय प्राप्त करूँ ।" कैकाऊस ने अन्य सरदारों से इस की अनुमति ले कर फ़रेबुर्ज़ को बिदा किया ।

पिता से बिदा हो तोस की संरक्षता में एक विशाल सेना लेकर फ़रेबुर्ज़ ज़रपहन की ओर चल दिया । जब गढ़ के निकट पहुँचा तो देखा कि वहाँ की सारी पृथ्वी भट्टी की भाँति जल रही है और वायु अग्नि-वर्षा करती हुई चलती है । वह कई दिवस पर्यन्त उस गढ़ का घेरा डाले पड़ा रहा परन्तु लाख प्रयत्न करने पर भी उसे उस गढ़ का फाटक तक

न मिला। उसके अनेक योद्धा इसी प्रयत्न में काम आये। अन्त में विवश हो कर वह ईरान को लौट आया।

जब फरेबुर्ज़ के विवश हो कर लौट आने का समाचार राजा को मिला तो उसने कैखुसरो को गढ़-विजय के हेतु भेजा। वह जब गढ़ के निकट पहुँचा तो रात को उसने एक स्वप्न देखा जैसे कि कोई कह रहा है कि तुम इस मंत्र को लिख कर दीवार पर टाँग दो। दूसरे दिन जब वह सो कर उठा तो स्वप्न के आदेशानुसार उस मंत्र को लिख कर दीवार पर टाँग दिया। इस मंत्र के टाँगते ही गढ़ के ऊपर काला बादल छा गया। बादल के छाते ही एक धड़ाके का शब्द हुआ और सारी माया नष्ट हो गई। माया के विगत होते ही कैखुसरो ने बाण-वर्षा की आज्ञा दी। बाण-वर्षा के साथ ही वहाँ सहस्रों देव दिखाई दिये और सहसा एक प्रकाश सा हुआ जिससे सारा अंधकार दूर हो गया। तत्पश्चात् गढ़ का फाटक भी इन लोगों को दिखलाई पड़ गया। फाटक के दृष्टि-गोचर होते ही इन लोगों ने उसको तोड़ कर गढ़ के भीतर प्रवेश किया। भीतर जा कर इन लोगों को बहुत सा धन-धान्य मिला। गढ़ पर अधिकार पा जाने के पश्चात् कैखुसरो एक साल तक वहाँ रह कर कैकाऊस के पास लौट आया। उसकी विजय सूचना सुन कर समस्त प्रजा आनन्दित हुई और कैकाऊस ने बड़े समारोह से उस का राज-तिलक किया।

कैखुसरो द्वारा तूरान पर आक्रमण

राजगद्दी के कुछ कालोपरान्त कैकाऊस ने रुस्तम, ज़ाल तथा गोदर्ज़ को बुला कर तूरान पर आक्रमण करने का प्रस्ताव किया। सब के सब तुरंत तैयार हो गये। यह देखकर कैकाऊस ने ईरान के समस्त बड़े-बड़े योद्धाओं की संरक्षता में एक बहुत बड़ी सेना देकर कैखुसरो को तूरान की ओर विदा किया।

ईरान से चल कर जब कैखुसरू तूरान के निकट पहुँचा तो उसने फ़रेबुर्ज़ को बुला कर यह आदेश दे कर विदा किया कि तुम दूसरे मार्ग

से होकर तूरान की राजधानी पर आक्रमण करो और मार्ग में तूरान देश का जो भी भाग पड़े उसका विध्वंस करते हुए जाओ। पर एक बात का ध्यान रहे कि मार्ग में तुम्हें अफ़रासियाब के फ़रोद नामक एक पुत्र का सामना होगा जो कि एक गढ़ बनाकर वहाँ रहता है। तुम भूल कर भी उससे युद्ध न करना क्यों कि वह मेरा भाई है; अतएव तुम उस मार्ग को छोड़ कर दूसरे मार्ग से जाना। उसने यह सब बातें फ़रेबुर्ज़, तोस, रेव तथा गोदुर्ज़ को समझा-बुझा-कर सब को बिदा किया। फ़रेबुर्ज़ ख़ुसरू से विदा हो कर सिंह की भाँति बन मार्ग से चल पड़ा।

फ़रेबुर्ज़ पड़ाव पर पड़ाव मारता और गावों तथा नगरों का विध्वंस करता हुआ तूरान की राज-धानी की ओर बढ़ा चला जा रहा था कि फ़रोद को जो इसकी सूचना मिली तो वह झट अपनी सेना लेकर गढ़ से निकल आया और फ़रेबुर्ज़ का मार्ग रोक कर खड़ा हो गया। कै.ख़ुसरो के आदेशानुसार तोस ने अपने दामाद रेव को उसके पास भेजा और कहलवाया कि हम लोगों की तुमसे कोई शत्रुता नहीं है, अतएव तुम हमारे मार्ग से हट जाओ। परन्तु फ़रोद को उसकी बात का विश्वास न हुआ। फलतः वह मार्ग से न हटा और युद्ध करने पर डटा रहा। विवश हो कर रेव उस पर आक्रमणकारी हुआ, परन्तु फ़रोद ने सहज ही में उसको धराशायी कर दिया। रेव के बध की बात सुन कर तोस को बड़ा दुःख हुआ, पश्चात् उसने अपने प्रिय पुत्र को फ़रोद से युद्ध करने के हेतु भेजा, वह भी फ़रोद के हाथों मारा गया। जब पुत्र की भी हत्या का समाचार तोस को मिला तो वह विह्वल हो उठा और दोनों हत्याओं का बदला लेने के लिए स्वयं फ़रोद के सामने जा पहुँचा। परन्तु फ़रोद उससे युद्ध में विजयी होते न देख कर अपने गढ़ में भाग गया।

जैसे ही फ़रोद ने भाग कर गढ़ के भीतर शरण ली वैसे ही तोस ने घेरा डाल दिया। तब फ़रोद का मौसेरा भाई तख़्वार जो कि एक वीर तथा रण-कला में प्रवीण था गढ़ से बाहर आया। तोस ने उसको पराजित कर उसकी सेना का विध्वंस कर दिया। तब तख़्वार भी भाग

कर गढ़ में जा छिपा । तख़्वार की यह अवस्था देख कर फ़रोद फिर गढ़ के बाहर आया और तोस से युद्ध करने लगा । फ़रोद ने युद्ध के समय तोस के घोड़े को मार डाला । तोस को पैदल देख कर उसका पुत्र बैज़न मैदान में आया । तोस ने उसे आगे बढ़ते देख कर रोका परन्तु उसने कहा "मैं शपथ उठाता हूँ कि जब तक फ़रोद का वध न कर लूँगा तब तक रण-भूमि से न लौटूंगा । इतना कह कर वह ज्यों ही आगे बढ़ा कि फ़रोद ने एक ही बाण से उसके भी घोड़े का अन्त कर दिया परन्तु इस स्थिति में भी वह नाम-मात्र को विचलित न हुआ । इतने में एक दूसरा बाण आया और बैज़न की ढाल को चीरता हुआ उसकी भुजा में घुस गया । इस बार बैज़न को क्रोध आगया और वह उसी अवस्था में आगे बढ़ कर इसके निकट पहुँच गया और अपने भाले से उसको घायल कर दिया ।

जब फ़रोद घायल होकर गढ़ की ओर भागा तो बैज़न ने ललकार कर कहा 'ओ कायर ! यह वीरों का कार्य नहीं है कि एक घाव के लगते ही वह पीठ दिखादें ।" परन्तु फ़रोद ने उसकी इन बातों की ओर कुछ ध्यान न दिया और भाग कर गढ़ में जा छिपा और गढ़ के अन्दर ही से बाण तथा पाषाणों की वर्षा करता रहा जिससे बैज़न बहुत घायल हो गया ।

जब रात्रि हो गई तो बैज़न अपनी सेना में लौट आया । उसने फिर वही शपथ उठाई कि प्रातःकाल मैं फ़रोद को अवश्य ही पराजित करूँगा और एक को भी जीवित न छोड़ूँगा । इधर गुलशहर ने स्वप्न देखा कि गढ़ में आग लग गई है और समस्त गढ़ तथा उसके निवासी जल कर भस्म हो गये हैं । वह घबरा कर उठ बैठी और फ़रोद से सारा स्वप्न कह सुनाया । फ़रोद ने यह कह कर समझाया "माता जी इस संसार में कोई सदैव रहने के लिए नहीं आया है । यदि ईश्वर की यही इच्छा है कि मैं भी अपने पिता की भाँति युवा-वस्था में ही काल के गाल का कवल

होऊँगा। इसमें किसी का वश भी क्या है। अतएव तुम्हें धीरज रखना चाहिए।"

सवेरा होते ही तोस अपनी सेना लेकर गढ़ पर आक्रमणकारी हुआ और साहस तथा वीरतापूर्वक युद्ध करने लगा। अन्त में गढ़ का फाटक तोड़ डाला गया और भारी सेना उसमें प्रवेश कर मार-काट मचाने लगी। इधर फ़रोद ने जो यह देखा तो झट भाला लेकर सामने आया। और बैज़न पर भाला चला ही तो दिया। भाला उसके शरीर में लगा परन्तु कृतकार्य्य न हुआ और टूट कर दो खण्ड हो गया। भाले के टूटते ही फरोद ने चाहा कि बैज़न पर अपनी गदा का प्रहार करे कि इतने ही में बैज़न ने तलवार का ऐसा हाथ मारा कि फरोद के दो टुकड़े हो गये और इस भाँति वह वीर-गति को प्राप्त हुआ।

उसके धराशायी होते ही लोग बिलख उठे "हाय-हाय, फरोद भी अपने पिता की भाँति युवावस्था ही में परलोकगामी हुआ।" इस दुःखद समाचार के सुनते ही गुलशहर रोती-पीटती आई और उसके शव पर लोट-लोट कर विलाप करने लगी। वह इस दुःख के कारण पागल हो गई थी। वह इतनी आपे से बाहर हो गई कि उसने अपने हृदय में कटार भोंक ली और यों अपने प्रिय पुत्र से जा मिली। गुल-शहर के मरते ही बहराम ने तोस से कहा "जब कैख़ुसरू को इन दोनों हत्याओं का समाचार मिलेगा तो भला वह तेरी क्या गति करेगा।" परन्तु इस ओर उसने तनिक भी ध्यान न दिया और बड़े हाव-भाव के साथ आगे बढ़ा।

वहाँ से चल कर वह तूरान की राजधानी की ओर बढ़ा, मार्ग में उसे एक दूसरा गढ़ पड़ा जिसका संरक्षक पलासाँ था। वह भी तोस को रोकने के उद्देश्य से रण-भूमि में आया परन्तु शीघ्र ही धराशायी हुआ। और उस की सेना तितर-बितर हो कर अफ़रासियाब के निकट गई।

पलासाँ की मृत्यु का समाचार जब तूरान के सेनापति को मिला

तो उसने नरावा की संरक्षता में एक दूसरी सेना भेजी। यह वीर बड़ी देर तक बैज़न से युद्ध करता रहा परन्तु अन्त में बैज़न की गदा से घायल हो कर घोड़े से गिर पड़ा। उस के गिरते ही बैज़न ने चाहा कि अपने नाग पाश द्वारा उसे बन्दी कर ले कि इतने ही में तूरानी सेना दौड़ पड़ी और उसको उठा कर ले दौड़ी। नरावा के रण-भूमि से अदृश्य होते ही तूरानी सेना भी भाग निकली और सेनापति के सम्मुख जाकर सम्पूर्ण समाचार कह सुनाया।

अपनी सेना की यह दुर्दशा देख कर अफ़रासियाब ने पीरान को भेजा। जब वह ईरानी सेना के निकट आया तो उसने विचार किया कि तोस से विजय पाना तो बड़ा दुर्लभ है अतएव उसने रात्रि के समय आक्रमण करने का संकल्प किया और उसी रात्रि को जब कि ईरानी सेना सुख तथा निश्चिन्तता की निद्रा में निमग्न थी, पीरान वीसा ने आक्रमण कर दिया। और सहस्रों ईरानियों को काल के गाल में भेज दिया। प्रातःकाल तोस इस कपटी रीति से पराजित होकर फरेबुर्ज़ से जा मिला।

फ़रेबुर्ज़ ने जब पीरान की इस कायरता का समाचार सुना तो वह तोस पर बहुत क्रुद्ध हुआ। उसने कैखुसरो को इस आदेश का एक पत्र लिख कर तोस के हाथों भेजा कि तोस ने बहुत बड़ा विश्वास-घात किया है और आपकी आज्ञा की अवहेलना कर के आप के प्रिय भ्राता फ़रोद की हत्या की है, अतएव मेरी इच्छा यह है कि आप इसे तुरन्त बन्दी करके कारागार में डाल दें। इधर इस पत्र द्वारा उसने तोस को बन्दी करा कर पीरान को भी एक पत्र लिखा कि यदि तू वास्तव में वीर है तो रण-भूमि में सम्मुख आकर युद्ध कर। यह कायरों की भाँति क्या नैशिक-आक्रमण करता है। इस पत्र को पढ़ कर पीरान ने फ़रेबुर्ज़ से एक मास का अवकाश माँगा। फ़रेबुर्ज़ ने उसकी प्रार्थना को स्वीकार किया तथा स्वयं अपनी सेना की ओर दत्तचित्त हुआ।

फ़रेबुर्ज़ की पीरान वीसा के हाथों पराजय

एक मास व्यतीत होते ही फ़रेबुर्ज़ अपनी सेना लेकर रण-भूमि में आ डटा। उधर पीरान भी अपनी सेना को सुसज्जित कर अपने प्रतिद्वन्द्वी के सम्मुख आ पहुँचा। संक्षेप यह कि उस काल की युद्ध-प्रथा के अनुसार सब तैयारियाँ ठीक हो जाने पर दोनों दल भिड़ गये।

युद्ध के आरम्भ होते ही गेव तथा बैज़न ज्यों ही रण-भूमि में गये कि शवों का ढेर लग गया। जिस ओर यह जाते थे उसी ओर हाहा-कार मच जाता था। सेना की यह हीन दशा देख कर समस्त तूरानी सेना फ़रेबुर्ज़ की ओर अग्रसर हुई और पहुँचते ही ईरानियों का विध्वंस करने लगी। इस प्रलयकारी हत्या काण्ड से विवश हो कर फ़रेबुर्ज़ तथा गोदुर्ज़ अपनी सेना लेकर रण-भूमि से दूर पहाड़ी पर जा रहे।

फ़रेबुर्ज़ तथा गोदुर्ज़ को इस प्रकार भागते देख गेव ने कहा "यदि तुम इस प्रकार कायरों की भाँति रणभूमि से भागोगे तो फिर संसार में वीर कैसे कहाओगे। तुम ने सहस्रों बार युद्ध किया है, फिर भी तुम पीरान जैसे कायर से त्रसित हो गये।" गेव के यह शब्द सुन कर उनको बड़ी लज्जा आई और उन्होंने शपथ ली कि अब मरेंगे या मारेंगे। इतना कह कर गोदुर्ज़ तथा गस्तहुम दोनों आकर रण-क्षेत्र में फिर डट गये। इधर गेव ने बैज़न से कहा "तुम जाओ और फ़रेबुर्ज़ से कह देना कि वह ईरानी पताका यहाँ भेज दे।" बैज़न ने जाकर गेव का संदेश फ़रेबुर्ज़ को दिया परन्तु उसको सहमत होते न देख झंडा वाले का बध करके स्वयं पताका लेकर आ गया।

पताका के आते ही फिर एक बार घमासान युद्ध होने लगा। मृतकों के ढेर के ढेर लग गये। समस्त रण-भूमि में रक्त की नदी बह चली और उसमें वीरों के शिर ऐसे प्रतीत होते थे मानो कछुये तैर रहे हैं। प्रत्येक ओर से घायलों के आर्तनाद सुनाई दे रहे थे। वीरों के शव उस रक्त की नदी में नावों की भाँति बह रहे थे। संक्षेप यह कि ईरानियों के इने गिने

वीरों के अतिरिक्त और कोई भी शेष न रहा। इस युद्ध में ईरानियों को बड़ी क्षति उठानी पड़ी। अन्त में सायंकाल को तूरानी सेना विजय की हर्ष ध्वनि करती हुई अपने पड़ाव की ओर लौटी। पड़ाव पर पहुँच कर पीरान ने अफ़रासियाब को इस विजय का शुभ संदेश भेजा जिसे सुनकर अफ़रासियाब गद्‌गद् हो उठा और तुरन्त ही बहुत सा धन तथा रत्न पुरस्कार के रूप में पीरान के पास भेजा और साथ ही यह भी कहला भेजा कि अभी तुम निश्चिन्त न हो क्योंकि इस भाँति पराजित होने का समाचार जब कैख़ुसरू को मिलेगा तो वह स्वयं रुस्तम को भी काल के गाल में भेज देंगे तो निश्चय समस्त संसार का राज्य निर्विघ्न रूप से भोग सकोगे।

अफ़रासियाब के इस प्रशंसा-पत्र तथा पुरस्कार ने पीरान तथा उसके सैनिकों के हृदय को दुगुना कर दिया और वह प्रतीक्षा करने लगे कि कब रुस्तम तथा ख़ुसरो आएँ और कब उसको भी धराशायी करके दिग्-विजयी कहलाए।

इधर ईरानी सेना के पराजित होने तथा अपने सहोदर भ्राता की मृत्यु के कारण ख़ुसरू को बुरी दशा थी। कई दिन तक उसके नेत्रों से आँसुओं की धारा अनन्तर बहती रही। जब रुस्तम ने कैख़ुसरू की यह हीन दशा देखी तो उसे अनेक प्रकार से धीरज बँधाया तथा सांत्वना देते हुए युद्ध के लिए अपने को प्रस्तुत किया और तोस को बन्दी गृह से छुटकारा दिलाया।

जब तोस बन्धन-मुक्त हुआ तो वह कर-बद्ध होकर ख़ुसरो के सम्मुख आया और पीरान से युद्ध करने के हेतु आज्ञा चाही। तोस की यह बात सुन कर कैख़ुसरू रुस्तम के मुख की ओर ताकने लगा। रुस्तम ने कैख़ुसरू के हृदय की बात जान कर उसे धीरज दिया और बोला "चिन्ता न कीजिए। तोस अकेला ही पीरान तथा उस की सेना के लिए अधिक है। हाँ, यदि अफ़रासियाब स्वयं युद्ध-क्षेत्र में आएगा तो मैं उसके सम्मुख जाऊँगा।" कैख़ुसरू ने रुस्तम की यह बात सुन कर तोस को

एक बहुत बड़ी सेना देकर बिदा किया। और साथ में गोदुर्ज़ को भी जाने की आज्ञा दी।

तोस का पीरान के साथ दूसरी बार युद्ध

ख़ुसरू से बिदा हो कर तोस पीरान से युद्ध करने के हेतु चल पड़ा। गढ़ के निकट दोनों दल एकत्र हुये। एक सप्ताह पर्यन्त युद्ध होता रहा, आठवें दिन हूँमा अपनी सेना से निकल कर रण-क्षेत्र में आया और उसने अपने प्रतिद्वन्द्वी का बध कर के ईरानी सेना का विध्वंस करना आरम्भ कर दिया। जब तोस ने अपनी सेना की यह दुर्दशा देखी तो स्वयं युद्ध के लिए चल पड़ा। परन्तु गोदुर्ज़ ने उसे बीच ही में रोक कर कहा "आप न जाइए।" इतना कह कर वह युद्ध-स्थल में आया और हूँमा के साथ द्वन्द-युद्ध में प्रवृत्त हुआ। कभी गदा, कभी भाला और कभी तलवार के वार होने लगे, परन्तु उन में से कोई भी पराजित न हुआ। अन्त में दोनों अपनी अपनी सेना में लौट गये और बाण-वर्षा आरम्भ हो गई जिससे दोनों ओर के अनेक वीर खेत रहे।

तूरानियों में एक मनुष्य बाज़ोर नाम का बड़ा मायावी था। पीरान ने उससे कहा, "तू शीघ्र गढ़ में जाकर अपनी माया से हिम-वर्षा आरम्भ कर दे।" उसकी मायारूपी-वर्षा के कारण तूरानियों की तो तनिक भी क्षति नहीं हुई, पर ईरानी सेना को बहुत क्षति उठानी पड़ी। कारण यह कि उस मायावी ने यह हिम-वर्षा केवल ईरानियों ही के लिए की थी। जब वर्षा बड़े वेग से हुई और ईरानी शीत के प्रकोप से विवश हो गये तो हूमाँ तथा पीरान ने अपनी सेना सहित उन पर आक्रमण कर दिया और असंख्य ईरानियों का बध कर डाला। इस विपत्ति से पीड़ित होकर उन्होंने ईश्वर से प्रार्थना की "हे दयामय! अब आप हम दुखियों की इस आपत्ति से रक्षा कीजिये।" ईश्वर ने उनकी प्रार्थना को स्वीकार की। इसी समय पहाड़ी पर उन्हें एक व्यक्ति दृष्टि-गोचर हुआ जो कि उंगली के संकेत से गेव को बुला रहा था। गेव तुरन्त घोड़े से उतर कर पहाड़ी पर

पहुँचा। वहाँ पहुँचने पर उसी व्यक्ति ने उस मायावी की ओर संकेत किया और गेव ने जाकर पीछे से उसको बन्दी कर लिया। फिर तोस के निकट लाकर अपनी तलवार से उसका सिर काट लिया। माया विगत होने के साथ ही दोनों सेनाएँ अपने-अपने शिविर को लौट गईं।

दूसरे दिन प्रातःकाल पीरान फिर अपनी सेना लेकर युद्ध के लिए आया। परन्तु ईरानियों की सेना कम थी, अतः युद्ध करते हुए पीछे की ओर हटते आते थे। अन्त में वह हुमायूँ पर्वत पर आ गये और वहाँ शेष सेना ने विश्राम किया। पीरान ने वहाँ भी उनका पीछा न छोड़ा और आक्रमणकारी हुआ। जब उन लोगों ने यह विकट अवस्था देखी तो तुरन्त गढ़ के अन्दर चले गये। ईश्वर की देन कि वह गढ़ खाद्य पदार्थों से परिपूर्ण था, अतएव ईरानी सेना ने उसी में शरण ग्रहण की और उसी में से आत्मरक्षा करती रही। इसी बीच हूमा ने पीरान से कहा, "अब इनको बन्दी करने से लाभ ही क्या। अब इन लोगों को जिस ओर जाना चाहें जाने दो।" परन्तु नीच पीरान ने उसकी बात न मानी क्योंकि वह तोस से बदला लेना चाहता था। अतएव वह नित्य-प्रति उन लोगों से युद्ध करता रहा। और धन्य ईरानी कि उसको उत्तर देने से पिछड़ते ही न थे।

रुस्तम द्वारा तोस की सहायता

इधर जब कैखुसरो को ईरानी सेना के बन्दी होने की सूचना मिली तो उसने तुरन्त रुस्तम को बुला कर सब समाचार सुनाया और झट उसे सेना-सहित तोस की सहायता के लिये बिदा किया। रुस्तम वहाँ से चल कर सीधे हुमायूँ पर्वत पर पहुँचा। रुस्तम के आगमन का शुभ-सन्देश सुन कर तोस ने गोदर्ज को उसके स्वागत के हेतु भेजा। वह रुस्तम तथा सेना को बड़े सम्मान सहित गढ़ में ले गया और उसे उच्च आसन देकर तोस ने अपनी पराजय का समस्त हाल सविस्तार कह सुनाया। सब बातें जान लेने के पश्चात् रुस्तम ने कहा, "अब तुम लोगों को भयभीत न होना चाहिए।" तत्पश्चात् उसने कहा "मैं जाता हूँ और पीरान

तथा उसकी सेना का पूरा समाचार जान कर अभी आकर तुम्हें बतलाता हूँ।"

ईरानी सेना को बन्दी करके पीरान ने अफ्रासियाब को लिखा था "मैंने शत्रुओं की सेना को हुमायूँ पर्वत के गढ़ में बन्दी कर रक्खा है। अतएव आप शीघ्र ही नवीन सेना सहायता के हेतु भेजिये, जिससे उस गढ़ को जीत कर शेष ईरानियों को भी उनके साथियों के पास यम-पुरी भेज दूँ।" फलतः अफ्रासियाब ने एक नवीन सेना कोमोस तथा शिंगल दो चीनी योद्धाओं की अध्यक्षता में भेज दी और साथ ही चीन के शासक को भी पीरान की सहायता के लिए लिखा। संक्षेप यह कि वह भी अफ्रासियाब की मित्रता के नाते अपनी सेना लेकर स्वयं ही युद्ध क्षेत्र में पीरान से जा मिला।

रुस्तम के पदार्पण करते ही कोमास तोस के निकट गया और रुस्तम की वीरता की प्रशंसा करके उसके आगमन से उसे सूचित किया। तोस को रुस्तम की प्रशंसा सुन कर क्रोध हो आया। उसने तनक तीव्र स्वर में कहा, "तू रुस्तम की मिथ्या प्रशंसा क्यों करता है। अभी तूने मेरा युद्ध देखा ही नहीं। संग्राम के समय देखना कि मैं किस प्रकार उसे नाकों चने चबवाता हूँ।"

दूसरे दिन प्रातःकाल दोनों सेनायें रण-क्षेत्र में आईं। और पंक्ति बद्ध होकर खड़ी हो गईं। इस समय रुस्तम ने तूरानियों की इतनी बड़ी सेना जो देखी तो काँप गया, फिर भी साहस धारण कर ईश्वर से प्रार्थना की कि तू मुझे साहस तथा बल दे कि मैं इन शत्रुओं पर विजयी होऊँ। ईश्वर की कृपा से भय उससे कोसों दूर भाग गया।

इसी समय मारू बाजे का शब्द सुनाई पड़ा और तूरान का एक योद्धा अश्कबूस आगे आया। ईरानी सेना ने भी रुहाम को अगुआ किया और दोनों में युद्ध होने लगा। प्रथम भाले का युद्ध हुआ, परन्तु कोई कृत-कार्य न हुआ। अतएव रुहाम ने अपनी गदा से उस तुर्क के शिर पर वार किया, परन्तु उसमें भी विफल-मनोरथ रहा। अब अश्क-

स ने अपने हाथ दिखाये और गदा का प्रहार किया। फलतः उसकी गदा रुहाम की ढाल चूर करती हुई उसके शिर पर जा बैठी और शिर से रक्त की धारा बह निकली। इस घाव से रुहाम पीड़ित होकर पर्वत की ओर भाग खड़ा हुआ।

रुहाम के पीठ दिखाते ही अश्कबूस ने भी अपना घोड़ा मोड़ा कि उसके कानों में रुस्तम की गरज सुनाई पड़ी। रुस्तम की चुनौती पाकर अश्कबूस लौट पड़ा और वहीं से उसने बाण-वर्षा आरम्भ कर दी; परन्तु रुस्तम के आतंकवश हाथ काँप रहे थे। अतः उसका एक भी बाण लक्ष पर न लगा। उसके बाणों के निश्शेषन होते ही रुस्तम ने अपने तीखे बाण छोड़े जो कि सर्पों की भाँति लहलहाते जाते थे और प्रतिपक्षी के वक्षस्थल को बेंधते हुए निकल जाते थे। संक्षेप यह कि रुस्तम के चार ही छः बाणों ने उसको पृथ्वी पर गिरा दिया। धराशायी होते ही उसने रुस्तम की बड़ी प्रशंसा की और कहा, "तुमसे युद्ध करने के लिये हमारी समस्त सेना में कोई भी वीर नहीं है।"

अश्कबूस की मृत्यु के पश्चात् रुस्तम बड़ी देर तक रण-क्षेत्र में अपने प्रतिद्वन्द्वी की प्रतीक्षा करता रहा परन्तु उस दिन कोई भी उसके सम्मुख न आया, अतएव वह विवश होकर अपनी सेना में लौट गया और संध्या समय दोनों सेनाएँ अपने अपने शिविर में चली गईं।

दूसरे दिन जब सूर्य भगवान अपने रथ पर सवार होकर मृत्युलोक की यात्रा के लिये आये तो फिर दोनों सेनाएँ रण-चण्डी की रक्तपिपासा शांत करने के हेतु संग्राम-भूमि में आ डटीं। तूरानी सेना में उस दिन सेना संचालन का भार कामोस ने ले लिया और झट रणस्थल में पहुँच कर रुस्तम को चुनौती दी। रुस्तम ने ज्यों ही सुना 'रख्श की बाग उस ओर मोड़ दी। परन्तु उसके शिष्य ने उसका मार्ग रोक कर कहा "गुरु जी! आज मैं युद्ध में जाऊँगा।" रुस्तम ने अपनी स्वीकृति दे दी और अलवाब मैदान में आ जमा। परन्तु शीघ्र ही कामोस के भाले की सांघातिक चोट से घायल होकर वीर गति को प्राप्त हुआ।

अनवाश का अन्त होते ही रुस्तम अपना घोड़ा कुदा कर सामने आया। कामोस ने पहिले तो कुछ कटु वचन कहे पश्चात् अपना नाग-पाश उसकी ओर फेंका परन्तु रुस्तम अपने को एक दम बचा ले गया और उसका नागफाँस रुस्तम के स्थान पर रख्श के गले में जा फँसा। यह देख रुस्तम ने उसको पकड़ कर खींचना चाहा परन्तु चूंकि कामोस भी उसको अपनी ओर खींचता था रुस्तम सुफल मनोरथ न हो सका और इसी खींच-तान में नागफाँस बीच से दो हो गया। इसके टूटने से कामोस को ऐसा झटका लगा कि वह घोड़े से नीचे आ गया। रुस्तम ने इस अवसर को हाथ से न जाने दिया और तुरन्त अपने पाश द्वारा उसको बन्दी कर लिया और अपनी ओर घसीट कर उसका शिर धड़ से अलग कर दिया। कामोस के वध के पश्चात् फिर कोई दूसरा योद्धा रुस्तम के सम्मुख न आया।

चीन का शासक तथा रुस्तम का युद्ध

कामोस के वीर गति को प्राप्त होते ही पीरान भयभीत होकर खाकान के पास आया और कहा "महाराज! अब भलाई इसी में है हम लोग रुस्तम से सन्धि कर अपने राज्य को लौट चलें।" पीरान की इन कायरतापूर्ण बातों को सुनते ही खाकान के तेवर चढ़ गये और उसने कहा—"तुम मरे क्यों जाते हो। कल मैं स्वयं ही उससे युद्ध करूँगा।" खाकान की इस बात से पीरान को थोड़ा धीरज हुआ और लौट कर अपने पड़ाव में आया।

भोर होते ही खाकान युद्ध के लिए सुसज्जित होने लगा कि इतने में चंगेश नाम के योद्धा उसके सम्मुख उपस्थित होकर स्वयं रणक्षेत्र में जाने की इच्छा प्रकट की। खाकान उसकी इस वीरता पर बहुत प्रसन्न हुआ और कहा—"यदि तू रुस्तम का वध करके आयेगा तो मैं तुझे धन-धान्य से पूर्ण कर दूँगा।" खाकान द्वारा कही गई पुरस्कार की बात को सुन कर वह खिल उठा और तुरन्त घोड़ा कुदा कर मैदान में आया और रुस्तम को ललकारा। रुस्तम हँसता हुआ युद्ध-स्थल में आया और

कहा—"निश्चय ही तेरी मृत्यु तुझे यहाँ खींच कर ले आई है। मैं अभी तुझे भी कामोस के पास भेजता हूँ।"

रुस्तम अभी अपनी बात पूर्ण भी न कर पाया था कि चंगेश ने बाणों की बौछार आरम्भ कर दी। जब रुस्तम ने देखा कि चंगेश के बाणों से बचना कठिन है तो उसने ढाल द्वारा शिर को रक्षा करने का प्रयत्न किया, फिर भी चंगेश के तीक्ष्ण बाण ढाल को भी बेध कर अचूक बैठे। यह देख कर वह अपनी खड्ग लेकर चंगेश की ओर झपटा। रुस्तम को आता देख चंगेश भागा परन्तु उसने उसका पीछा न छोड़ा और उसका कमरबन्द पकड़ कर जो खींचा तो वह घोड़े पर से अलग हो गया। उसे पृथ्वी पर पटक कर रुस्तम ने अपनी तलवार से उसका भी जीवन-दीप सर्वदा के लिये बुझा दिया और उसी अवस्था में वह तलवार लेकर चारों ओर फिरता रहा। पर कोई भी उसके सम्मुख न आया।

चंगेश के वध तथा रुस्तम के क्रोध को देख कर हूँमा उसके सामने आया और बड़ी नम्रता से बोला—"हे रुस्तम! मुझे आशा है कि तुमको सोहराब के अन्तिम वाक्य अब तक न भूले होंगे कि उसने तुमसे इस बात की प्रार्थना की थी कि तुम तूरानियों का बध न करना। अतएव अब तुम युद्ध में भाग न लो।" रुस्तम बोला "तुम्हें ज्ञात होना चाहिये कि हमें सियावश सोहराब से भी अधिक प्रिय था और अफ़रासियाब ने अकारण ही उसकी हत्या की है, अतः जब तक मैं उसका बदला न ले लूँगा तब तक मुझे शान्ति न मिलेगी। और यदि तुम्हारी यही इच्छा है कि मैं युद्ध से विरत हो जाऊँ तो तुम पीरान को हमारे निकट भेज दो।"

हूँमा रुस्तम से विदा होकर सीधे पीरान के पास आया और सब बातें कह सुनाईं। जब पीरान को यह ज्ञात हुआ कि रुस्तम ने उसे अपने पास बुलाया है तो वह ख़ाक़ान के पास गया और सब बातें कह कर उसकी आज्ञा चाही। ख़ाक़ान उसकी इस बात पर अतीव क्रोधित हुआ और रुस्तम के पास जाने से रोका और हूँमा को भला बुरा कह कर अपने सामने से हटा दिया। हूँमा के चले जाने के पश्चात् पीरान ने फिर ख़ाक़ान

से कहा—"यदि मैं जाकर रुस्तम से मिल आऊँ और सुन आऊँ कि वह क्या कहता है तो इसमें हानि ही क्या है। उसकी बात हम लोगों को उचित जान पड़ेगी मानेंगे, अन्यथा नहीं।"

जब इस प्रकार पीरान से उसने बहुत कुछ कहा तो ख़ाक़ान ने उसे रुस्तम के पास जाने के लिये आज्ञा दे दी।

ख़ाक़ान से स्वीकृति पाकर पीरान रुस्तम के सम्मुख गया और डरते-डरते उसकी प्रशंसा करने लगा, तत्पश्चात् अपने हितैषी होने के प्रमाण में उसने जिस प्रकार खुसरू को बध होने से बचाया था आदि सब बातें कह गया। रुस्तम ने यह सुन कर कहा "वास्तव में तुम हितैषी हो। परन्तु दोनों ओर रहने के कारण तुम्हें इस प्रकार दुःख भोगना पड़ता है।" इसके अनन्तर उसने कहा "मैंने तुझे इसलिये बुलाया है कि यदि तुम इस हत्याकाण्ड का अन्त करना चाहते हो तो अफ़रासियाब तथा उसका कोष मुझे सौंप दो ताकि मैं उसे कैखुसरू के सम्मुख उपस्थित करूँ। और वह उसका शिर काट कर उसके रक्त से अपने हृदय की ज्वाला को शान्त करे क्योंकि यह तो निश्चय है कि अब खुसरू अफ़रासियाब से सन्धि कदापि न करेगा।"

रुस्तम की उपरोक्त बातों को सुन कर पीरान ख़ाक़ान के पास आया और जो कुछ कि रुस्तम की इच्छा थी कह सुनाया। रुस्तम का यह प्रस्ताव सुन कर ख़ाक़ान ने समस्त पदाधिकारी तथा पहलवानों से उनकी सम्मति माँगी। इसी समय शंगल ने कहा "मेरी इच्छा है कि हम लोग उसके इस प्रस्ताव से सहमत न होकर फिर युद्ध छेड़ दें क्योंकि सम्भव है कि हमारे योद्धाओं में से कोई रुस्तम को परास्त कर के विजय प्राप्त करे।" उसकी इस बात को सुन कर शेष सभासदों ने भी हाँ में हाँ मिलाया। फलतः ख़ाक़ान ने भी अपनी स्वीकृति दे दी। इतना सब होते हुये भी पीरान बड़े संकोच में पड़ा रहा और चुपचाप बैठा रहा।

ख़ाक़ान की स्वीकृति पाते ही शंगल झट घोड़े पर सवार होकर युद्ध-क्षेत्र में आकर रुस्तम को ललकारने लगा। रुस्तम ने भी रख़्श पर सवार

होकर रणस्थल में पदार्पण किया। आते ही उसने अपना भाला उसकी कमर बन्द में घुसेड़ कर घोड़े की पीठ पर से उठा कर पृथ्वी पर पटक दिया, परन्तु इसके पूर्व कि वह शंगल का सिर धड़ से पृथक करे वह उठ कर नंगे पैर अपनी सेना की ओर भागा और रुस्तम ने उसे खदेड़ लिया। पर चीनी सेना के बीच में आ जाने से वह कुशलपूर्वक भाग गया।

मैदान से भाग कर वह खाकान के निकट गया और रुस्तम की वीरता, धीरता, बल तथा रण-कौशल की प्रशंसा करके कहने लगा "हमारी सेना में कोई भी ऐसा वीर नहीं है जो उससे युद्ध कर सके।" खाकान ने जो उसकी यह बातें सुनी तो जल कर भस्म हो गया और कहने लगा "तेरी बातों से तो यह बात प्रत्यक्ष रूप से मालूम हो गया कि तू केवल जिह्वा ही का वीर है और कुछ नहीं।" तब उसने कहा "यदि आप मुझे सैनिक दीजिये तो मैं उससे जाकर युद्ध करूँ।" अतएव खाकान ने छः सहस्र वीर योद्धाओं को उसके साथ जाने की आज्ञा दी।

अब शंगल फिर अपने दल-बादल सहित युद्ध-क्षेत्र में आ धमका और रुस्तम को चारों ओर से घेर कर लगा मारने, परन्तु रुस्तम इस पर भी हिमाचल की भाँति अपने कर्त्तव्य में अचल-अटल रह कर लगा शत्रुओं का नाश करने। कभी वह अपने खड्ग की तृष्णा दूर करता और कभी अपनी गदा का मोर्चा शत्रुओं के शरीर द्वारा छुड़ाता था। इसी समय ईरानियों की भी सेना उसकी सहायता के लिये पहुँच गई। अपनी सेना को आते देख कर रुस्तम ने उन्हें उत्साहित करके कहा—"वीरो! तुम इन चीनी टिड्डी-दलों को देख कर विचलित न हो बल्कि अपनी गदा से इनका मर्दन करना आरम्भ कर दो।" रुस्तम की इन बातों ने ईरानियों के उत्साह को दूना कर दिया और वे लोग अपने-अपने शस्त्रों द्वारा शत्रुओं का संघार करने लगे।"

पाठको! यदि हम इस हत्याकाण्ड के लिये युद्ध के स्थान पर प्रलय शब्द का प्रयोग करें तो असंगत न होगा। क्योंकि उस समय सारा युद्ध

स्थल रक्त से लाल हो गया था और चहुँ ओर से वीरों की हुँकारें, तथा घायलों के आर्त्तनाद के अनन्तर और कुछ न सुनाई देता था। इसी बीच कामोस का जामाता सादा रुस्तम के सम्मुख आया। उसके आते ही रुस्तम ने एक गदा से उसके सिर को चूर्ण कर दिया। इसके पश्चात् काकसाल तथा शंगल भी उसके हाथ से मारे गये।

इनको यमपुरी भेज कर रुस्तम ख़ाक़ान की ओर बढ़ा। फिर क्या था। दोनों दल आपस में गुथ गये और मार-काट आरम्भ हो गई। जब खाकान ने अपने अश्वारोहियों को इस प्रकार मरते देखा तो रुस्तम के पास सन्धि के लिये कहला भेजा जिसके उत्तर में रुस्तम ने कहा—"यदि तुम अपना श्वेत गज, घोड़ा, तथा और बहुत सा धन-धान्य दो तो मैं सन्धि करूँगा अन्यथा नहीं।" अपने दूत द्वारा रुस्तम का यह उत्तर सुन कर खाकान को बड़ा क्रोध आया और उसने अपने सैनिकों को बाण वर्षा की आज्ञा दी। फिर क्या था चारों ओर बाण ही बाण दिखाई देते थे। परन्तु इस पर भी रुस्तम शत्रुओं का संहार करता ख़ाक़ान के निकट जा पहुँचा और झट अपना पाश फेंक कर ख़ाक़ान का गला फँसा लिया। और अपनी ओर खींचा। रुस्तम के झटके से ख़ाक़ान हाथी पर से पृथ्वी पर आ गिरा और ईरानियों ने तुरन्त उसे बन्दी कर लिया।

ख़ाक़ान के बन्दी होते ही फिर एक बार बड़ी विकट मार काट हुई परन्तु अन्त में ईरानियों ने चीनियों को भगा दिया। अब रुस्तम ख़ाक़ान को तोस के सम्मुख लाकर उसे सौंप कर अपनी सेना से बोला—"देखो तूरानी सेना को चारों ओर से घेर कर या तो बन्दी कर लो या यमपुर भेज दो।" परन्तु चूँकि संध्या हो गई थी इसलिये सब सैनिक अपने-अपने ठिकाने चले गये और तूरानी रातों रात भाग गये।

रुस्तम का अफ़रासियाब से युद्ध के हेतु प्रस्थान

दूसरे दिन प्रातः काल जब रुस्तम सो कर उठा और उसे तूरानी सेना के भाग जाने का समाचार मिला तो अपनी सेना से कहने लगा—"बड़े

दुःख की बात है कि तुम लोगों की असावधानी के कारण रही बची तुर्की सेना निर्विघ्न निकल भागी। पश्चात् फरामर्ज़ की संरक्षता में उसने ख़ाक़ान तथा सारी युद्ध में हस्तगत की हुई वस्तुओं को कैखुसरू की सेवा में भेज दिया। जब कैखुसरू ने इन सब वस्तुओं तथा ख़ाक़ान को देखा तो गद्गद् हो गया और उसके उपलक्ष्य में उसने प्रत्येक सामन्त तथा सैनिक को पुरस्कार तथा सम्मान-सूचक वस्तुयें यथायोग्य भेंट कीं, जिन्हें पाकर प्रत्येक व्यक्ति का हृदय उत्साह से भर गया।

इधर पीरान अपनी सेना सहित भाग कर अफ्रासियाब के पास पहुँचा और अपनी पराजय तथा ख़ाक़ान के बन्दी होने का समाचार उससे कह सुनाया जिसे सुन कर उसको बहुत दुख हुआ। अपने वीरों की वीर वाणी सुन कर उसका दुःख कुछ कम तो हो गया, फिर भी उसने हतोत्साह सा होकर कहा—"मैं कई बार रुस्तम से युद्ध कर चुका हूँ, अब मुझे दृढ़ विश्वास है कि तूरान में कोई ऐसा वीर नहीं है जो उससे युद्ध कर सके।" उसकी ऐसी निराशा भरी बात सुनकर उसके सैनिकों ने कहा "यदि आप की आज्ञा हो तो हम लोग उससे युद्ध करने में शीघ्र ही प्रवृत्त हों।"

अफ्रासियाब ने अपने सैनिकों का ऐसा उत्साह देख कर ख़ुतन के शासक को अपनी सेना सहित आने को लिख भेजा। उसके आने पर अफ्रासियाब ने अपनी सेना को भी उसी की संरक्षता में करके रुस्तम से युद्ध करने के लिये भेजा।

यहाँ फ़रामर्ज़ के लौट कर आने के साथ ही रुस्तम ने भी प्रस्थान किया और पड़ाव पर पड़ाव मारता तूरान की राजधानी की ओर बढ़ने लगा। मार्ग में एक तूरानी गढ़रक्षक काफ़ूर युद्ध के हेतु प्रस्तुत हुआ, परन्तु ईरानियों द्वारा मारा गया। उस गढ़ को जीत कर रुस्तम आगे बढ़ा और जब तूरानी सेना के निकट पहुँचा तो पड़ाव डाल दिया।

दूसरे दिन सबेरे दोनों दल रण-क्षेत्र में आ डटे और पौलाद

बन्द ने तूरानी सेना से बाहर आकर अपने प्रतिद्वन्द्वी को चुनौती दी, जिसे सुन कर गेव उसके सम्मुख आ धमका। गेव को देखते ही पौलाद बन्द ने अपना नागपाश उसके ऊपर फेंक कर उसे बन्दी कर लिया और चाहता ही था कि उसे खींचे कि इतने ही में रूहाम तथा बैज़न ने भी अपनी-अपनी पाश उस पर फेंकी। फलतः उसका शिर और भुजाएँ उसमें जकड़ गईं, परन्तु पौलाद बन्द ने इतना बल लगाया कि दोनों नागपाशें टूट गईं। तदुपरान्त उसने तलवार लेकर आक्रमण किया और दोनों को घायल कर गेव की ओर झुका और उसको भी घायल कर दिया। जब गोदर्ज़ ने उनकी यह दुर्दशा देखी तो रुस्तम से उनकी सहायता के लिये जाने को कहा। रुस्तम रख्श पर चढ़ कर रण-क्षेत्र में जा धमका। उसने आते ही अपनी कमन्द उस पर फेंकी परन्तु पौलाद बन्द ने अपने को बचा लिया और अपनी गदा ले कर रुस्तम के निकट पहुँचा और ऐसा विकट प्रहार किया कि रुस्तम का शिर फट गया। और शरीर लोहू लोहान हो गया। यह घाव इतना करारा बैठा कि वह विकल हो उठा, फिर भी घोड़े पर ज्यों का त्यों जमा बैठा रहा। अब उसमें इतना बल शेष न था कि वह इस आक्रमण का उत्तर दे सके।

रुस्तम की यह अवस्था देख कर पौलाद बन्द ने फिर अपनी तलवार का प्रहार उसकी भुजा पर किया। इससे रुस्तम को तिल-मात्र भी चोट न लगी। उसकी इस वीरता तथा धीरता को देख कर पौलाद बन्द ने कहा, "रुस्तम! वास्तव में तू धन्य है क्योंकि अलबुर्ज़ पर्वत को चूर्ण कर देने वाली मेरी गदा से घायल हो कर भी तू निश्चिन्त भाव से घोड़े पर बैठा रहा। अब मेरी इच्छा तुझ से मल्ल युद्ध करने की है।" रुस्तम उसके इस प्रस्ताव को स्वीकार करते हुये बोला, 'मेरी इच्छा है कि तू अफ़रासियाब को भी यहाँ बुला ले जिससे मेरे और तेरे युद्ध के बीच किसी अन्य व्यक्ति के हस्तक्षेप न करने का वचन उससे ले लूँ। इस में उसका इतना भर उद्देश्य था कि उसके आगमन तथा वचन-बद्ध होने तक वह

अपना दम भर ले । पौलाद बन्द अफ़रासियाब को ले कर जब मैदान में आया तो रुस्तम ने कहा, "मेरी इच्छा है कि दोनों ओर की सेना युद्ध-क्षेत्र से आधमील की दूरी पर हट जाय और किसी अवस्था में भी कि की सहायक न हो ।" अफ़रासियाब ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया और दोनों सेनाएँ पीछे की ओर हट गईं । अफ़रासियाब जाते-जाते ख़ुतन के शासक के कान में कह गया कि ज्यों ही तुम उसको पृथ्वी पर पटको त्योंही अपनी कटार से उसका अन्त कर देना अन्यथा सँभल जाने पर फिर उससे पार पाना कठिन हो जायेगा ।" इतनी बात उसे समझा कर अफ़रासियाब भी मैदान से हट गया ।

उसके हटते ही दोनों वीर अपने-अपने घोड़े से उतर कर मल्ल-युद्ध करने लगे । होते-होते रुस्तम ने उठा कर उसे पृथ्वी पर पटक दिया । इस समय उसने अपनी साँस खींच ली और मरा-सा प्रतीत होने लगा । जब रुस्तम को उसके मर जाने का विश्वास हो गया तो वह अपने घोड़े की ओर बढ़ा । इसी बीच जो उसको अवसर मिला तो वह उठ कर अपनी सेना की ओर भागा और जा कर अफ़रासियाब से बोला, "वास्तव में रुस्तम से युद्ध करना मानव शक्ति से परे की बात है ।"

जब रुस्तम को उसके छल का ज्ञान हुआ तो वह उसके पीछे दौड़ पड़ा, पर उसकी सेना ने बाणों की वर्षा आरम्भ कर दी । फलतः रुस्तम की सेना भी गुथ गई और फिर एक बार मार काट आरम्भ हो गई । इसी समय पौलाद बन्द ने अपनी सेना से कहा, "जब हमको इस युद्ध से कुछ लाभ ही नहीं तो लड़ना बेकार है, अतएव चलो हम अपने देश को लौट चलें ।" पौलाद बन्द की यह बात सुन कर उसकी सारी सेना ने युद्ध स्थगित कर दिया और ख़ुतन की ओर चल दी ।

पौलाद बन्द के जाते ही अफ़रासियाब की सेना का भी साहस जाता रहा । उसने पीरान से कहा "भलाई इसी में है कि हम भी अपने देश को लौट चलें ।" फलतः उसी रात को वह अपनी सेना लेकर अपने देश

को लौट गया और उसकी सम्पत्ति और युद्ध सामग्री रुस्तम के हाथों लगी। जब रुस्तम इस प्रकार विजयी हुआ तो उसने तूरान देश को विभाजित कर के अपने सैनिकों को बाँट दिया और लूट का धन ले कर कैखुसरू के सम्मुख आ उपस्थित हुआ।

कैखुसरू को जब इस विजय का शुभ-संवाद प्राप्त हुआ तो उसने उस धन को रुस्तम तथा अन्य सामन्तों को दे दिया। तत्पश्चात् उसने गेव तथा गोदुर्ज को बुलाया और उन्हें भी सम्मानित किया।

रुस्तम का अगवान देव के साथ युद्ध

उपर्युक्त विजय के पश्चात् एक दिन कैखुसरो अपने सामन्तों तथा वीरों के साथ सभा में बैठा था कि अश्व-शाला का संरक्षक वहाँ पर आया और उसने कहा "महाराज, आज अश्व शाला में एक वन गर्दभ आया है जिसने कई अश्वों को घायल कर दिया है। अब महाराज को जो कुछ भी उचित जान पड़े वह करें।" संरक्षक की बात सुन कर कैखुसरू चकित होकर कहने लगा "वन-गर्दभ इस प्रकार घोड़ों को हानि पहुँचावे यह कैसे आश्चर्य का विषय है!" इतने में एक सभासद ने कहा "महाराज! मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि वह अन्य कोई नहीं अगवान देव है जो इसी राज्य के निकट-वर्त्ती बन में रहता है। वही वन-गर्दभ का रूप धारण कर के आया होगा"

अपने सेवकों की यह बात सुन कैखुसरू ने रुस्तम से कहा "हे वीर यह कार्य तुम्हारे अतिरिक्त और कोई नहीं कर सकता अब शीघ्रातिशीघ्र तुम उसका बध कर डालो"। कैखुसरू की आज्ञा-पालन के हेतु रुस्तम अपने शस्त्रों से सुसज्जित होकर उसकी खोज में चल पड़ा।

अश्व-शाला में पहुँचते ही उसने देखा कि अगवान देव सामने से चला आ रहा है। उसने अपना नाग पाश तुरंत उस पर फेंका, परन्तु वह अदृश्य हो गया। थोड़ी देर पश्चात् वह फिर दिखाई पड़ा। इस बार जैसे ही रुस्तम ने अपनी तलवार से उस पर प्रहार करने का प्रयत्न

किया वैसे ही वह अदृश्य हो गया। चार दिन तक यही क्रम चलता रहा, कभी तो वह अदृश्य हो जाता और कभी दीख पड़ने लगता इस प्रकार की माया द्वारा उसने तीन चार दिन पर्यन्त रुस्तम का खाना, पीना तथा विश्राम तक असम्भव कर दिया।

चौथे दिन जब रुस्तम थक कर सो गया तो वह देव आया और रुस्तम को दोनों हाथों पर उठा कर ले चला। वह रुस्तम से पूछने लगा "बोल अब तुझे नदी में फेंकूँ अथवा पर्वत पर दे पटकूँ।" रुस्तम जानता था कि जो कुछ भी मैं कहूँगा यह उसका उलटा ही करेगा; अतएव उसने कहा "तू मुझे पर्वत पर फेंक दे, जिससे मेरी हड्डी-पसुली सब चूर हो जाय।" रुस्तम की यह बात सुन कर उस देव ने उसे नदी में फेंक दिया। इसी समय रुस्तम की सेना उससे युद्ध करने को आ पहुँची पर उस मायावी ने उनको गाजर-मूली की भाँति काट फेंका।

इधर रुस्तम जो पानी में गिरा तो उच्च-श्रेणी का तैराक होने के कारण एक हाथ में भाला लेकर तथा दूसरे हाथ से तैर कर नदी के बाहर निकल आया और अपने कपड़े सुखा कर रख्श के निकट जा कर उस पर सवार होकर चल दिया। अकस्मात उसने देखा कि अफ़रासियाब का अश्व-रक्षक घोड़े लिये जा रहा है। वह उन घोड़ों को हंका कर ले चला। और जब अफ़रासियाब के अश्व-रक्षक सम्मुख आये तो उसने उन सब को मार भगाया।

उन अश्व-रक्षकों ने भाग कर अफ़रासियाब के एक थानेदार को सूचित किया और वह बहुत सी सेना तथा चार युद्ध-गज लेकर रुस्तम के सम्मुख आया। रुस्तम भी उनसे जुट गया। उनमें से कितने तो उसके बाणों से विद्ध होते चल बसे और शेष को उसने अपने खड्ग तथा गदा के द्वारा यमपुरी का मार्ग दिखाया। अपनी सेना को इस प्रकार पराजित होते देख कर वह थानेदार को दिखा कर भाग खड़ा हुआ और इधर रुस्तम उन चार काले युद्ध-राजों को भी अपने अधिकार में कर के आगे बढ़ा। थोड़ी दूर जाकर उसे अपना अश्व-रक्षक मिल गया। उसने वह

चारों हाथी तथा घोड़े उसे सौंप दिये और स्वयं फिर बन की ओर लौट आया। अब उसने अगवान देव के निकट पहुँच कर कहा "निद्रित अवस्था में किसी को मारना कायरों का कार्य है; यदि तू वीर है तो सम्मुख आकर युद्ध कर।" रुस्तम के यह शब्द उसको बाण की भाँति तीक्ष्ण लगे और वह क्रोधित होकर सामने आ डटा।

इसके सम्मुख आते ही रुस्तम भी भूखे बाघ की भाँति उसकी ओर झपटा और शीघ्र ही अपने नाग पाश-द्वारा उसकी कमर बाँध ली और गदा का एक ऐसा प्रहार उस पर किया कि देव का शिर घूम गया। तदुपरान्त उसने अपने खड्ग से उसका शिर काट लिया और उस कटे शिर को अपने नागपाश में बाँध कर कैख़ुसरू के सम्मुख प्रस्तुत किया। कैख़ुसरू ने जो देव का शिर देखा तो चकित हो गया और रुस्तम की प्रशंसा कर बहुत सा धन द्रव्य उस पर निछावर किया। तत्पश्चात् एक सुन्दर रंग मञ्च सजाये जाने की आज्ञा दी जिसमें अपने सामन्तों तथा रुस्तम के साथ वह आनन्द मनाता रहा। इसी प्रकार कई दिन बीतने पर रुस्तम ने कैख़ुसरू से अपनी जन्म भूमि-जाने की इच्छा प्रगट की। कैख़ुसरू ने सहर्ष बहुत-सा धन-द्रव्य भेंट दे कर उसे बिदा किया। और थोड़ी दूर स्वयं उसके साथ जाकर उसको सम्मानित किया।

गेव के पुत्र बैज़न द्वारा अरमान विजय

एक दिन जब कैख़ुसरू अपनी राज-सभा में बैठा था अरमानियों ने आकर दोहाई मचाई और कहने लगे "हे दयामय अरमानियों में आज कल सहस्रों गदाधारी आये हुये हैं जो हम लोगों के खेतों तथा वृक्षों को नष्ट-भ्रष्ट कर रहे हैं। आये दिन हम लोगों को वे इसी प्रकार दुख दिया करते हैं। अब हम लोग आप की शरण में आये हैं। कृपा कर आप हमारी रक्षा कीजिए।" पीड़ितों की करुण कहानी सुन कर कैख़ुसरू ने अपने सामन्तों की ओर देखा। इतने में बैज़न ने उठकर अत्याचारियों के दमन के हेतु राजा से आज्ञा माँगी। और वहाँ से चल दिया।

जब बैज़न गुर्गी के साथ अरमानिया पहुँचा तो वे गदाधारी उससे युद्ध करने के हेतु आगे आये। फिर क्या था मार-काट आरम्भ हो गई और बैज़न अकेला ही सिंह की भाँति तड़प-तड़प कर शत्रुओं का सर्वनाश करने लगा। इतने में एक गुराज़ उसके सम्मुख आया उसने अपनी तलवार का एक हाथ उसकी भुजा पर मारा। इसी समय बैज़न ने अपनी कटार से उसको घायल कर दिया। इसी प्रकार उसने अधिकांश गदाधारियों को यम पुरी भेज दिया। तत्पश्चात् उस स्थान में आग लगा दी जिससे शेष गदाधारी भी उसमें जल कर भस्म हो गये।

शत्रुओं का वध करके बैज़न तथा गुर्गी कुछ काल तक वहाँ रहे। एक दिन गुर्गी ने बैज़न से कहा "यहाँ से निकट ही एक सुन्दर उपवन है जहाँ अफ़रासियाब की पुत्री मनीज़ा जिसको सुन्दरता से स्वयं रति भी लज्जित हो जाती, प्रत्येक वर्ष विहार करने के हेतु अपनी सखियों सहित आती है। मेरी इच्छा है कि उसको देखा जाय।" बैज़न ने जो उसकी सुन्दरता की इतनी प्रशंसा सुनी तो उत्कंठित हो उठा। और वहाँ से चल दिया।

जब वह उस उपवन के निकट पहुँचा तो उसने दूर से देखा कि मनीज़ा अपनी सखियों के बीच ऐसी भासित होती है मानो तारागण के बीच चन्द्रमा सुशोभित हो। वह यह छवि देख कर मंत्र-मुग्ध की भाँति उसके निकट चला गया। जब मनीज़ा ने उसको देखा तो वह भी उसके ऊपर आसक्त हो गई। वह सोचने लगी "मेरे पिता के भय से कोई पक्षी भी इस उपवन में बिना उसकी आज्ञा के नहीं आ सकता। फिर यह सुन्दर युवा कौन है जो ऐसा निर्भीक हो मेरे निकट चला आया है।" उसने अपनी दाई से कहा 'तू जाकर इस अपरिचित से पूछ तो सही कि वह कौन है और यहाँ किस अभिप्राय से आया है।"

मनीज़ा की आज्ञानुसार वह बैज़न के पास गई और उसका नाम धाम तथा यहाँ आने का कारण पूछा। बैज़न ने कहा "मैं गेव का पुत्र

बैज़न हूँ और गदाधारियों से युद्ध करने के उद्देश्य से यहाँ आया था।" उन पर विजय प्राप्त करने पर मुझे तुम्हारी स्वामिनी की सुन्दरता की प्रशंसा सुन पड़ी, जिसे सुनकर उसे देखने की लालसा से अपने तृषित नेत्रों को तृप्त करने के उद्देश्य से यहाँ आया हूँ। इतना कह कर और एक सुन्दर मूल्यवान अंगूठी उसे देकर और भविष्य में भी धन-द्रव्य देने का प्रलोभन देकर उसने कहा 'यदि तुम कोई ऐसा उपाय करो कि मैं उसके निकट पहुँच कर उसे देखूँ तो मैं तुम्हारा बड़ा कृतज्ञ होऊँगा।"

बैज़न की बात सुन कर वह मनीज़ा के पास गई और सम्पूर्ण वृत्तान्त कह कर उसने उसके प्रेम की बात भी कह दी। मनीज़ा ने उसे अपने निकट ले आने का आदेश किया। फलतः वह राजकुमारी की आज्ञानुसार उसको वहाँ ले गई। चलते समय गुर्गी ने द्वेषवश अपनी नीच प्रकृति का परिचय किया। वह उससे बोला "मैं तेरी रक्षा के हेतु यहाँ ठहरूँगा"। परन्तु ज्योंही वह राजकुमारी मनीज़ा के पास गया वैसे ही गुर्गी सेना को लेकर चल दिया। वह जानता था कि शीघ्र ही बैज़न किसी न किसी विपत्ति में अवश्य ही फँसेगा।

इधर बैज़न ज्योंही मनीज़ा के निकट पहुँचा तो वह उठ कर उसके स्वागत के हेतु आगे बढ़ी और उचित अभिवादन के पश्चात् उसे ले आकर अपने पार्श्व में बैठाया। तत्पश्चात् मदिरा तथा आमोद-प्रमोद का दौर चला। तीन दिन तक बैज़न स्वयं भी मदिरा पान करता रहा और उसको भी पिलाता रहा। चौथे दिन जब वह मादकता के कारण चेतना-शून्य होकर पड़ रहा तो मनीज़ा उसे डोली में डाल कर घर ले आई और यह भेद उसने किसी पर भी प्रकट न किया।

अन्तःपुर में पहुँच कर जब बैज़न ने चैतन्य लाभ किया और अपने को शत्रुओं के चंगुल में पाया तो पछताने लगा और ईश्वर से प्रार्थना करने लगा "हे दयामय, गुर्गी ने विश्वासघात कर मुझे इस आपत्ति में फँसाया है, अब तू ही मुझे इस विपदा से उबार अन्यथा मेरे जीवन का

दीपक अफ़रासियाब की दुष्टता, नीचता, द्वेष तथा प्रतिक्रिया की प्रचण्ड वायु के झँकोरे की चपेट खाकर सदैव के लिये बुझ जावेगा।

वह इसी प्रकार मन ही मन पश्चाताप कर रहा था और अपने उद्धार के हेतु ईश्वर से प्रार्थना कर रहा था कि मनीज़ा बोली, "हे वीर! तुम उदास क्यों हो रहे हो। वीरों को प्रत्येक अवस्था में प्रसन्न-चित्त रहना चाहिए। इसके अतिरिक्त तुम्हें ज्ञान होना चाहिए कि अब तक कोई भी तुम्हारे यहाँ रहने के रहस्य को नहीं जानता और न जान सकता है और यदि जान भी ले तो पहिले मैं अपने प्राण दे दूँगी। तत्पश्चात् तुम पर आँच आएगी।" अभिप्राय यह कि इस प्रकार समझा-बुझा कर उसने बैज़न को धारज बँधाया। जब उसकी चिन्ता थोड़ी कम हुई तो वह फिर मदिरा तथा मनीज़ा के सौन्दर्य का शिकार बन गया।

इसी प्रकार कुछ वर्ष पर्यंत वह वहाँ निर्विघ्न रूप से बना रहा। परन्तु मनुष्य के भाग्य की गति सर्वदा एक सी नहीं रहती। और दुःख के पश्चात् सुख तथा सुख के पश्चात् दुःख का दौर चलता ही रहता है। बैज़न का भी भाग्य-चक्र घूमा और एक दिन द्वारपाल को इसके यहाँ पर होने की शंका हो गई। वह अफ़रासियाब के निकट जाकर बोला, "महाराज मुझे ज्ञात हुआ है कि शबिस्तान में राजकुमारी के पास एक वीर स्थायीरूप से रहता है।"

उसकी यह बातें सुन कर उसने अपने सेनापति फ़राहान को बुलाया और इस विषय में उसकी सम्मति चाही। उसने कहा "केवल द्वारपाल की बातों पर विश्वास करके कुछ कर बैठना असंगत है। अतएव आप किसी अन्य व्यक्ति को नियुक्त कीजिये जो स्वयं जाकर इसकी सच्चाई की जाँच करे। यदि वास्तव में यह बात सच है तो वह व्यक्ति मृत्यु तथा अन्य ऐसे ही कठोरतम दण्ड पाने का भागी समझा जाय।" अफ़रासियाब ने सेनापति की बात मान ली और करशेवज़ को थोड़ी सी सेना देकर

बिदा किया और यह आदेश किया कि यदि वहाँ कोई पुरुष हो तो उसको बन्दी करके मेरे सम्मुख उपस्थित करो। करशेवज़ ने यह आदेश पाकर शबिस्तान के लिये प्रस्थान किया।

जब वह वहाँ पहुँचा तो उसने बाजों की झंकार सुनी। उसने राजकुमारी के निवासस्थान को घेर कर उसके फाटक को तोड़ डाला और और रनिवास के अन्दर प्रवेश किया। वहाँ उसने देखा कि मनीज़ा एक अपरिचित व्यक्ति की गोद में निर्लज्जता के साथ बैठी हुई मदिरा पान कर रही है। यह देख कर उसने क्रोध भरे स्वर में कहा, "ओ नीच! तू कौन है। क्या तुझे विदित नहीं कि यह अफ़रासियाब का राज्य है। तू ने यह निर्लज्ज कार्य्य करने का साहस कैसे किया?"

बैज़न ने जो देखा तो विवश-सा होकर कहने लगा "हे ईश्वर, अब मैं किस प्रकार अपने शत्रु से युद्ध करूँ क्योंकि न तो मेरे पास तीर है, न तलवार और न मेरी गदा ही। हे दीनानाथ! अब तुम ही मेरी मदद करो।" वह केवल एक कटार लेकर रनिवास के द्वार पर आकर बोला "सुन, मैं गेव का पुत्र बैज़न हूँ। ध्यान रख कि यदि कोई भी आगे बढ़ा तो मैं इसी कटार द्वारा उसका प्राण हरण करूँगा। यदि तू इस बात का वचन दे कि राजा मेरा कोई अनिष्ट न करेगा तो मैं अवश्य बिना युद्ध किये ही उसके पास चला चलूँगा।"

छली करशेवज़ ने हृदय में विचार किया "यदि इससे युद्ध किया गया तो निश्चय ही यह हम सब को मार गिरावेगा। अतः असत्य आश्वासन देकर ही इसे बन्दी कर लिया जाय।" अस्तु उसने उसे वचन दे दिया पर ज्योंही उसने कटार उसके हाथ में दे दी, त्योंही करशेवज़ के सैनिकों ने उसे बन्दी कर लिया और उसे बड़ी दुर्दशा के साथ अफ़रासियाब के सम्मुख ले पहुँचे।

करशेवज़ ने उसे राजा के सामने उपस्थित करके बहुत सी बातें कहीं, जिन्हें सुनकर राजा को उस पर बड़ा क्रोध आया और उसने पूछा "तू कौन है और किस प्रकार मेरी पुत्री के रनिवास में जाने का साहस किया।"

बैजन ने कहा "मैं शद्वाश्रारियों को दमन करने के उद्देश्य से यहाँ आया था और कृत-कार्य होकर मैं एक दिन अपने साथी के साथ आखेट के लिये निकला था कि अचानक मेरा साथी मुझसे बिछुड़ गया। मैंने उसे बहुत खोजा यहाँ तक कि मैं थक गया, पर वह न मिला। अस्तु मैं थक कर एक वृक्ष के नीचे सो गया कि इतने में एक परी आई और मुझे वहाँ से उठा ले गई। जब मेरी निद्रा भंग हुई तो मैंने देखा कि एक ओर से तूरानी सेना आई जिसके साथ पालकी भी थी। वह परी मुझे उस पालकी में डाल कर तथा उस सुन्दरी के ऊपर जो कि उस पालकी में पूर्व से ही बैठी थी कुछ मंत्र पढ़ कर अदृश्य हो गई। परी के मंत्र से प्रभावित होकर वह सुन्दरी मुझे अपने अंतःपुर में ले गई। अब आप ही बताइये कि इसमें मेरा क्या दोष है?"

बैज़न की इस कथा ने अफ़रासियाब की क्रोधाग्नि में घृत का कार्य किया। अस्तु उसने डपट कर कहा "ओ छली! चुप रह। तू मुझे अपनी असत्य बातों से छलना चाहता है। मैं भली भाँति जानता हूँ। तू वही है जो युद्ध के समय अपने घोड़े कुदा-कुदा कर मेरी सेना का संहार करता था। अब इस समय भयभीत होकर तथा प्राणों के मोह से स्त्रियों की भाँति चरित्र दिखा रहा है। तुझे विदित हो कि अब तू यहाँ से जीवित नहीं लौट सकता।"

अफरासियाब की यह अपमान भरी बातें सुन कर पैर से कुचले हुये सर्प की भाँति फुफकार कर बैज़न बोला—"ले अब सुन कि मैं गेव का पुत्र बैज़न हूँ। ध्यान रख कि मुझे बन्दी करना गुड़ियों का खेल नहीं है, पर तेरे विश्वासघाती जामाता के फेर में आकर मैं इस समय तेरे सम्मुख बन्दी रूप में खड़ा हूँ। अन्यथा तूरानियों का इतना साहस कहाँ जो मुझे बन्दी कर लेते। यदि तुझे विश्वास न हो तो अब भी मुझे एक खड्ग देकर अपने एक हज़ार मँजे मँजाये सैनिकों को भेज, फिर मेरा युद्ध कौशल देख। यदि एक भी तूरानी शेष रह जाय तो मुझे वीर बैज़न न कहना।"

बैज़न की इन बातों से अफ़रासियाब के शरीर का सारा रक्त एक-बारगी उसके मस्तिष्क पर चढ़ गया और उसने क्रोधित होकर करशेवज़ को आज्ञा दी कि इसे ले जा कर तुरन्त सूली पर चढ़ा दो। आज्ञा पाते ही करशेवज़ उसे लेकर सूली के लिये नियत स्थान पर पहुँचा।

जिस समय करशेवज़ सूली को ठीक करा रहा था कि अचानक पीरान उधर से आ निकला और सब बातें जान कर उसने करशेवज़ से कहा—"तू इस कार्य्य में जल्दी न कर।" उसको इस प्रकार रोक कर स्वयं अफ़रासियाब के पास आया और कहने लगा 'मैंने तो आपको सर्वदा उत्तम मंत्रणा ही दी है और इस बार फिर भी आपसे प्रार्थना करता हूँ कि बैज़न को सूली देकर तू कैख़ुसरू के हृदय में स्वर्गीय सियावश के दुख को फिर से हरा न कर। तू ही बता कि सियावश की हत्या से आपत्तियों के अतिरिक्त और क्या लाभ हुआ। मेरा कहना मान और मृत्यु के स्थान पर उसे अन्य कठोर से कठोर दण्ड दे दे।"

दैवी प्रेरणा-वश अफ़रासियाब ने उसकी बात मान ली और उसे अन्धे कुयें में बन्दी करके कठिन से कठिन यन्त्रणा देने की आज्ञा दी और साथ ही यह भी कहा "अगवान देव द्वारा फेंके हुये पत्थर से उस कुयें को ढाँक दिया जाय।" तत्पश्चात् उसने मनीज़ा को भी उसी प्रकार का दण्ड सुनाया। परन्तु उसकी माता के रोने गिड़गिड़ाने से उसने उसे केवल गृह-त्याग का दण्ड दिया।

पिता के दण्ड के कारण उसे घर त्यागना पड़ा परन्तु वह बैज़न के प्रेम के कारण किसी अन्य स्थान पर न जाकर उसी कुयें के निकट रहने लगी। दिन भर भीख माँगती और जो कुछ मिलता उसी से कुयें के झरोखे द्वारा बैज़न को खिलाती तथा जो शेष बचता उसे आप खाती। इसी प्रकार वह अपने तथा अपने प्रेमी के प्राणों की रक्षा करती रही। अन्त में ईश्वर ने उन दोनों की फिर सहायता की।

बैज़न के जाते ही गुर्गी उसे विपत्ति में फाँसने के लिये सेना लेकर ईरान लौट आया यह हम पहले ही लिख चुके हैं। यहाँ जब गौदुर्ज ने बैज़न को न देखा तो उसे गेव के पास ले गया। गेव ने पूछा "बैज़न क्यों नहीं आया और कहाँ रह गया?" इस पर गुर्गी ने कहा—"जब हम लोग गदाधारियों को दमन कर के लौट रहे थे तो मार्ग में हम लोगों को एक बनगर्दभ दिखाई पड़ा। इतने में बैज़न ने अपना घोड़ा बढ़ा कर उस पशु को अपने नागपाश से बन्दी किया पर वह न जाने कैसे छुड़ा कर भाग निकला। पशु को भागते देख बैज़न ने भी अपना घोड़ा उसके पीछे डाल दिया। थोड़ी ही देर में दोनों अदृश्य हो गये। मैंने बहुत काल-पर्यन्त उसकी प्रतीक्षा की। परन्तु जब वह न लौटा तो हम उसकी खोज में गये। बहुत दूर निकल जाने पर मैंने उसके घोड़े को इधर-उधर मारा-मारा फिरते देखा। बैज़न को न पाकर हम लोगों को बड़ी चिन्ता हुई और फिर हम लोगों ने खोजना आरम्भ किया परन्तु उसका कोई चिन्ह न पाकर हम सब रोते-पीटते लौट आये।

गुर्गी के इस कथन से गेव का माथा ठनका। उसने जान लिया कि अवश्य मेरा पुत्र किसी संकट में फंस गया है। अतः वह पुत्र-वियोग से पीड़ित हो अपनी तलवार खींच कर उसे मारने दौड़ा परन्तु गौदुर्ज ने उसे रोक कर कहा "इसकी हत्या करने से क्या लाभ। तुम इसको कल कैखुसरू के निकट ले चलो। वह जो चाहेंगे करेंगे।" उसने तलवार तो म्यान में रखली, कटु वचन कहकर गुर्गी से बोला "तू जानता है कि बैज़न कहाँ है? सत्य-सत्य बता दे अन्यथा जान रख कि मैं तुझे किसी प्रकार जीता न रक्खूँगा। तूने मेरे पुत्र को संकट में फँसा कर मेरा बड़ा अनिष्ट किया है।" यही तक नहीं उसने गुर्गी को दो सौ कोड़े मारे। यहाँ तक कि वह मूर्च्छित हो गया तब वह उसके बाल पकड़ कर घसीटता हुआ कैखुसरू के पास ले गया।

कैखुसरू के सन्मुख उसे उपस्थित करके वह फूट-फूट कर रोने लगा और कहने लगा "महाराज! इसने मेरा सर्वनाश कर डाला। इसने मेरे

इकलौते को संकट में डाल दिया और स्वयं चला आया। अब यदि आप मेरी सहायता न करेंगे तो मैं कहीं का भी न रहूँगा और इसी प्रकार रोते-रोते एक दिन पुत्र-वियोग में मैं भी मर जाऊँगा।"

राजा ने गेव की दुःख-भरी कहानी सुनते ही गुर्गी से पूछा "बतला बैज़न कहाँ है ?" उसने इनको भी उलटी-सीधी पट्टी पढ़ाई। कैखुसरू उसकी बातों से जल भुन गया और बहुत से कटु वचन कहने के पश्चात् उसे कारागार में डाल दिया। तदुपरान्त उसने ज्योतिषियों को बुला कर उनसे बैज़न के विषय में पूछा। उन्होंने उत्तर दिया "महाराज ! वह अभी जीवित तो है पर है घोर संकट में।"

ज्योतिषियों का कथन सुन कर उसने गेव को बुला कर सब बातें समझा दीं तथा उसे धैर्य बँधाकर बोला, "तुम घबराओ नहीं। मैं तुम्हारे पुत्र को तुमसे मिला दूँगा। अभी तो तुम इतना करो कि सवारों को उसकी खोज के लिये चारों ओर भेज दो, परन्तु देखो, कोई समाचार न मिलने पर घबरा मत जाना। नौ रोज़ तक किसी शुभ समाचार की प्रतीक्षा करना और उसी दिन आकर फिर याद दिलाना।" कैख़ुसरो की उपर्युक्त बातें सुन कर गेव उसे आशीर्वाद देता हुआ चला गया और राजा के कथनानुसार उसने पुत्र की खोज के लिये चारों ओर सवार भेज दिये।

अन्ततः नौरोज़ भी आ गया और सवार भी लौट आये, पर बैज़न का कोई भी पता न मिला। तब गेव फिर रोता कलपता कैख़ुसरो के पास आया। राजा ने जब उसकी ऐसी दीन दशा देखी तो उसका हृदय भर आया। उसने तुरन्त ग्रहों की गति दिखवाई, परन्तु बैज़न का कुछ पता न लगता था। बड़ी देर बाद एक ज्योतिषी ने कहा "बैज़न तूरान के एक अन्धे कुएँ में बन्दी है, जिसको एक बहुत बड़ी पत्थर की शिला से बन्द कर दिया गया है। और कयानी वंश की एक कन्या उसकी सेवा में है।"

पुत्र को इस घोर संकट में पड़ा जान कर गेव ने कै.खुसरो से स्वयं ही जाकर पुत्र को छुड़ाने की आज्ञा माँगी परन्तु उसने कहा, "बैज़न का उद्धार रुस्तम के अतिरिक्त और किसी के किये न होगा, अतएव तुम मेरा पत्र लेकर सीस्तान जाओ और रुस्तम को अपने साथ ले आओ। तत्पश्चात् उसको साथ ले कर प्रस्थान करो और अपने प्रिय पुत्र को बन्धन मुक्त करो।"

कै.खुसरो के कथनानुसार गेव पत्र लेकर सीस्तान गया। जब वह रुस्तम के निकट पहुँचा तो उसे पत्र देकर उसने बैज़न का सारा हाल रो-रोकर कह सुनाया। रुस्तम ने कहा "भाई! अब तो मेरी ऐसी अभिलाषा है कि घर छोड़ कर कहीं न जाऊँ, परन्तु तुम्हारा विलाप तथा बैज़न का प्रेम ऐसा करने में बाधक है। तुम विश्वास रक्खो कि मैं बैज़न को अवश्य इस संकट से मुक्त करूँगा।" इस प्रकार गेव को धैर्य देकर तीन दिन तक अपने यहाँ रक्खा। चौथे दिन शस्त्रों से सज्जित होकर ईरान को प्रस्थान किया।

कै.खुसरो को जब रुस्तम के आगमन का समाचार मिला तो उसने समस्तसामन्तों को उसकी अगवानी के लिये भेजा, जो उसे सम्मान-पूर्वक राज-सभा में ले आये। कै.खुसरो ने उसे एक सुन्दर सिंहासन पर आसन दिया और उसकी बड़ी प्रशंसा की। तदुपरान्त उसने बैज़न के संकट की बात कह सुनाई और उसके उद्धार के हेतु ससैन्य जाने को कहा। रुस्तम ने उत्तर दिया "मेरे विचार से सेना ले जाने में हानि की सम्भावना है, क्योंकि जब अफ़रासियाब को यह विदित होगा, कि मैं सैन्य सहित आ रहा हूँ तो ऐसा न हो कि वह बैज़न की हत्या कर डाले। अस्तु मैं चाहता हूँ कि व्यापारी के वेश में जाकर उसे छुड़ा लाऊँ और कोई ऐसी बात कर आऊँ कि वह भी दाँतों तले उँगली दबा ले।"

कै.खुसरो को रुस्तम की यह युक्ति बहुत अच्छी लगी। अतएव उसने बहुत से ऊँट मँगवा कर उन्हें भिन्न-भिन्न स्थानों की भिन्न-भिन्न

वस्तुओं से लाद दिया। तत्पश्चात् थोड़े से छँटे हुये सैनिकों तथा विख्यात वीरों को रुस्तम के साथ देकर उसे विदा किया।

ईरान से विदा होकर रुस्तम एक हज़ार वीरों के साथ व्यापारी के वेश में तूरान की ओर चल दिया। उसके बिदा होने के पूर्व गुर्गी ने कहा "कारागार से मुक्त करके आप मुझे अपने साथ लेते चलें।" इस पर रुस्तम ने उत्तर दिया "तुमने बहुत बड़ा अपराध किया है; और तुम जैसे व्यक्ति को साथ ले जाना है भी असंगत।" पर उसके पुत्रों को रोता देख कर रुस्तम को दया आ गई, और उसने जाकर कैखुसरू से कहा। रुस्तम की बात सुन कर कैखुसरू ने उत्तर दिया "मैंने इस बात की प्रतिज्ञा की है कि जब तक बेज़न यहाँ न आ जायगा तब तक मैं इसे मुक्त न करूँगा; और यदि किसी प्रकार उसका अनिष्ट हो गया तो निश्चय जानो कि इसे भी मृत्यु के मुख में जाना ही होगा।" कैखुसरू की ये बातें सुन कर रुस्तम ने गुर्गी का दायित्व अपने सिर ले लिया और उसे कारागार से निकल कर अपने साथ ले लिया, फिर भी कैखुसरू ने उसके पुत्रों को उसके स्थान पर कारागार में डाल दिया।

गुर्गी को लिये हुये रुस्तम तूरान पहुँचा और नगर के बाहर ही पड़ाव डाल दिया। और एक दिन पीरान के निकट कुछ मूल्यवान वस्तुयें भेंट स्वरूप लेकर गया। जब पीरान ने उसे देखा तो पूछने लगा "तू कौन है और कहाँ से आया है!" इस पर उसने कहा "मैं ईरान से आया हूँ और एक साधारण व्यापारी हूँ।" वह छद्म वेश में था अतः पीरान यह न जान सका कि यह स्वयं रुस्तम ही है। सारांश यह कि जब प्रश्नों द्वारा उसे विश्वास हो गया कि ये लोग ईरानी पहलवान अथवा गुप्तचर नहीं हैं तो उसने उन्हें अपने पास रहने का आदेश दिया और यह विश्वास दिलाया कि तुम्हें किसी भी प्रकार की हानि की शंका नहीं करनी चाहिए। रुस्तम ने पीरान की बात को स्वीकार कर लिया।

रुस्तम के नगर में प्रवेश करते ही उसके व्यापार का समाचार अफ़रासियाब को भी मिला। फिर क्या था उसका व्यापार एक दम चमक गया। इसी बीच एक दिन जब ईरानी व्यापारियों के आगमन का समाचार मनीज़ा को मिला तो वह रुस्तम के निकट आ कर पूछने लगी "क्या तू गोदुर्ज़ को जानता है और क्या तुझे यह ज्ञात है अथवा नहीं कि बैजन के बन्दी होने की सूचना ईरान में पहुँची भी है।"

मनीज़ा की उपयुक्त बातें सुन कर रुस्तम क्रोधित हो कर बोला "चली जा यहाँ से, दूर हो, मैं ईरान के राज्य के बारे में क्या जानूँ। मेरा रुस्तम, गोदुर्ज़ तथा गुर्गी से क्या सम्बन्ध।" मनीजा उसकी इन तिरस्कार पूर्ण बातों को सुन फूट-फूट कर रोने लगी। उसके विलाप से रुस्तम का दिल भर आया और उसने उसके इस प्रकार दुखी होने का कारण पूछा।

मनीजा सिसक-सिसक कर कहने लगी "मैं अफ़रासियाब की पुत्री मनीज़ा हूँ। और दुर्भाग्यवश बैज़न के प्रेम में गृह-त्याग का दण्ड पाकर इस अवस्था को पहुँची हूँ। बेचारा बैज़न मेरे ही कारण एक अन्धे कुँआ में बन्दी कर दिया गया है। उसके हाथ पैर लोह शृंखलाओं से जकड़ दिये गये हैं।" उसने उस पत्थर की शिला की भी बात बताई जो उस कुआँ के मोहरे पर रक्खी गई है।

इस प्रकार बैज़न का पूर्ण समाचार पाकर रुस्तम ने उसे ढारस बंधाया और फिर पूछा "यह तो बता कि उसे भोजन किस प्रकार मिलता है। यह सुनकर मनीज़ा ने उसे बताया कि वह किस प्रकार उसे नित्य भोजन पहुँचाती रहती है। इस पर रुस्तम ने भुना हुआ मुर्ग और रोटी, जिस के भीतर उसने अपनी अंगूठी गुप्तरीति से रख दी थी उसे दी और कहा "आज यह भोजन उसे देना।" मनीजा ने वही भोजन बैज़न के पास पहुँचा दिया। उसने रोटी को जैसे ही तोड़ी और रुस्तम की अंगूठी देखी तो उसका हृदय आनन्द से पुलकित हो उठा। वह खूब हँसा, यहाँ तक कि उसकी हँसी का शब्द मनीजा को भी सुनाई दिया।

उसकी इस आकस्मिक हँसी ने मनीज़ा को चकित कर दिया। उसने बैज़न से पूछा "नित्य जब मैं तुम्हें भोजन देती थी तो तुम ठंडी स्वासें भरते थे परन्तु आज इस भोजन में क्या विशेषता है जो तुम इस प्रकार हँस पड़े।" इस पर बैज़न ने कहा "यदि तू इस रहस्य को अपने ही तक सीमित रखने का वचन दे तो मैं तुझे बतला दूँ।" उसकी यह बात सुन कर मनीजा बोली—"बड़े दुःख की बात है कि मैं तो केवल तुम्हारे प्रेम की दीवानी हो घर-द्वार सबका परित्याग कर इस प्रकार भिखारिणी बनी फिरती हूँ और तुम्हें अब भी मुझ पर पूर्ण विश्वास नहीं है।"

जब उसे विश्वास हो गया तो उसने पूछा "यह भोजन तू कहाँ से लाई है।" इस पर उसने बताया कि ईरान के कुछ व्यापारी आये हैं जिन्होंने मुझे यह भोजन दिया है। तब उसने कहा "वह व्यापारी रुस्तम तथा उसके साथी ही हैं जो कि मुझे मुक्त कराने के उद्देश्य से इस रूप में आये हैं। अब तू जाकर उनसे यह पूछ आ कि तुम किस प्रकार उसको कुयें से बाहर करोगे और वह जो कुछ कहें वह आकर मुझे बतला देना।" यह सुन कर वह फिर रुस्तम के पास गई और उससे पूछ कर बैज़न को पूरा हाल बतला दिया।

उसी रात को रुस्तम अपने सात आठ साथियों के साथ वहाँ गया और पत्थर को उठा कर चीन की ओर फेंक दिया और फिर नागपाश द्वारा बैज़न को कुयें से निकाला तथा साँकलों से बन्धन मुक्त कर उसे मनीजा को लेकर चले जाने का आदेश दिया, परन्तु बैज़न ने कहा—"मैं किसी भी प्रकार आपका साथ न न छोड़ूँगा। विवश होकर रुस्तम ने उसे भी साथ ले लिया और अन्तःपुर की ओर चल पड़ा। वहाँ पहुँच कर उसने मार काट आरम्भ कर दी। सारांश यह कि समस्त द्वारपालों का बध कर के वह गढ़ के अन्दर घुस गया। वहाँ पर सेना ने उसका सामना किया परन्तु वह उसे यमलोक भेज कर अफ़रासियाब के शयनागार में पहुँच गया और ललकार कर

बोला "ओ नीच सुन। मैं रुस्तम हूँ और बैज़न को जो कि तेरा दामाद् है और जिसे तू ने बन्दी कर रक्खा है मुक्त करके लिये जाता हूँ।" रुस्तम के शब्द अफ़रासियाब के कान में जो पड़े तो वह भयभीत होकर भागा परन्तु रुस्तम ने अपनी गदा का एक हाथ जड़ ही तो दिया। उसके भाग जाने पर वह एक सुन्दरी को अपने साथ लेकर वहाँ से चल दिया। उसके समस्त वीर तथा सहायकों ने भी एक-एक कनकलता को हथिया लिया। इसके अतिरिक्त बहुत सी सुन्दर स्त्रियाँ स्वयं ही ईरानियों के साथ हो लीं। सब को लेकर ये लोग पड़ाव पर आये और सुख-पूर्वक विश्राम करने लगे।

प्रातःकाल अफ़रासियाब अपनी सेना लेकर युद्ध के लिये आ उपस्थित हुआ। इधर रुस्तम भी तैयार होकर स्वयं क्षेत्र में उतरा, और लगा अपने प्रति-द्वन्द्वी को चुनौती देने। रुस्तम को मैदान में देख कर तूरानियों में से किसी का साहस युद्ध में प्रवृत्त होने को न हुआ। अतएव रुस्तम ने अफ़रासियाब को धिक्कारते हुये कहा "अरे कायर! तू कितनी ही बार मुझसे पराजित हो चुका है और अपने सैनिकों का अकारण ही नाश कराता रहा है, इतने में भी मुझसे युद्ध करने में तू लजाता नहीं।"

रुस्तम की इन बातों से लज्जित होकर अफ़रासियाब ने अपनी सेना को सम्बोधन करके कहा, "वीरो! यह रंग मञ्च नहीं है, समर भूमि है। तथा इस समय अपने प्राणों का मोह त्याग कर शत्रुओं पर आक्रमण कर दो और एक भी ईरानी को जीवित न छोड़ो।" उसके इस वक्तव्य ने तूरानियों को उत्तेजित कर दिया और वह ईरानियों से भिड़ गये। फिर क्या था। रुस्तम तथा उसके भेजे भेजाये वीर भी लगे बढ़-चढ़ कर हाथ दिखाने। सारांश यह कि ईरानियों ने तूरानियों को गाजर मूली की भाँति काटना आरम्भ कर दिया। अन्त में अफ़रासियाब वहाँ से भाग निकला। उसको इस प्रकार भागते देख कर रुस्तम ने उसका पीछा किया। इस अवस्था में भी उसने सहस्रों तूरानियों को मार गिराया।

तूरानियों पर विजय प्राप्त कर तथा बहुत-सा धन द्रव्य लूट कर रुस्तम ईरान की ओर चल दिया। यहाँ जब कैख़ुसरो को इस विजय का शुभ सन्देश मिला तो वह हर्षित हो गया और अन्य पदाधिकारियों को उसे सम्मान-पूर्वक लाने के लिये भेजा, और पश्चात् स्वयं भी उस की अगवानी के लिये गया। जब वे सब राज सभा में पहुँचे तो कैख़ुसरो ने रुस्तम की प्रशंसा की। कुछ दिनों तक इस विजय के उपलक्ष में आमोद-प्रमोद का दौर चलता रहा।

अफ़रासियाब का ईरान पर आक्रमण और पराजय

रुस्तम से परास्त होकर जब अफ़रासियाब तूरान की ओर भागा तो मार्ग में उसे एक पुरुष मिला। उसने परिचय पूछे जाने पर कहा "हे राजन्! तूरान मेरी जन्म-भूमि है, पर मैं नहीं जानता कि मेरा पिता कौन है। क्योंकि मेरी माता का कथन है कि एक बार एक प्यासा पहलवान मेरे घर पर आया और मेरी माँ से पानी माँगा। माँ ने जो उस वीर को देखा तो वही मेरा पिता हुआ। इस प्रकार मेरा जन्म हुआ है और मेरा नाम बरज़ू है।"

अफ़रासियाब उस अपरिचित का इतिहास सुन कर तथा उसका भीमकाय शरीर देख कर बोला "सुन, ईरान देश में रुस्तम नाम का एक योद्धा है जिसने मुझे दुखी कर रक्खा है। यदि वह मारा जाय तो फिर कोई हमारा सामना नहीं कर सकता। अतएव यदि तू उससे युद्ध कर उसका बध कर डाले तो मैं तुझे चीन का मंत्री बना दूँगा तथा अपनी एक पुत्री भी भेंट स्वरूप दूँगा।"

बरज़ू ने जब यह बातें सुनीं तो अभिमानपूर्वक बोला "एक क्या एक सौ रुस्तम भी आवें तो मैं उन्हें मशक के समान मसल कर रख दूँ। यदि आप की आज्ञा हो तो मैं ईरान को आग लगा कर फूँक दूँ।" बरज़ू की इन बातों को सुन कर तथा हृष्ट-पुष्ट शरीर देख कर अफ़रासियाब को विश्वास हो गया कि यह रुस्तम को अवश्य ही मार

गिरायेगा, अतएव वह उसको अपने साथ ले गया और हर प्रकार से सम्मानित करके बहुत सा धन द्रव्य देकर उसे उत्साहित किया। परन्तु जब बरज़ू की माता को इसका ज्ञान हुआ तो वह दौड़ी हुई आई और उसको बहुत प्रकार से समझाया—"तू क्रोध के वश होकर अपना जीवन न गँवा; क्योंकि रुस्तम साक्षात् काल का अवतार है और उसे चुनौती देना मृत्यु को निमंत्रण देना है।" माँ के इस प्रकार समझाने बुझाने पर वह फिर राजा के पास गया और अपनी कौशलहीनता को उस पर प्रकट किया।

जब अफ़रासियाब को इसका ज्ञान हुआ तो उसने बहुत से वीरों तथा गुरुजनों को उसे रण-कौशल में निपुण करने के हेतु नियुक्त कर दिया और यह भी कहा कि वे नित्य उसे कुछ न कुछ सिखाते रहें। सारांश यह कि कुछ काल के पश्चात् वह सब प्रकार की युद्ध-कलाओं में निपुण हो गया। तब एक दिन अफ़रासियाब के निकट उपस्थित होकर बोला "राजन्! यदि आज्ञा हो तो मैं अपने गुरू जी को बन्दी करके लाऊँ।"

बरज़ू की यह अभिमान-पूर्ण बात सुन कर उसने इसकी वास्तविकता के विषय में अन्य वीरों से परामर्श किया और जब उसे विश्वास हो गया कि वास्तव में वह रण-कौशल में निपुण हो गया है तो एक सिंहासन मंगाकर तथा उसे उस पर आसन देकर अपने सभासदों से उसका सम्मान करने का आदेश किया। तदुपरान्त बरज़ू से बोला "तुम हूमां तथा बारमां के साथ दस सहस्र सैन्य लेकर ईरान पर आक्रमण करो और मैं भी जितनी सेना एकत्रित हो सकेगी लेकर तुम्हारे पीछे आता हूँ। अस्तु उसने सेना लेकर ईरान की ओर प्रस्थान किया और अफ़रासियाब भी अपने कथनानुसार एक बहुत बड़ी सेना लेकर ईरान की ओर अग्रसर हुआ।"

इधर जब कैख़ुसरू को इस आक्रमण की सूचना मिली तो वह सोचने लगा कि क्या कारण है कि अफ़रासियाब इतनी बार पराजित

होने पर भी इस बार स्वयं ही आक्रमण करने आया है परन्तु जब इसका कोई कारण उसकी समझ में न आया तो उसने फरेबुर्ज़ तथा तोस की संरक्षता में अपनी सेना भेजी। एक दिन तथा रात भर युद्ध होता रहा जिसका वर्णन करना सामर्थ्य के बाहर है। जब तोस और फरेबुर्ज़ बरज़ू के सन्मुख आये तो उसने सहज ही उनको बन्दी कर लिया और अफ़रासियाब के पास ले गया। जब उसने तोस तथा फ़रेबुर्ज़ को बन्दी देखा तो फूला नहीं समाया।

बरज़ू द्वारा पराजित होने का समाचार जब कैखुसरू को मिला तो वह बड़ा दुखी हुआ, और रुस्तम को बुला कर उसने तोस तथा फ़रेबुर्ज़ के बन्दी होने की बात कही। जिसे सुन कर रुस्तम आपे से बाहर हो गया, और बोला "आप दुखी न हों, मैं जाकर दोनों को छुड़ा कर तथा तूरानियों को पराजित करके आता हूँ।" इतना कह कर तथा गस्तहुम को साथ लेकर वह तूरानियों के पड़ाव की ओर चल दिया।

वहाँ जाकर उसने एक पड़ाव देखा। उसने सोचा कि यह बरज़ू का शयनागार है, परन्तु जब निकट पहुँचा तो देखा कि अफ़रासियाब अपने सिंहासन पर बैठा है और पीरान तथा बरज़ू भी यथास्थान बैठे हुये हैं और तोस तथा फरेबुर्ज़ हाथ बाँधे हुये उसके सामने खड़े हैं, और अफ़रासियाब उनसे कह रहा है "ध्यान रक्खो कि मैं सियावश की भाँति तुम्हारा भी बध करूँगा।" तत्पश्चात् सैनिक उन्हें निश्चित स्थान पर बन्दी करने के लिये ले गये। संरक्षकों के असावधान होते ही रुस्तम ने उन्हें यमपुरी का मार्ग दिखा दिया तथ तोस और फरेबुर्ज़ को अपनी पीठ पर लाद कर चल पड़ा पश्चात् उनकी बेड़ियाँ काट कर उन्हें मुक्त कर कैखुसरू के निकट आया। जब उसने अपने दोनों वीरों को बन्धन-मुक्त देखा तो रुस्तम की बड़ी प्रशंसा की।

इधर प्रातःकाल जब अफ़रासियाब को बन्दियों के छूट जाने की सूचना मिली तो उसको बड़ा क्षोभ हुआ और उसने बरज़ू को युद्ध के

लिये आज्ञा दी। अस्तु बरज़ू घोड़ा कुदा कर मैदान में आया और लगा रुस्तम को ललकारने। कैखुसरू ने जो यह सुना तो रुस्तम से युद्ध में प्रवृत्त होने के लिये कहा और रुस्तम भी मदमत्त गज की भाँति झूमता हुआ गया।

थोड़ी देर तक बातें होने के पश्चात् बरज़ू ने बाण-वर्षा आरम्भ कर दी। तब रुस्तम ने भी बाणों का उत्तर बाणों से दिया। जब बाणों से उनके निषंग खाली हो गये तो दोनों ने अपनी अपनी गदाएँ सँभालीं और जब गदा भी झुक कर धनुषाकार हो गयी तो दोनों ने मल्ल युद्ध को ठानी। और दोनों ही एक दूसरे से गुथ गये। एक दूसरे को दे पटकने के हेतु वे अपना पूर्ण बल लगाने लगे, यहाँ तक कि दोनों के कमरबन्द तक टूट गये। इस समय बरज़ू ने फिर अपनी गदा का एक प्रहार रुस्तम पर किया जिससे रुस्तम को ऐसा प्रतीत हुआ मानो उस पर वज्र टूट पड़ा हो। उसकी ढाल चूर-चूर हो गई और भुजाएँ शक्तिहीन हो गईं। रुस्तम इस प्रहार से विह्वल हो उठा, और यह सोचने लगा "मैं किस प्रकार इस पर अपना हाथ चलाऊँ। इधर बरज़ू को यह भय हुआ कि जब यह वार मेरा चोट को संभाल गया है तो निश्चय ही यह मुझसे बलवान है और यदि कहीं इसने प्रहार किया तो मेरी मृत्यु अवश्यंभावी है। अतएव रुस्तम के कहने पर उस दिन युद्ध स्थगित करके वे अपने-अपने पड़ाव को गये।

जब दोनों योद्धा रण-क्षेत्र से फिरे तो बरज़ू सीधा जाकर अफ़रासियाब से, बोला—"हे राजन्! यह मनुष्य नहीं है, मनुष्य के रूप में कोई और शक्ति है। उसकी धीरता, वीरता तथा बल देख कर अब मैं यह विश्वस्त रूप से नहीं कह सकता कि कौन विजयी होगा।"

इधर तो बरज़ू ये बातें कर रहा था उधर रुस्तम भी रोता हुआ कैखुसरू के निकट गया और बोला "मेरे प्रतिद्वन्द्वी ने आज मेरा हाथ तोड़ दिया है जिसके कारण मैं कल युद्ध में न जा सकूँगा परन्तु मुझे अपनी सेना में उससे युद्ध के योग्य कोई नहीं दीखता। यदि मेरा पुत्र

फरामर्ज़ होता तो अवश्य वह शत्रु को धराशायी कर सकता अतएव आप किसी को उसे बुलाने के लिये भारतवर्ष भेजिये ।" उसकी ये बातें सुनकर कै.खुसरू ने कुछ उत्तर नहीं दिया और रुस्तम भी अपने डेरे को चला गया ।

रुस्तम के चले जाने के पश्चात् कै.खुसरू ने कहा "कल मैं स्वयं ही युद्ध करने के लिये जाऊँगा ।" यह सुन कर गुदुर्ज़ बोला "महाराज ! जब तक हम सेवकों के शरीर में रक्त की बूँद भी शेष रहेगी तब तक हम लोग आप को तो न जाने देंगे । फिर यदि हम लोगों के दिन ही बुरे आ गये होंगे तो जो आप की इच्छा हो वह कीजिए ।"

इतने ही में ज़वारा ने आकर सूचना दी कि रुस्तम कल सवेरे सीस्तान की ओर प्रस्थान करेगा । उसकी यह बातें सुन कर सब सभासद उसके पास गये और उसे जाने से रोकने लगे । और कहने लगे "तुम्हारे चले जाने से हम लोग शक्तिहीन हो जायेंगे । अतएव तुम यहीं रहो ।" इस पर रुस्तम ने कहा "कल जब बरज़ू रण-भूमि में ललकारेगा तो क्या मैं इसी टूटे तथा घायल हाथों से युद्ध करूँगा ।" वह अभी यह कह ही रहा था कि फ़रामर्ज़ आ गया । उसे देखते ही रुस्तम सब दुःख भूल गया और उसने उसको अपने हृदय से लगा लिया ।

दूसरे दिन जब बरज़ू ने रण-क्षेत्र में आकर ललकारा तो गुर्गी घोड़े पर चढ़ मैदान में आया, और युद्ध करने लगा । इधर रुस्तम ने फ़रामर्ज़ से कहा "तु मेरे वस्त्र धारण करके तथा रख़्श पर सवार होकर रण में जा जिससे उसे यही विदित हो कि तू वही मनुष्य है जो गत दिवस युद्ध के हेतु आया था ।" सारांश यह कि फ़रामर्ज़ अपने पिता के आदेशानुसार उसी के वस्त्र धारण करके तथा रख़्श पर चढ़ कर जब युद्धस्थल में आया तो गुर्गी को युद्ध करता हुआ देख कर कै.खुसरू के पास गया । उसने फ़रामर्ज़ को देख कर कहा—"सम्भव है कि गुर्गी युद्ध में परास्त हो जाय अतएव तुम जाकर युद्ध करो ।"

राजाज्ञा के अनुसार फरामर्ज़ समर-भूमि में आया और बरज़ू को ललकार कर बोला—"बालकों के साथ युद्ध करते हो। यदि युद्ध का कौशल देखना चाहते हो तो मुझसे भिड़ो।" इन शब्दों को सुनकर वह फ़रामर्ज की ओर बढ़ा परन्तु वस्त्रादि वही देखकर परन्तु कंठ में अन्तर पाकर उसने कहा "कल वाला प्रतिद्वन्द्वी क्या मर गया या घायल है जो तू उसके रूप में आया है।" बरज़ू की यह बात सुन कर वह हँसा फिर बोला "तेरा मस्तिष्क तो नहीं बिगड़ गया है जो तू मनुष्य को पहिचान भी नहीं सकता।' रुस्तम के सब चिन्ह दिखलाते हुए बरज़ू ने कहा "मेरा नाम रुस्तम है।" इतना सुन तथा देख कर उसे विश्वास हो गया कि यह गत दिवस वाला वीर ही है।

फ़रामर्ज़ ने अपनी बात का अन्त करते ही गदा सँभाली और लगा उस पर प्रहार करने। वह इस तीव्रता से प्रहार करता था कि बरज़ू अपनी रक्षा के अतिरिक्त उसका उत्तर नहीं दे सकता था। यहाँ तक कि बरज़ू की ढाल चूर-चूर हो गई और उसका शिर घायल हो गया, वह पृथ्वी पर आ रहा। अब फ़रामर्ज़ ने उसे अपने नाग-पाश द्वारा बन्दी कर लिया तथा कै.खुसरो के सम्मुख ले जाकर प्रस्तुत कर दिया।

बरज़ू को इस प्रकार बन्दी होते देख अफ़रासियाब ने अपनी सेना को आक्रमण करने का आदेश किया। अस्तु तूरानी आक्रमण का उत्तर देने के लिये ईरानी सेना भी बढ़ी। और घमासान युद्ध होने लगा। इसी बीच फ़रामर्ज़ ने अपना नाग पाश निकाल कर उसके शरीर के स्थान पर उसका शिर जकड़ा और एक हाथ से गदा का प्रहार करता हुआ दूसरे हाथ से उसे खींचने लगा।

जब रुस्तम के द्वितीय पुत्र ज़वारा ने भाई को ऐसी स्थिति में देखा तो स्वयं उसके निकट जा पहुँचा और बोला "अब आप कमन्द मुझे दे दें और खुल कर युद्ध करें।" अतएव उसने डोरी उसके हाथ में दे दी।

और रुद्दा लड़ने लगा। इस समय इतना भीषण युद्ध हुआ कि सारा रणक्षेत्र श्मशान में परिणत हो गया। यहाँ तक कि संध्या हो गई और दोनों सेनाएँ अपने-अपने शिविर को लौट आईं।

फरामर्ज़ जब लौट कर अपनी सेना में आया तो उसने बरज़ू को ख़ुसरू के सम्मुख पेश किया। उसने इसका शिर धड़ से पृथक करने की आज्ञा दी परन्तु रुस्तम ने उसे जीवनदान देने की प्रार्थना की। अस्तु वह मारा नहीं गया बल्कि उसे रुस्तम अपने साथ ले गया। । जब यह लोग डेरे में पहुँचे तो फरामर्ज़ ने अपने पिता से बरज़ू को ज़ाबुलिस्तान ले चलने की प्रार्थना की। अतएव वह उसे लेकर ज़ाबुलिस्तान की ओर चल दिया। इतना सब होते हुये भी बरज़ू के हाथों तथा पैरों में साकलें डाल रक्खी गईं।

माँ के हाथों बरज़ू की मुक्ति

जब बरज़ू की माँ शहरू को पुत्र के बन्दी होने का समाचार मिला तो वह रोती-पीटती ईरान आई, परन्तु यहाँ उसे न पाकर ज़ाबुलिस्तान को गई। वहाँ पहुँच कर वह अपने को चीन की निवासिनी बता कर रहने लगी। अन्त में धीरे-धीरे उसने दासी को बहुत-सा धन देकर अपने चंगुल में किया। एक दिन अपने हाथों खाना पका कर तथा रोटी के बीच में अपनी अँगूठी रख कर उसने उसी के द्वारा अपने पुत्र के पास खाना भेजा।

भोजन करते समय बरज़ू ने अपनी माँ की अँगूठी जो पाई तो प्रसन्न हो गया और उस दासी से पूछा "आज का भोजन तुमको किसने दिया है।" इस पर उसने कहा "एक स्त्री चीन से आकर यहाँ बसी है, यह भोजन उसी का बनाया हुआ है।" यह सुन कर वह बोला "यह स्त्री मेरी माँ है। उससे तुम कहना कल इसी प्रकार रेती भी भेज दे जिसके द्वारा मैं साकल काट डालूँ। कल रात को तू तीन घोड़े ले आना फिर हम सब यहाँ से चल देंगे।" सारांश यह कि वह इसी युक्ति से

कारागार से निकल भागा और तीनों एक ऐसे मार्ग से गुज़रे जिधर मनुष्य बहुत कम आते-जाते थे।

वे अपने मार्ग पर चले ही जा रहे थे कि उधर से रुस्तम आ निकला। उस ने बरज़ू को जो देखा तो तुरन्त युद्ध करने लगा, परन्तु विजयी होते न देख उस ने युद्ध स्थगित कर दिया और उससे पूछने लगा "तुझे कारागार से निकाल भगाने में किसने सहायता की।" तब बरज़ू ने बतला दिया। वह दासी भी हाथ जोड़ कर सामने आ खड़ी हुई और कहने लगी "मैं अवश्य दोषी हूँ, अब आप जो दण्ड देना चाहे दें। पर इस समय मैं भूख से मर रही हूँ, अतः मुझे थोड़ा-सा खाने को मिल जाय तो बड़ी कृपा होगी।"

रुस्तम ने उसकी बात स्वीकार कर ली और भोजन प्रबन्ध के हेतु एक ओर को चला गया। इस समय उसके साथियों ने कहा "यदि बरज़ू भाग गया तो आप राजा को क्या उत्तर देंगे।" इस पर उसने उत्तर दिया "मैं क्या करूं। मैं उस पर विजय प्राप्त नहीं कर सकता।" यह सुन कर उन लोगों ने विषैला भोजन उन तीनों के हेतु भेजा, परन्तु शहरू ने न तो स्वयं ही उसे खाया और न अपने पुत्र को ही खाने दिया और उसे उस दासी की ओर बढ़ा दिया। वह भोजन करते ही यमपुरी को सिधारी।

रुस्तम का इस प्रकार विश्वासघात देख कर बरज़ू ने उसे बहुत ही ऊँच-नीच कहा परन्तु लज्जा के कारण उसके नेत्र ऊपर न उठ सके। बरज़ू ने फिर कहना आरम्भ किया "इस प्रकार विश्वासघात करके वीरों का अपघात नहीं किया जाता, यदि तुझ में पुरुषत्व है तो युद्ध कर।" बरज़ू की यह बातें रुस्तम को असह्य हो गईं, अतएव वह युद्ध के हेतु उठ खड़ा हुआ।

फिर क्या था दोनों ओर से गदा के प्रहार होने लगे। परन्तु एक दूसरे को घायल न कर सका। अब मल्ल युद्ध की बारी आई। बड़ी देर

तक दोनों अपने अपने बल का प्रयोग करते रहे परन्तु कोई भी एक दूसरे को नीचे लाने में कृतकार्य न हो सका। इसी बीच रख़्श ने बरज़ू के घोड़े को बड़े ज़ोर से काट खाया इस कारण वह भाग खड़ा हुआ। इस समय बरज़ू ने चाहा कि वह रुस्तम से अपने को छुड़ा कर अपने घोड़े को पकड़ लें, परन्तु रुस्तम ने उसे न छोड़ा और अन्त में वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसके गिरते ही रुस्तम उसकी छाती पर चढ़ बैठा और तलवार निकाल कर उसका शिर काटने पर उतारू हुआ।

पुत्र को इस विकट परिस्थिति में देख कर शाहरू ने चिल्ला कर कहा "देखो इसकी हत्या न करना, क्योंकि यह सोहराब का पुत्र तथा तुम्हारा पौत्र है।" रुस्तम को शाहरू की बात का विश्वास न हुआ। परन्तु जब उसने अपने पुत्र की अंगूठी देखी तो बरज़ू की छाती से उतर आया और उसे सीने से लगा लिया।

इसके पश्चात् वह शाहरू तथा अपने पौत्र बरज़ू को लेकर सीस्तान आया और अपने पिता ज़ाल को पूरा इतिहास सुना कर मुन्दरी को चिह्न स्वरूप दिखाया। जब उसको यह विदित हुआ कि वह उसका परपौत्र है तो झट छाती से लगा लिया और नवीन सिंहासन मँगा कर उस पर उसे बैठाया और बहुत सा धन-द्रव्य उस पर निछावर कर के दीन दुखियों को भोजन कराया। इसके पश्चात् कई दिन तक सारी प्रजा हर्ष मनाती रही।

मायाविनी सौसन की सहायता से ईरान पर आक्रमण

ईरान से पराजित होकर लौटने पर तथा बरज़ू के बन्दी हो जाने पर अफ़रासियाब दिन-रात चिन्ता में डूबा रहता। इसी समय एक नर्तकी जिसका नाम सौसन था और जो माया में भी दक्ष थी उसके निकट आई और हाथ जोड़ कर बोली "महाराज ! आप इतने चिन्तित न हों। मुझे

आज्ञा दें कि मैं जाकर अपनी माया द्वारा रुस्तम तथा फरामर्ज़ इत्यादि का शिर काट कर लाऊँ।" उसकी इन बातों पर अफ़रासियाब को विश्वास नहीं हुआ परन्तु जब उसने उसे अपनी विद्या के कुछ अपूर्व करतब दिखाये तो उसने सौसन की बात मान ली और बहुत-सा धन-दौलत देकर तथा पीलसम को उसके साथ करके उसे बिदा किया।

तूरान से चल कर वह ईरान पहुँची, और ज़ाबुलिस्तान के निकट उसने अपनी माया द्वारा एक अतिथि-शाला तथा गढ़ बनवाया। जो भी अतिथि उस मार्ग से हो कर जाता वह उसे बड़े प्रेम से ठहराती और हर प्रकार से उसकी आवभगत कर के सुन्दर-सुन्दर स्वादिष्ट भोजन कराती तथा उसके सुख की सम्पूर्ण सामग्री उसे जुटाती।

इसी बीच रुस्तम के यहाँ सीस्तान में एक बहुत बड़ा उत्सव मनाया गया जिसमें सम्मिलित होने को ईरान के समस्त योद्धा आये। परन्तु तोस तथा गोदुर्ज़ में परस्पर मनोमालिन्य था, किसी कारणवश दोनों में उक्त अवसर पर बतबढ़ाव हो गया और तोस ने गोदुर्ज़ पर प्रहार करने को कटार उठाई परन्तु उसने उसे सहज ही में छीन लिया। तोस क्रोधावेश में वहाँ से उठकर चल दिया। जब तोस के जाने का समाचार रुस्तम को मिला तो उसने गोदुर्ज़ को ही उसे लाने को कहा अस्तु वह उसे लेने के हेतु चल दिया। जब गोदुर्ज़ चला गया तो गेव ने रुस्तम से कहा "भाई तोस तथा गोदुर्ज़ दोनों क्रोधी प्रकृति के जीव हैं। कहीं ऐसा न हो कि आपस में लड़ जाय, अतएव मेरा वहाँ जाना अत्यन्त आवश्यक है," अस्तु वह भी चल पड़ा। सारांश यह है कि इसी प्रकार बारी-बारी से सब उधर ही चले गये। अन्त में ज़ाल भी चल पड़ा।

इधर तोस रुस्तम के घर से चल कर उसी अतिथिशाला में पहुँचा और डेरा लगा देख कर पूछने लगा "यह किसकी अतिथिशाला है।" इस पर एक स्त्री ने उत्तर दिया "तूरान के एक व्यापारी की स्त्री यहाँ आई हुई है, उसी ने यह अतिथिशाला बनवाई है।" इतना जान कर जब

अन्दर गया तो इसने देखा कि एक अप्सरा वहाँ बैठी है और उसके सम्मुख मदिरा सहित अन्य भोज्य पदार्थ रक्खे हुए हैं। उसे देखते ही तोस ने उसका परिचय पूछा। उसने उत्तर दिया "मैं तूरान की एक नर्तकी हूँ। वहाँ पर एक मनुष्य मेरा प्रेमी था और उसने मुझे बहुत सा धन द्रव्य भी दिया। उसकी मृत्यु के पश्चात् तूरान के शासक ने मुझे अपनी सेवा में रखना चाहा और इस बहाने से मेरी सम्पदा लेकर मेरी दुर्दशा करनी चाही परन्तु मैं वहाँ से भाग कर चली आई हूँ। अब मेरी यह अभिलाषा है कि कैख़ुसरू की सेवा करूँ।"

उसकी यह मायापूर्ण बातें सुनकर तथा उसकी सुन्दरता देख कर तोस ने अपने मन में विचार किया कि यदि मैं इसे लेकर कैख़ुसरू की भेट करूँ तो वह अवश्य मुझसे प्रसन्न होगा। अस्तु वह उसके निकट जाकर बैठ गया और मदिरा पीने लगा। जब वह अचेत हो गया तो पील-सम ने उसे ले जाकर गढ़ में बन्दी कर दिया। इसी प्रकार गोदुर्ज तथा अन्य सभी योद्धा जो तोस के हेतु आये थे बन्दी हो गये।

अन्त में ज़ाल भी आया और उस मायाविनी ने उसे भी फँसाना चाहा परन्तु ज़ाल अनुभवी पुरुष था उसने उसके स्वागत को अस्वीकार किया। उसने सोचा "हो न हो यह सब इसी स्त्री की माया है।" इतने ही में किसी ने उसके कान में आकर कहा "देखो सावधान रहना। यह सब माया का खेल है और तुम्हारे सब वीर अपने घोड़ों सहित इसी गढ़ में बन्द हैं।"

इस दैवी वाणी द्वारा सावधान होने से उसका अनुमान दृढ़ हो गया, अस्तु उसने अपने एक दास को गढ़ के भीतर जाकर पता लगाने को कहा। थोड़ी देर पश्चात् उस दास ने आकर कहा—"वहाँ तोस इत्यादि के घोड़े तो बँधे हैं।" इधर जो सौसन को यह सब विदित हुआ तो वह भाग कर गढ़ के अन्दर चली गई। परन्तु ज़ाल अपनी गदा लेकर गढ़ की ओर चला और गदा द्वारा द्वार को चूर-चूर कर दिया। इस समय

पीलसम भी अपनी गदा लेकर आया और युद्ध होने लगा। गढ़ पर आक्रमण करने के पूर्व ही उसने अपने एक सैनिक द्वारा यह सूचना रुस्तम को भेज दी थी अतएव फरामर्ज़ वहाँ जा धमका और उसे युद्ध से पृथक् कर स्वयं जूझने लगा। अन्त में संध्या हो गई और दोनों वीर अपने-अपने डेरे को चले गये।

दूसरे दिन सबेरे फिर फरामर्ज़ ने युद्ध आरम्भ किया कि इतने ही में रुस्तम भी आ गया। उसके साथ बैज़न भी आया। यहाँ पहुँच कर रुस्तम ने ललकारा "ओ पीलसम आ और मुझसे युद्ध कर।" फिर क्या था दोनों ओर से बाणवर्षा आरम्भ हो गई। तत्पश्चात् गदा की चोटें होने लगीं। परन्तु कोई भी अपने घोड़े से नीचे न आया। अन्त में संध्या हो गई और सब अपने-अपने स्थान को चले गये।

तीसरे दिन सवेरे बरज़ू युद्ध करने के हेतु गया। अभी थोड़ी ही देर हुई थी कि इन लोगों को कुछ दूरी पर धूल उड़ती हुई दिखाई दी। रुस्तम तुरन्त ही ताड़ गया कि हो न हो अफ़रासियाब अपनी सेना लेकर आ रहा है। अतएव वह बरज़ू से बोला कि अब तू यहाँ से जाकर अफ़रासियाब से युद्ध कर और मैं इसे मार कर आता हूँ। फलतः रुस्तम के अतिरिक्त सब उसी ओर बढ़े और अफरासियाब तथा उसकी सेना से भिड़ गये। थोड़ी देर पश्चात् रुस्तम भी पीलसम को धराशायी करके इन लोगों से जा मिला।

जिस समय रुस्तम वहाँ पहुँचा उस समय का युद्ध वास्तव में देखने योग्य था क्योंकि रुस्तम, जाल, बरज़ू इत्यादि जिस ओर बढ़ जाते उसी ओर शवों के ढेर के ढेर लग जाते थे और हाहाकार मच जाता था। इसी बीच कैखुसरू भी अपनी सेना लेकर आ पहुँचा। उसको देख कर प्रत्येक वीर प्रसन्न हो गया और उसने भी अपनी सेना द्वारा तूरानियों को चारों ओर से घेर कर मारना आरम्भ किया।

अपनी सेना का इस प्रकार संहार होते देख पीरान अफ़रासियाब से बोला "देखिये आपने मेरा कहा कभी न माना। इस मायाविनी

नर्तकी के कहने में आकर आपने अपने को तथा अपनी सेना को संकट में डाला। भला इससे क्या लाभ। इस पर वह क्षुब्ध होकर स्वयं मैदान में आया और बोला "इन सैनिकों को मारने से कोई लाभ नहीं। कैखुसरू को उचित है कि वह स्वयं रण-क्षेत्र में आये और फिर हम दोनों में से जो विजयी हो वही राजा हो।" अफरासियाब की यह बात सुनकर कैखुसरू हाथी से उतर कर घोड़े पर बैठा और युद्ध-क्षेत्र की ओर बढ़ा कि इतने ही में उसके योद्धाओं ने आकर उसके घोड़े की बाग पकड़ ली और बोले "आप युद्ध में न जायँ।" वह यह कह ही रहे थे कि इतने में रुस्तम ने कहा "मैंने उससे युद्ध किया है और भली भाँति जानता हूँ कि वह कितना बली तथा अनुभवी है अतएव आपका जाना ठीक नहीं।"

रुस्तम की इस बात पर कैखुसरू क्रुद्ध होकर बोला "मैं भी वीर सियावश का पुत्र हूँ और युद्ध तथा बल में उससे कम नहीं हूँ।" वह यह कह ही रहा था कि बरजू ने आकर अपना शिर उसके चरणों पर रख दिया तथा कटार निकाल कर बोला "लीजिये, प्रथम मुझे मार लीजिये फिर कहीं आप रण-क्षेत्र में जाने का विचार कीजिये नहीं तो मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं स्वयं जाकर उससे युद्ध करूँ। हाँ, यदि मैं मारा जाऊँ तो फिर आपको अधिकार है कि आप जो चाहें करें।" बरजू के इस नम्रता तथा वीरता-पूर्ण वाक्यों ने राजा का क्रोध शान्त कर दिया और उसने विवश होकर उसे जाने की आज्ञा दे दी।

कैखुसरू की आज्ञा पाते ही बरजू मैदान में आया। जब अफरासियाब ने देखा कि वह युद्ध करेगा तो कहने लगा "तुझे मेरे साथ युद्ध करते लज्जा नहीं आती। मैंने ही तो तुझे रण-कौशल सिखलाया और तू मुझ ही से युद्ध करने चला। क्या तू इस प्रकार विश्वासघात करने पर उतारू है। तेरे लिये अच्छा यही है कि तू यहाँ से लौट जा और जाकर कैखुसरू को मेरे सम्मुख भेज।" इस पर बरजू ने उत्तर दिया "बतला तो सही कि तू विश्वासघाती है अथवा मैं। सियावश जो कि तेरी

शरण में गया था उसका तूने बध किया था। मैंने जब तक तेरा अन्न खाया तब तक तेरा साथ दिया परन्तु अब जब इस दयावन्त राजा का अन्न खाता हूँ तो उसका साथ दूँगा।"

जब अफ़रासियाब ने देखा कि यह टालेगा नहीं तो उसने एक बाण से उसकी भुजा बेंध दी। इसके उत्तर में बरजू ने अपनी गदा का प्रहार किया परन्तु अफ़रासियाब एक अनुभवी सैनिक था, वह इस प्रहार को बचा गया और बाण वर्षा करने लगा इस पर बरजू ने भी वही किया बाणों का अन्त होते ही अफ़रासियाब ने गदा संभाली। उसे गदा उठाते देख हूँमा ने कहा कि यह आप क्या कर रहे हैं। आप बरजू से गदा युद्ध में कदापि विजय नहीं पा सकते। उसकी इस बात को सुन कर उसने अपनी सेना को आक्रमण करने के लिये कहा। फलतः तुरानियों ने बरजू को घेर लिया और अपने-अपने शस्त्रों से प्रहार करने लगे।

बरजू को इस परिस्थिति में देखकर रुस्तम भी अपनी सेना लेकर भिड़ गया और लगी मार-काट होने। इतने में कैखुसरू अपनी सेना लेकर चढ़ दौड़ा और स्वयं बरजू के निकट सहायता के लिये आ पहुँचा। उसे आते देर न हुई थी कि अफ़रासियाब निकल भागा और उसकी सेना तथा सौसन मायाविनी तूरान को भाग गये। कैखुसरू ने चाहा कि अफ़रासियाब का पीछा करे परन्तु रुस्तम ने कहा "अब उसे छोड़िये और मेरी झोपड़ी को जो यहाँ से थोड़ी ही दूरी पर है, चल कर अपने चरणों से पवित्र कीजिये।"

कैखुसरू ने रुस्तम की बात मान ली और रुस्तम के साथ सीस्तान गया। वहाँ एक सप्ताह तक रह कर अपने देश को लौट आया। चलते समय रुस्तम ने बहुत सी बहुमूल्य वस्तुएँ भेंट की और बोला "यदि आपकी आज्ञा हो तो अब मैं शेष जीवन अपनी जन्म-भूमि में रह कर काटूँ। और अपने स्थान पर फ़रामर्ज़ तथा बरजू को आपकी सेवा के लिये

नियुक्त कर दूँ।" उसकी इस प्रार्थना को कैख़ुसरू ने स्वीकार कर लिया परन्तु इतना वचन ले लिया कि आवश्यकता के समय उसका आना परमावश्यक होगा।

गोदुर्ज़ का तूरान पर आक्रमण

सीस्तान से लौट कर ख़ुसरू बहुत दिनों तक सुख-पूर्वक रहा। एक दिन उसने गोदुर्ज़ से कहा "रुस्तम कितनी बार तूरान पर आक्रमण कर के विजयी हुआ। इस बार तू जा और अफ़रासियाब ने जो कुछ सेना फिर एकत्रित की हो उसे पराजित कर जिससे वह इतना बली न हो जाय कि फिर आक्रमण कर बैठे।" तत्पश्चात् उसने फ़रामर्ज़ से कहा "तुम भारतवर्ष होते हुए चीन को जाओ" कैख़ुसरू की यह आज्ञा सुन कर फ़रामर्ज़, बैज़न, तोस तथा गेव इत्यादि को लेकर तूरान पर चढ़ दौड़ा।

जब अफ़रासियाब को उसके आक्रमण की सूचना मिली तो उसने हूमा को सेना देकर भेजा। दोनों दल निकट पहुँच पर भिड़ गये। परन्तु अन्त में गोदुर्ज़ ने हूमा को मार गिराया। हूमा के धराशायी होने तथा अपने पराजित होने का समाचार अफ़रासियाब को मिला तो उसने दूसरी सेना पीरान के सेनापतित्व में भेजी।

पीरान के आगमन का समाचार पाकर गोदुर्ज़ ने अपनी विजय तथा पीरान के युद्ध के हेतु आगमन का समस्त समाचार कैख़ुसरू को लिख भेजा, साथ ही यह भी लिखा कि इस समय रुस्तम का आना परमावश्यक है। ख़ुसरू ने पत्र पढ़ कर एक नवीन सेना उसकी सहायता के लिये भेज कर रुस्तम को इस युद्ध में भाग लेने के लिये लिख भेजा।

सारांश यह कि दोनों सेनाओं में फिर युद्ध आरम्भ हो गया। जिस ओर सेना की कमी होती थी उसी ओर एक नवीन सेना आ जाती थी। दो वर्ष पर्यन्त इसी प्रकार युद्ध होता रहा परन्तु अन्त में पीरान वीर-गति को प्राप्त हुआ और गोदुर्ज़ ने इस बार भी विजय लाभ किया।

अफ़रासियाब का अन्त

जब अफ़रासियाब को पीरान के मारे जाने का समाचार मिला तो वह रोने लगा और उसने भरी सभा में इस बात की शपथ खाई कि इस बार या तो मैं ही न रहूँगा या फिर सर्वदा के लिये ईरान ही मेरे हाथ लगेगा। अतएव उसने बहुत सी सेना एकत्रित कर तथा अपने पुत्र शैदा को उसका सेनापति नियुक्त कर ईरान पर आक्रमण करने को रवाना की, और एक पत्र इस आशय का लिखा "ऐ कैख़ुसरू! तू ने पीरान को मार कर अच्छा नहीं किया क्योंकि यह वही जीव है जिसने तुझे पाल-पोस कर इतना बड़ा किया। तुझे उसके बध पर लज्जित होना चाहिये। अब मेरी इच्छा यह है कि यदि तुम सन्धि कर लो तो मैं अब युद्ध स्थगित कर दूँ और तूरान राज्य का जो भाग तुम चाहो उसे दे दूँ, और जितना धन-द्रव्य तुम चाहो मैं भेंट कर सकता हूँ। इसके अतिरिक्त हमारा एक पुत्र सदैव तुम्हारी सेवा में उपस्थित रहा करेगा। और यदि यह तुमसे नहीं हो सकता, तो तुम अकेले आकर मुझसे युद्ध करो। यदि तुम जीत जाओ तो हमारे सारे राज्य के राजा हो जाओ, और यदि मैं विजयी होऊँ तो तुम्हारे पुत्र को राजगद्दी देकर अपने राज्य को लौट आऊँ, और यदि यह भी नहीं कर सकते तो मेरा पुत्र जो पत्र वाहक के रूप में जाता है उससे युद्ध करो। यदि वह धराशायी हो जायगा तो मैं एकान्त-वास ग्रहण कर लूँगा और समस्त तूरान तुम्हारे अधीन हो जायगा।" पिता का पत्र तथा सेना लेकर शैदा चल पड़ा।

इधर जब विजय का शुभ समाचार कैख़ुसरू को मिला तो वह सेना लेकर जीहूँ नदी पार कर अन्य नगरों को जीतता हुआ अपनी सेना से जा मिला। यहाँ आकर उसे अफ़रासियाब का पत्र-विषयक गुप्त-संदेश मिला। इस पर उसने अपने सभासदों से कहा "इस बार मैं उस विश्वास-घाती का सर्वनाश करके ही जाऊँगा।"

इसी बीच शैदा पत्र लेकर आया तो राजा ने उसे बड़े सम्मान से बिठाया। पत्र पढ़ने के पश्चात् उसने शैदा को दूसरे दिन उत्तर देने को

कह कर विश्राम करने के लिये बिदा किया, और सभासदों को बुलाकर पत्र पढ़ा, तत्पश्चात् बोला—"उसका यह पत्र छल तथा कपट से रहित नहीं है। जिस समय वह आया था उसके नेत्र रक्त के समान लाल थे और वह मुझे मारने का उपाय कर रहा था। मैंने उसे अतिथिशाला में भेज दिया है। अब मेरी अनुमति तो यह है कि मैं साफ़-साफ़ लिख दूँ कि मैं सन्धि नहीं करना चाहता, और तेरा जो राज तथा कोष है, यदि ईश्वर ने चाहा तो यह सब एक दिन मेरा होगा।" उसकी इस अनुमति को सभी ने स्वीकार किया। फलतः कारन द्वारा पत्र का उत्तर भेज दिया गया। पत्र पढ़ कर शैदा आपे से बाहर हो गया और उसने युद्ध का दृढ़ संकल्प कर लिया।

दूसरे दिन भोर होते ही वह घोड़े पर चढ़ कर रण-क्षेत्र में आया और उसने कैखुसरू को ललकारा। इधर कैखुसरू घोड़े पर सवार होकर उससे युद्ध के लिये आ उपस्थित हुआ। कैखुसरू को देख कर शैदा ने कहा "मेरी इच्छा है कि हम दोनों मल्ल युद्ध करें।" उसकी यह इच्छा जान कर वह भी घोड़े से उतरा और दोनों वीर गुथ गये। शैदा ने अपना पूरा बल लगा दिया परन्तु वह कैखुसरू को न पटक सका। इधर कैखुसरू ने जो बल किया तो उसे उठा कर पृथ्वी पर दे मारा और अपनी कटार से उसका बध कर दिया। शैदा की मृत्यु के पश्चात् उसने अपने अधीन लोगों से उसके शव पर गुलाब-जल इत्यादि छिड़कने तथा उसकी समाधि बनाने की आज्ञा दी।

इसके अनन्तर उसने कारन द्वारा अफरासियाब को भी इसकी सूचना भेज दी। अफ़रासियाब ने जो पुत्र के बध का समाचार सुना तो वह फूट-फूट कर रोने लगा और उसे विश्वास हो गया कि अब मेरा भाग्यचक्र घूम गया है। अस्तु उसने कारन को बिना उत्तर दिये ही बिदा कर दिया और स्वयं एक बहुत बड़ी सेना लेकर आया।

उसके रण-क्षेत्र में आते ही प्रलय का नग्न चित्र अंकित हो गया। इस युद्ध में तूरानियों ने जीवन का मोह छोड़ दिया। अस्तु बात की

बात में शवों के ढेर लग गये। और रक्त की नदी बह चली। अन्त में तूरानियों की क्षति तथा उनको हतोत्साह होते देख कर अफ़रासियाब ने उन्हें उत्साहित किया और स्वयं भी घोड़े को बढ़ा वीरगति प्राप्त करने के हेतु आगे आया। परन्तु अपनी शेष सेना को भागते देख वह भी भाग निकला और आमू के मरुस्थल में जा छिपा।

तूरानियों का इस प्रकार सर्वनाश करके कैख़ुसरो ने विजय प्राप्त की और तुरन्त ही कैकाऊस को इस शुभ संवाद की सूचना लिख भेजी।

रणक्षेत्र से प्राण बचा कर अफ़रासियाब चीन की ओर आमू मरुस्थल में चला गया, परन्तु कैख़ुसरो ने उसका पीछा न छोड़ा। जब चीन के शासक ख़ाक़ान को यह समाचार मिला तो उसने बहुत-सा धन, द्रव्य, हाथी, घोड़े तथा बहुमूल्य वस्तुएं कैख़ुसरो को भेंट की और कहला भेजा कि वह युद्ध न करे, परन्तु कैख़ुसरो ने इन्हें अस्वीकार करके कहला भेजा कि यदि तुम अपना तथा अपने राज्य का हित चाहते हो तो तुरन्त उस नीच को अपने देश से निकाल दो अन्यथा तूरानियों की भाँति तुम्हारी भी दुर्गति अवश्यंभावी है।

कैख़ुसरो के इस उत्तर से ख़ाक़ान भयभीत हो गया, और उसने तुरन्त ही अफ़रासियाब को निकाल बाहर किया। वह वहाँ से भाग कर मकरान् की ओर गया, परन्तु कैख़ुसरो के पहुँचते ही वहाँ से भी बाहर किया गया। इसी प्रकार वह अनेक स्थानों में आश्रय खोजता हुआ गया, पर निष्फल रहा अंततः कैख़ुसरू के भय से वह बरूथ नगर के निकट एक खड्ड में घुस गया जिसमें अंधकार के कारण कुछ भी न दीख पड़ता था। इस खड्ड में इस विपदा के समय वह अकेला ही था। उसके शरीर पर न तो सुन्दर वस्त्र ही थे और न खाने के हेतु कुछ भी भोजन। वह रात भर रो-रो कर ईश्वर से प्रार्थना करता रहा "हे भगवान तू ने आज मेरी यह अवस्था क्यों कर रक्खी है। आज कोई यह भी नहीं पूँछता कि तू कुछ खाएगा भी या नहीं।" इसी खड्ड के निकट फरीदूँ वंश का एक राजकुमार जिसका नाम हूमा था पहाड़ पर रहता था। रात को

जब उसने सुना कि कि कोई मनुष्य रो-रो कर अपनी पूर्व स्थिति को याद कर रहा है तो वह पर्वत से उतर कर उसी स्वर के सहारे चला। निकट जाकर उसने सुना कि वह मनुष्य तुर्की भाषा में अपने राज्य तथा वैभव का वर्णन करके इस दुःख-पूर्ण समय को बिता रहा है। उसने तुरन्त जान लिया कि यह अफ़रासियाब के अतिरिक्त और कोई नहीं है। अतएव वह उससे मिलने के हेतु सारी रात वहीं पर रहा।

भोर होते ही वह खड्ड के निकट गया, और अफ़रासियाब को सम्बोधन करके बोला "ऐ अफ़रासियाब! अब तू खड्ड के बाहर आ, ईश्वर ने तेरी प्रार्थना स्वीकार करके मुझे भेजा है, कि मैं अपनी इच्छा-नुसार तेरी सेवा करूँ।" इस बात को सुनते ही वह बाहर आया। हूमा ने उसे भली-भाँति पहचान कर एक घूँसा कस कर मारा। फिर क्या था, दोनों में मल्ल युद्ध होने लगा। अफ़रासियाब ने अपने पूर्ण बल का प्रयोग किया परन्तु जब मनुष्य के ग्रह बुरे होते है तो फिर उसका वश नहीं चलता। वही इस समय अफ़रासियाब को प्रत्यक्ष दिखाई दिया, वह हूमा को गिरा न सका। परन्तु उसी स्थान पर हूमा ने उसे उठा कर पटक दिया और तुरन्त बन्दी कर लिया।

जब उसने उसे बन्दी किया तो अफ़रासियाब ने कहा "मैंने तेरा तो कुछ नहीं बिगाड़ा फिर तू मुझे क्यों बन्दी कर रहा है।" इस पर हूमा ने कहा "नौज़र, सियावश तथा अन्य राजा मेरे पूर्वज थे, उन सब को तूने मारा है और यदि मैं नगर से भाग कर इस पर्वत में शरण न लेता तो तू मेरा भी अन्त कर देता। यहाँ पहुँच कर मैं दिन-रात ईश्वर से तेरे सर्वनाश की प्रार्थना किया करता था। अन्त में मुझ दीन की प्रार्थना स्वीकृत हो गई और आज तू मेरा बन्दी हुआ। अब यह बता कि किसने तेरी यह दुर्दशा की।" उसने सारी कथा आद्योपान्त कह सुनाई। उसके द्वारा जब हूमा ने कैखुसरू का नाम सुना तो उसे लेकर वह ईरान की ओर चला। इस पर अफ़रासियाब ने कहा "तू मुझे यहीं मार डाल

परन्तु उसके निकट न ले जा। परन्तु उसने एक न मानी। और उसे सोचता हुआ कैख़ुसरू के निकट पहुँचा।"

जब ख़ुसरू ने हूमा को देखा तो बड़े सम्मान के साथ उसे उच्च आसन दिया। तत्पश्चात् अपनी तलवार से अफ़रासियाब का शिर धड़ से पृथक कर के करशेवज़ को भी जो कि पहिले ही बन्दी हो चुका था मँगाया और उसे भी यमपुरी का मार्ग दिखा कर निश्चिन्त हो कर ईश्वर की वन्दना करके बोला "हे दयामय! आज तुम्हारी ही कृपा से मैं इन नीच पापियों से प्रतिशोध ले सका हूँ।"

इसके उपरान्त शत्रुओं को निर्मूल कर कैख़ुसरू ने तूरान का शासन रुस्तम को सौंप दिया और स्वयं ईरान को लौट आया। यहाँ जब कैकाऊस को इस विजय का शुभ संदेश मिला तो उसने कैख़ुसरू को छाती से लगा लिया और बहुत-सा धन-द्रव्य उस पर निछावर कर के एक बहुत बड़ा उत्सव मनाया और सुख पूर्वक रहने लगा।

शाहनामा

चतुर्थ भाग

कैकाऊस का स्वर्गवास तथा कैख़ुसरो का राज-तिलक

अमरत्व लाभ की कामना से प्रेरित हो मानव कितनी गहरी नींव जमाता है, पर क्या कभी उसकी यह बलवती इच्छा सफल हो सकी— किसी भी अंश में नहीं। बड़े से बड़े बल एवं ऐश्वर्यशालियों को भी एक न एक दिन आँख नीची कर यह स्वीकार करना पड़ा है कि यह सांसारिक बल वैभव कुछ नहीं, अमरता लाभ के लिए तो यह नितांत अनुपयुक्त साधन है। इनसे परे कुछ और है और उसी की प्राप्ति श्रेयस्कर है। अपूर्व बल-पराक्रम एवं ऐश्वर्यशाली कैकाऊस की भी आँखें एक दिन खुल ही गईं। अपने राज पाट से विरक्त हो एक दिन वह ईश्वराधना की ओर प्रवृत्त हुआ तथा एकांतवास के हेतु चल पड़ा। अब तो रात दिन वही परम प्रभु के ध्यान में निमग्न रहने लगा।

इधर राजा की यह अवस्था देख कर राज्याधिकारियों ने ज़ाल तथा रुस्तम को इससे सूचित किया। समाचार पाते ही वे दोनों आये और उन्होंने हर प्रकार से राजा को समझाया पर उसने एक न सुनी और "कहा ईश्वरीय प्रेरणा के सम्मुख शिर झुकाना ही श्रेयस्कर है। अब हम इस चलायमान संसार को ग्रहण नहीं कर सकते।" उसकी इस दृढ़ता तथा विश्वास को देख कर ज़ाल ने भी उसके साथ रहने की अनुमति चाही। कैकाऊस की स्वीकृति पाकर उसने भी गृह-त्याग कर दिया और वे दोनों वन में जा कर एकान्तवास करने लगे। ऐसी ही अवस्था में एक दिन कैकाऊस ने शरीर त्याग किया।

उसकी मृत्यु के पश्चात् चालीस दिन तक कैख़ुसरो ने उसका शोक मनाया, फिर स्वयं राज मुकुट धारण करके बहुत काल तक न्याय तथा प्रेम के साथ राज्य करता रहा। उसके न्याय तथा प्रजा-पालन की रीति से समस्त प्रजा प्रसन्न रही।

कैख़ुसरो द्वारा राज्य त्याग

एक दिन कैख़ुसरो को स्वप्न हुआ कि अब तेरा समय निकट है, अतएव इस संसार के वैभव को त्याग कर थोड़े दिन ईश्वर का भजन करके अपने जीवन को सार्थक कर। क्योंकि जो इस नाशवान संसार में आया है वह अवश्य मरेगा, इसी कारण तो इसका नाम मृत्यु-लोक रक्खा गया है।

सवेरा होते ही कैख़ुसरू ने ईरान दरबार के समस्त सभासदों तथा अन्य प्रधान पुरुषों को बुला कर उनकी उपस्थिति में लहरास्प को गद्दी सौंप दी। गोदुर्ज़ को उसका मंत्री नियुक्त किया तथा गेव को सेनापति बनाया। प्रत्येक सामन्त को थोड़ा-थोड़ा राज्य भाग देकर वह दान में प्रवृत्त हुआ। उसने ईरान के भिखारियों तथा दीन-दुखियों को इतना धन दिया कि कोई याचक न रहा। इसके उपरान्त उसने समस्त उपस्थित सज्जनों को सम्बोधन करके कहा "मैंने लहरास्प को इसलिए अपना उत्तराधिकारी बनाया है कि प्रथम तो राजकुमार के होते हुये जामाता को राज्य का शासक बनाना असंगत है। दूसरी बात यह कि लहरास्प होशंग की सन्तान है। तृतीय यह कि वह न्यायी तथा वीर भी है। मेरी इच्छा है कि फरेदुर्ज़ तथा इस राज्य के अन्य सभी सामन्त एवं प्रजा जन उसको राजा मान कर सर्वदा उसकी आज्ञा का पालन करते रहें और प्रत्येक अवसर पर उसकी सहायता करके राज-काज में हाथ बटावें।"

त्यागमूर्ति कैख़ुसरो की उपर्युक्त बातें सुन कर सबने सजल नेत्र एवं नतमस्तक हो उसकी पूर्ति के हेतु अपनी स्वीकृति दी। इतना कर चुकने पर कैख़ुसरो ने कहा "अब मैं उस सोते की ओर जाऊँगा और वहीं अपने जीवन का अन्त करूँगा।"

इतना कह कर तथा ज़ाल व रुस्तम को विदा कर वह चल पड़ा। उसके विदा होते समय समस्त प्रजा तथा सामन्त रोने लगे और बैज़न,

गेव, तोस, फरेबुज़ तथा गस्तहूम आदि भी उसके साथ चले। सोते पर पहुँच कर कैखुसरो ने स्नान किया और फिर सब से बिदा लेकर सोते में उतरा और अदृश्य हो गया।

उसके अदृश्य होने के पश्चात् सब रोते-रोते वहाँ से चल दिये। यहाँ फ़रेबुज़ ने कहा "आओ कुछ खा पी तो लें।" और सब तो ठहर गये परन्तु गोदुज़ वहाँ से चला गया। इसके थोड़ी देर उपरान्त आकाश में काले बादल मँडराते दिखाई पड़े और हिम-वर्षा होने लगी। इतनी बरफ़ गिरी कि समस्त पर्वत तथा पृथ्वी धवल हो गये। इस प्रकार गोदुज़ के अतिरिक्त समस्त योद्धा हिमाच्छादित हो अपने राजा कैखुसरो के पास चल बसे। इधर गोदुज़ ने बहुत देर तक प्रतीक्षा करने के पश्चात् अपने अनुचर को उनके न आने का कारण जानने के हेतु भेजा, उसने लौट कर वस्तु-स्थिति की सूचना दी। उक्त समाचार को सुन कर दुखी होता हुआ वह ईरान लौट गया।

लहरास्प का सिंहासनारूढ़ होना

कैखुसरू के पश्चात् लहरास्प ने राजमुकुट धारण किया और उसके आदेशानुसार उसने न्याय तथा प्रजानुरंजन की नीति का अनुसरण करते हुए शासन किया। उसकी ऐसी राजनीति को देख कर ईरान निवासी उसकी प्रशंसा करते थे।

राजा कैखुसरू के चार पुत्र थे, जो वीरता, धीरता तथा बुद्धि में अपूर्व थे। राजकुमार ज़ेरास्प तथा ऊदशेर दोनों कैकाऊस की पुत्री से थे। इनके अतिरिक्त दो और भी पुत्र दूसरी स्त्री से थे। इनमें से गश्तास्प बड़ा वीर तथा बुद्धिमान था, पर अभिमानी होने के कारण राजा के चित्त से उतर गया था। इसी कारण उसने उसे गिरा रक्खा था।

एक दिन वह राजा से खिन्न होकर भारतवर्ष की ओर चल दिया। राजा को जब इसकी सूचना मिली तो उसने ज़रीर को सेना देकर उसे पकड़ लाने के हेतु भेजा। ज़रीर ने उसका पीछा किया और जहाँ-जहाँ वह

गया ज़रीर भी उसके पीछे बढ़ता गया; अतः उसने गश्तास्प को आ घेरा। जब गश्तास्प ने देखा कि अब बचना असम्भव है तो उसने ज़रीर से कहा—"पिता की दृष्टि में मेरा कोई मूल्य नहीं, वह मुझे सदैव गिरी हुई दृष्टि से देखा करते हैं। यदि वह अपने पश्चात् मुझे राज्य का उत्तराधिकारी बनाएँ तब तो मैं उनके पास आ सकता हूँ अन्यथा अब लौट भी गया तो भी फिर कहीं को निकल जाऊँगा और फिर आजीवन उनको मुँह न दिखाऊँगा। ज़रीर ने उसे ढाढ़स बँधाया और ले जाकर राजा के सम्मुख उपस्थित किया।

यहाँ आकर जब उसने पिता का वही ढंग देखा तो एक दिन चुपके से अकेला ही घर से निकल भागा। जब राजा को विदित हुआ तो उसने ज़रीर को फिर भेजा, परन्तु इस बार उसे गश्तास्प का कोई चिन्ह न मिला और वह यों ही वापिस लौट आया। इधर गश्तास्प गृह-त्याग कर रूम पहुँचा और एक साधारण व्यक्ति की भाँति रहने लगा।

धीरे-धीरे जब उसका सब धन व्यय हो गया उसने रूम के राजा के निकट जाकर नौकरी की इच्छा प्रकट की, पर वहाँ से उसे निराश लौटना पड़ा। पश्चात् वह एक दूसरे व्यक्ति के पास गया और सेवा की इच्छा प्रगट की। प्रथम तो उस व्यक्ति ने उसे भोजन कराया तत्पश्चात् अपनी विवशता दिखा कर विदा किया। वहाँ से विदा होकर वह लुहार की दूकान पर आया और बोला—"आप जो चाहें वही काम करने को मैं तैय्यार हूँ।" लोहार ने यह सुनते ही उसे हथौड़ा थमा दिया और चोट मारने को कहा। गश्तास्प ने एक चोट बलपूर्वक जो मारी तो वह लौहखण्ड छिन्न-भिन्न हो गया। अपनी हानि देख कर लुहार गश्तास्प पर अत्यन्त क्रोधित हुआ और भला-बुरा कह कर उसने उसे अपनी दूकान से निकाल बाहर किया।

वहाँ से इस प्रकार अपमानित करके निकाले जाने पर गश्तास्प अपने भाग्य पर खीझता तथा विलाप करता एक गाँव में आया। यहाँ उसे एक ग्रामीण मिला जो धीरज देकर उसे अपने घर ले गया और भोजन कराया

तत्पश्चात् गश्तास्प ने उसका परिचय पूछा। उसने कहा—"मैं फरीदूँ वंश में हूँ और बहुत दिनों से यहाँ रह कर खेती बारी करता हूँ। अब मुझे संसार की उथल-पुथल से कोई सरोकार नहीं।" उस ग्रामीण की उक्त बातें सुनकर गश्तास्प ने कहा—"फिर हम और तुम दोनों एक ही हैं क्योंकि मैं भी होशंग का वंशज हूँ, परन्तु दुर्भाग्यवश इस दुर्दशा को प्राप्त हुआ हूँ।" इस प्रकार परिचित होकर वह वहाँ बहुत दिनों तक रहा।

उन दिनों रूम देश में यह प्रथा थी कि जब कोई कन्या युवती होती थी तो एक दिन निश्चित करके राज्य के समस्त पुरुषों को बुलाया जाता था और इस बीच यह युवती जिस पुरुष को चाहती थी अपना गुलदस्ता उसके हाथ में देकर उसे अपना पति बना लेती थी। जब रूम के राजा की कन्या युवती हुई तो स्वयंवर की इसी प्रथा के अनुसार उसने भी एक दिन निश्चित करके सब को निमंत्रित किया। इस अवसर पर इतने दिनों के अनन्तर गश्तास्प के ग्रह फिरे।

उसी रात को राजकुमारी किताबून ने स्वप्न देखा कि कोई कह रहा है "तेरे राज्य में एक ऐसा मनुष्य आया है जो कि ईरान का शासक होने वाला है परन्तु दुर्भाग्य के कारण उसे कोई पूछता नहीं, वही तेरा पति होगा। अतएव तू उसी को अपना वर चुन।" इसके पश्चात् उसने गश्तास्प को स्वप्न ही में देखा।

दूसरे दिन सभा में जहाँ बड़े-बड़े राजकुमार तथा योद्धा एकत्रित हुये थे, राजकुमारी ने पदार्पण किया, परन्तु उस व्यक्ति को न देख कर वह लौट गई। दूसरी रात को भी उसने उसी पुरुष को स्वप्न में फिर देखा और अपना गुलदस्ता उसके हाथ में दे दिया।

इधर जब राजा को इस स्वप्न की सूचना मिली तो उसने नगर में सर्व-साधारण तथा परदेशियों को निमन्त्रित करने के आशय से दूसरी बार ढिंढोरा पिटवाया। उस दिन सौभाग्य तथा ईश्वरीय प्रेरणा से प्रेरित होकर गश्तास्प भी अपने संगी के साथ नगर में आया। जब

उसने ढिंढोरा सुना तो उसके साथी ने कहा "चलो हम लोग भी सभा में चलें। सम्भव है कि हम लोगों ही का भाग्य-चक्र घूम जाय, वह सुन्दरी हममें से भी किसी को वरण करे और यों फिर एक बार इस संसार का सुख भोग कर सकें।" साथी की ये बातें सुन कर गश्तास्प ने भी अपनी स्वीकृति दी, अतएव वे दोनों स्वयंवर सभा में गये।

इन लोगों के जाते ही स्वयंवरा भी सभा में आई और गश्तास्प को देख कर उसने अपनी धाय से कहा "यह वही पुरुष है जिसे मैंने स्वप्न में देखा था। इतना कह कर वह आगे बढ़ी और अपना गुलदस्ता उसके हाथ में दे कर स्वयं राजभवन में लौट गई।"

इधर राजा ने जो इस व्यक्ति को देखा तो सोचने लगा "ईश्वर जाने यह कौन है और मेरी पुत्री ने इसे अपना पतिवरण किया। इस चिन्ता तथा क्रोध के आवेग में वह चाहता था कि अपनी पुत्री को यमपुरी भेज दे, परन्तु अपने मन्त्री तथा अन्य सभासदों के कहने से वह रुक गया और उनको उसका परिचय जानने के उद्देश्य से भेजा। उससे यह जान कर कि वह ईरान के वर्तमान शासक लहरास्प का पुत्र है परन्तु पिता के कोप के कारण उसकी यह दशा हो गई है। वह सब राजा के निकट आये और उसका पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया। तदुपरान्त उसे राजकुमारी के स्वप्न-वृत्तान्त से भी अवगत किया अस्तु। विवश होकर उसने राजकुमारी का विवाह उसके साथ कर दिया पर दहेज में कुछ न देकर दोनों को घर से बाहर कर दिया।

राजकुमारी किताबून को लेकर गश्तास्प बन में रहने लगा। नित्य-प्रति वह नदी के पार जाकर बन-गर्दभ का आखेट करता और एक भाग बन रक्षक को देकर शेष घर ले आता। इसी प्रकार वह अपना जीवन-निर्वाह करता रहा। इसी बीच राजा की अन्य दो पुत्रियाँ भी युवती हुईं और उसके स्वयंवर का दिन भी निकट आया। दो युवक उनको प्राप्त करने के इच्छुक हुये। यह दोनों राजा के सम्बन्धी थे। अतएव राजा ने उनमें से मरीं नामक को बुला कर कहा "निकट-

वर्ती बन में एक भेड़िया रहता है जिसने बड़ी क्षति पहुँचाई है। यदि तुम उसका बध कर सको तो मैं अपनी एक कन्या का विवाह तुम्हारे साथ कर दूँ।"

राजा की यह बात सुन कर वह बड़ी चिन्ता में पड़ा कि किस प्रकार उस भेड़िये का बध किया जाय। वह इसी चिन्ता में डूबा हुआ उस बन में आया। उसे चिन्तित देख कर उस बन के रक्षक ने कहा "यहाँ पर राजा का जामाता जो कि बड़ा ही बली तथा शक्तिशाली है नित्य आखेट के लिये आता है यदि तुम उसकी सहायता लो तो मुझे विश्वास है कि वह उस भेड़िये का बध कर दे।"

रक्षक की यह युक्ति सुन कर मर्री गश्तास्प के पास गया और कहा "हे वीर! यदि तुम मेरी सहायता करो तो मैं अपनी इच्छा पूर्ण करूँ। उसकी स्वीकृति पाकर मर्री ने उस भेड़िये के बध की बात कही।" गश्तास्प प्रसन्नतापूर्वक उसकी सहायता के उद्देश्य से उस भेड़िये की ओर चला। रक्षक और मर्री भी उसके साथ हो लिये, पर मार्ग ही में भय के कारण रुक गये। गश्तास्प इसकी कुछ भी चिन्ता न करके भेड़िये के निकट गया। उसने उसे वास्तव में सिंह से भी बड़ा पाया। भेड़िये ने इसे देखकर झट आक्रमण कर दिया और एक भरपूर पञ्जा मारा परन्तु इस वीर ने तुरन्त ही अपने खड्ग से उसके दो खण्ड कर डाले।

भेड़िये को मरा देख रक्षक तथा मर्री बड़े प्रसन्न हुये, परन्तु गश्तास्प से यह वचन लेकर कि वह इसके मारे जाने का वृत्तान्त किसी से न कहेगा मर्री राजा के पास गया और भेड़िये के बध का समाचार कह सुनाया; पर उसे विश्वास न हुआ। अन्ततः जब उसने स्वयं जाकर देख लिया तो अपनी पुत्री का विवाह उसके साथ कर दिया।

तदुपरान्त उसने दूसरे व्यक्ति अहरन को बुलाया और कहा कि अमुक पर्वत पर एक अजगर है। यदि तुम उसका बध कर आओ तो

मैं अपनी दूसरी पुत्री का विवाह तुम्हारे साथ कर दूँगा। राजा का यह प्रस्ताव सुनकर वह चिन्तित हो उठा, परन्तु रसक से गश्तास्प के द्वारा भेड़िये के बध का ज्ञान प्राप्त कर के वह भी उसके निकट गया और अपनी इच्छा प्रगट की। इस पर गश्तास्प ने उससे एक धारदार कटार ले आने को कहा। उसने कटार लाकर गश्तास्प को दे दी।

कटार लेकर गश्तास्प पर्वत पर चढ़ गया, और उसने उस अजगर को ललकारा। अजगर ने जो उसका शब्द सुना तो आक्रमणकारी हुआ, उसके मुख से अग्नि की लपटें निकल रही थीं। इधर गश्तास्प ने भी अपने तीखे बाण फेंके। चालीस बाणों के लगते ही अजगर निर्जीव हो गया। तब गश्तास्प ने उसी कटार को अपने भाले में बाँध कर अजगर के मुख में घुसेड़ दिया, और उसके दाँतों को उखाड़ कर अहरन के पास ले आया।

अहरन ने जो दाँतों को देखा तो बड़ा प्रसन्न हुआ और आकर राजा को इसकी सूचना दी। राजा को अजगर के बध का सन्देश पा बहुत आश्चर्य हुआ। वह सोचने लगा कि यह कार्य अहरन का नहीं है, अवश्य कोई कयानी वंश का है जिसने इस अजगर को मारा है। अतएव वह स्वयं पहाड़ पर गया और अजगर को मृत पाकर अहरन से उसने कहा "तू सच सच बता कि किसने इसका बध किया है।" इस पर अहरन ने कहा "हे राजन्! मैंने तुम्हारी प्रतिज्ञा के अनुसार अजगर को मार डाला अब तुम अपनी प्रतिज्ञा की पूर्ति में आगा-पीछा न करो।" अतएव राजा को विवश होकर अपनी कन्या का विवाह उसके साथ करना पड़ा।

थोड़े ही काल पश्चात कितायून ने भेड़िये तथा अजगर के गश्तास्प द्वारा मारे जाने की बात अपनी शिविका से कही और जब इसका समाचार राजा को मिला तो उसने गश्तास्प को बड़े सम्मान सहित बुलाकर अपना सेनापति नियुक्त किया।

गश्तास्प का खर्ज़ के शासक इलियास से युद्ध

जब गश्तास्प रूम का सेनापति हुआ तो एक दिन रूम के राजा ने खर्ज़ के शासक इलियास को इस आशय का एक पत्र लिखा कि या तो तुम खर्ज़ पर से अपना शासनाधिकार हटा लो अथवा युद्ध के हेतु रण-क्षेत्र में आओ। जिस समय यह पत्र इलियास के पास पहुँचा तो वह बहुत क्रोधित हुआ और तुरन्त वीर तथा शक्तिशाली योद्धाओं को ले दौड़ा।

जिस समय वह रूम के निकट आया तो गश्तास्प भी अपनी सेना ले कर उसके सम्मुख आ उपस्थित हुआ और दोनों दल भिड़ गये। ऐसी मार काट हुई कि सारा रण-क्षेत्र रक्त सागर में परिणत हो गया, शव उस सागर में पन-डुब्बियों की भाँति भासित होने लगे। इतने में गश्तास्प घोड़ा कुदा कर इलियास के सामने आया और उसको ललकार कर बोला "यदि तू वीर है तो मेरे सम्मुख आ।" उसकी बात सुनते ही इलियास घोड़े को मोड़ उसके सामने आया। उसे सम्मुख देख गश्तास्प ने अपने भाले को उसके कमर बन्द में घुसेड़ कर खींचा। इलियास घोड़े से नीचे आ गिरा और गश्तास्प उसे बन्दी कर तुरन्त राजा के सम्मुख ले गया।

इलियास के बन्दी होते ही खर्ज़ की सेना भाग खड़ी हुई, और गश्तास्प ने भी उसे खदेड़ लिया। सारांश यह कि इसमें भी सेना के बहुत से वीर खेत रहे और खर्ज़ का राज कोष तथा अन्य मूल्यवान वस्तुऐं भेंट रूप राजा के हाथ लगीं। इस विजय के पश्चात् राजा ने गश्तास्प को सभी विषयों में स्वतंत्र कर के उसे सम्मानित किया।

एक दिन गश्तास्प ने कैसर रूम से कहा "हे राजन्! मेरी इच्छा है कि अब तुम ईरान पर चढ़ाई करो।" उसकी इस बात को सुन कर कैसर ने अपने अन्य सामन्तों की अनुमति ली। सामन्तों ने कहा "ईरान के शासक के पास बहुत सा राजकोष तथा एक बहुत बड़ी सेना है। अतः

उसके साथ युद्ध कर के प्राण गवाना असंगत है।" उनकी इस कायरता पूर्ण बातों से गश्तास्प को क्रोध आ गया और वह बोला "हे कैसर! मैं लहरास्प का पुत्र हूँ और ईरान के बारे में बहुत कुछ जानता हूँ। ईरान के किसी व्यक्ति में इतना बल तथा साहस नहीं है कि वह मुझ से युद्ध कर सके। यदि मुझे आज्ञा दो तो मैं स्वयं जाकर उसे युद्ध क्षेत्र में पराजित कर के तुम्हें वहाँ का राजा बनाऊँ।"

गश्तास्प की ऐसी वीरता-पूर्ण बातों को सुन कर कैसर प्रसन्न हो गया और तुरन्त एक पत्र लहरास्प को लिखा 'या तो तू अपने राज्य का आधा भाग तथा राज मुकुट हम को दे अन्यथा युद्ध के लिये तैयार हो जा।"

जब कैसर का यह पत्र कावूस द्वारा ईरान पहुँचा तो लहरास्प पढ़ कर हँसा और बोला "भला बता तो कि खर्ज़ को कैसर ने किस प्रकार पराजित किया?" इस पर कावूस ने गश्तास्प के प्रत्येक वीरता पूर्ण कार्य का उल्लेख किया। लहरास्प ने सन्देश पाकर कैसर को लिखा "क्या तू मुझे भी इलियास समझता है। सावधान हो जा क्योंकि मेरे यहाँ कितने ही बड़े-बड़े योद्धा हैं। उनके अतिरिक्त मेरे पास इतनी बड़ी सेना है कि तू उसका अनुमान स्वप्न में भी नहीं कर सकता। अतएव तेरे लिये यही हितकर है कि तू सर्वदा की भाँति राज-कर दिये जा। अन्यथा अपने प्राण के साथ अपना राज मुकुट गँवा बैठेगा और प्रजा को भी नष्ट करा देगा।" यह पत्र लिख कर उस अनुचर कावूस को दे दिया और उसे भली भाँति समझा बुझा कर बिदा किया।

गश्तास्प का ईरान पति बनना

कावूस को बिदा करने के पश्चात् लहरास्प ने गश्तास्प के सहोदर ज़रीर को बुला कर कहा "तुम रूम जाकर कैसर से भेंट करो और उससे कहो कि मेरी दृष्टि में युद्ध करने में कोई लाभ नहीं क्योंकि मैं

उसके राज्य तथा राज-मुकुट का इच्छुक नहीं। तत्पश्चात् गश्तास्प से मिल कर कहना कि तू ईरान वापिस चल। पिता जी की यह अभिलाषा है कि तुम्हें राज मुकुट पहना कर स्वयं ईश्वर की भक्ति में प्रवृत्त हों। अब तू उस के सब अपराधों को क्षमा करके मेरे साथ चल।"

पिता के आदेशानुसार ज़रीर ने रूम पहुँच कर कैसर को उसका संदेश दिया। ज़रीर की बात सुन कर राजा ने उत्तर दिया "जब तक लहरास्प अपना आधा राजा मुझे न देगा तब तक हम सन्धि न करेंगे।" उसकी यह बात सुन कर ज़रीर वहाँ से गश्तास्प के पास आया और पिता की इच्छा उस पर प्रकट कर के उसे वापिस चलने की प्रेरणा की—पिता का संदेश सुन कर गश्तास्प प्रसन्न हो किताबून को साथ ले ईरान की ओर चल पड़ा।

इधर जब लहरास्प को गश्तास्प के आगमन की सूचना मिली तो उसने सामन्तों को उसके स्वागत के हेतु भेजा, जो सम्मान-पूर्वक उसे राजसभा में ले आये। पुत्र को देख कर लहरास्प ने राजसिंहासन से उतर कर उसे छाती से लगा लिया, पिता पुत्र दोनों के नेत्रों से आँसू बहने लगे। तत्पश्चात् एक अन्य सिंहासन बिछवा कर उसे उस पर बैठने का आदेश करके समस्त सामन्तों तथा प्रजा को उसकी आधीनता स्वीकार करने को कहा।

इस प्रकार एक सौ बीस वर्ष तक राज्य करने के पश्चात् एक दिन उसने राज काज का भार गश्तास्प को सौंप कर स्वयं बलख के एक पवित्र स्थान में जाकर ईश्वर की आराधना करने का निश्चय किया।

लहरास्प के बलख चले जाने के पश्चात् गश्तास्प सिंहासनारूढ़ हुआ। संसार के प्रायः सभी राजा उसकी अधीनता स्वीकार कर उसे राज-कर देने लगे। उसकी अधीनता में एक राजा अर्जास्प था जो चीन का शासक था। वह इतना शक्तिशाली था कि देव और परियाँ भी उस

के अधीन थीं। वह अपने इस बल के अहमत्ववश सदा विद्रोही रहता था और राजकर न देता था।

इसी बीच किताबून के गर्भ से दो पुत्रों का जन्म हुआ, जो कि हृष्ट-पुष्ट, सुन्दर तथा तेजस्वी थे। इनमें से एक का नाम असफ़न्दयार तथा दूसरे का नाम पशोतन रक्खा गया। जब ये बड़े हुये तो गश्तास्प ने इन्हें प्रत्येक विद्या की भरपूर शिक्षा दिलाई।

गश्तास्प का ज़रदश्त का शिष्य होना

एक दिन ज़रदश्त नामक एक वीर व्यक्ति उसके सम्मुख आया और उसने अग्नि के समस्त रहस्य उसको बतलाये। एक दिन अपने कथा के प्रमाण-स्वरूप उसने राज-सिंहासन के सामने अपनी विद्या द्वारा एक वृक्ष उत्पन्न किया। वह वृक्ष पूर्ण रूप से फूला फला हुआ था। ज़र-दश्त ने उन फल फूलों के गुणों को बताते हुए कहा "जो मनुष्य इन फलों और फूलों को खाएगा उसे समस्त विश्व के रहस्यों का ज्ञान हो जाएगा।" उसके इस कार्य को देख कर गश्तास्प का विश्वास और भी दृढ़ हो गया।

इसी बीच गश्तास्प को लहरास्प के रोगी होने का समाचार मिला और वह चिन्तित हो उठा। गश्तास्प को चिन्तित देख कर ज़रदश्त ने कहा "चिन्ता न कीजिए मैं जाता हूँ और उन्हें चंगा करके लौट आता हूँ।" ज़रदश्त ने बलख़ जाकर लहरास्प को स्वस्थ किया और लौट कर लहरास्प के अच्छे होने की सूचना गश्तास्प को दी।

कुछ दिनों के अनन्तर उसने राजा से कहा "अब मैं पैग़म्बर हो गया हूँ और ईश्वर ने 'ज़िन्दा वास्ता' नामी धर्म-पुस्तक नाज़िल की है। इस धर्म पुस्तक को पढ़ कर अब मैं सहज ही आकाश तथा पाताल की बातें जान लेता हूँ। इसी प्रकार की बातें करके उसने राजा का मन अपनी ओर फेर लिया। यहाँ तक कि गश्तास्प ने उसका धर्म ग्रहण कर लिया।

गश्तास्प के अग्नि उपासक हो जाने के पश्चात् एक दिन जरदश्त ने कहा "अब तू सहज ही चीन पर आक्रमण कर सकता है।" यह सुनते ही गश्तास्प ने चीन के शासक अर्जास्प को एक पत्र-द्वारा सूचित किया कि अब तू चीन का राज्य छोड़ दे अन्यथा मैं तेरा सर्वनाश कर दूँगा। जब अर्जास्प ने यह पत्र पढ़ा तो उसने उसके उत्तर स्वरूप लिखा "मुझे विदित हो चुका है कि तू उस राक्षस का धर्मावलम्बी हो चुका है और उसी के कथनानुसार तू ने इस प्रकार की धृष्टता की है। मेरा कहना मान, और उस नीच धर्म। गुरु को अपने राज्य से बाहर कर दे-देख तेरा पिता कितना धर्मात्मा था। मैं यह पत्र तुझे मित्रता के नाते लिख रहा हूँ। तुझे योग्य है कि तू उस राक्षसी धर्म का परित्याग कर अपने पूर्वजों के धर्म का पालन कर और इस प्रकार नीचों के चक्कर में फँस कर अपने लोकपर-लोक का विघात न कर अन्यथा मुझे विवश होकर तुझ पर चढ़ाई करनी होगी।" इस आशय का पत्र लिख कर उसने देव दूत द्वारा गश्तास्प के पास उसे भेजा।

जब गश्तास्प ने अर्जास्प का पत्र पढ़ कर सबको सुनाया तो जरदश्त ने कहा "तू डरता क्यों है। उसे युद्ध का सन्देश भेज दे।" अतएव गश्तास्प ने उसे इस अभिप्राय का उत्तर भेज दिया कि तुझे यात्रा के कष्ट झेलने से क्या लाभ। मैं स्वयं ही सेना ले कर आ रहा हूँ। जब अर्जास्प ने इस उत्तर को पढ़ा तो जल उठा और तुरन्त अपने सेनापति को चढ़ाई करने का आदेश दिया।

अर्जास्प की आज्ञा पाते ही सेनापति एक बहुत बड़ा दल लेकर चला और मार्ग में जो-जो नगर पड़े उन्हें जीतता तथा जलाता हुआ ईरान की ओर बढ़ा। जब गश्तास्प को यह सूचना मिली तो उसने भी सेना भेजी। इस समय अस्फ़न्दयार ने कहा "पिता जी मुझे आज्ञा दीजिए कि मैं जा कर शत्रुओं का दमन करूँ।" परन्तु उसके भ्राता तथा सेनापति ज़रीर ने कहा "नहीं भाई, अभी तो यह निरा बालक है

और युद्ध कौशल में अनभिज्ञ है और साथ ही इसे रण-क्षेत्र का कुछ भी अनुभव नहीं। यदि आप आज्ञा दें तो मैं स्वयं सेना ले कर शत्रु का सहार करूँ।"

सेनापति की यह बात सुन कर गश्तास्प ने ज़रीर तथा असफ़न्दयार को जाने की आज्ञा दी। अतएव जब वह सेना लेकर मैदान में आये तो चीन का सेनापति ईरानी सेना से भिड़ गया। अर्द शेर, लहरास्प का पुत्र मैदान में आया और बहुत से चीनी योद्धाओं का बध करके स्वयं भी वीर-गति को प्राप्त हुआ। इसके पश्चात् उसका भाई शेदास्प आगे बढ़ा और वह भी कई वीरों का संहार कर स्वयं भी सुरपुर को चला गया। तत्पश्चात् जामास्प का पुत्र भी युद्ध करते-करते मारा गया। इसके अनन्तर ज़रीर का पुत्र परतोह भी मैदान में आया परन्तु वह भी अपने प्राण गँवा बैठा।

जब परतोह की मृत्यु का समाचार ज़रीर को मिला तो वह क्रोधाविष्ट हो सामने आया और शत्रुओं को गाजर मूली की भाँति काटने लगा। इसी प्रकार मारते काटते तथा देवों की पंक्तियों को छिन्न-भिन्न करते वह अर्जास्प के निकट जा पहुँचा। ज़रीर को सामने देख कर अर्जास्प ने अपने सैनिकों से कहा "जो वीर इसको धराशायी करेगा मैं उसे हर प्रकार से सम्मानित करूँगा।" अर्जास्प की यह बात सुन कर एक देव आगे बढ़ा और देर तक युद्ध करने के पश्चात् उसने ज़रीर को मार गिराया।

ज़रीर के बध का समाचार जब गश्तास्प को मिला तो वह बहुत रोया, पश्चात् उसने अपने योद्धाओं से पूछा "अब उस देव से युद्ध करने को कौन जायगा।" इस पर असफ़न्दयार ने कहा 'पिता जी, मैं जाऊँगा।' पुत्र की वीरता-पूर्ण वाणी सुन कर गश्तास्प ने कहा "यदि तू उसे पराजित करके आयेगा तो मैं तुझी को राज्य का उत्तराधिकारी बनाऊँगा।"

इतनी बात सुन कर राजकुमार बहज़ाद पर आरूढ़ हो देव के सम्मुख आया। उसके आते ही देव ने तलवार का एक विकट प्रहार उस पर किया। परन्तु अस्फ़न्दयार ने घात बचा कर उसकी तलवार को पकड़ लिया और अपना भाला चलाया। सौभाग्य से भाला देव के वक्षस्थल को चीरता हुआ हृदय में जा चुभा और वह देव तुरन्त पृथ्वी पर गिर पड़ा। देव के गिरते ही उस वीर ने तुरन्त ही अपनी तलवार से उसका शिर काट कर सदा के लिये उसे इस संसार के बन्धनों से मुक्त कर दिया।

देव का अन्त करके वह अर्जास्प की ओर बढ़ा। इसी समय ज़रीर का पुत्र सेना लेकर उसकी सहायता को पहुँच गया। इधर जो अस्फ़न्दयार ने आक्रमण किया और उधर गश्तास्प भी अपनी सेना लेकर अर्जास्प हीपर चढ़ा। फलतः दोनों ओर घोर युद्ध हुआ अन्त में अर्जास्प साहसहीन रण-क्षेत्र से भाग निकला। इसी झगड़े में बहुत से चीनी बन्दी हुए। इन बन्दियों ने गश्तास्प से कहा "यदि आप हम लोगों को मुक्त कर दें तो हम लोग आपका धर्म ग्रहण कर लें।" अतः गश्तास्प ने उन्हें अग्नि उपासक बना कर बन्धन मुक्त कर दिया।

इसके पश्चात् वह ज़रीर के शव के निकट आया और उसके मृत शरीर के पास बैठ कर रोने लगा। थोड़ी देर के बाद वह उसके शव को टिकटी पर रख कर डेरे को ले गया। तदनन्तर उस काल की प्रथा के अनुसार मृतकों की गणना हुई और तब उसे ज्ञात हुआ कि इस युद्ध में उसकी ओर के तीस सहस्र वीर खेत रहे। वहाँ से जब वह चीनी मृतकों के निकट आया तो उसे यह विदित हुआ कि शत्रुओं की सेना के एक लाख वीर धराशायी हुये हैं, जिन में से कि एक हज़ार एक सौ अड़सठ (११६८) सामन्त हैं और शेष साधारण श्रेणी के सैनिक।

इस विजय से गश्तास्प को बड़ा हर्ष हुआ, और उसने अपने पुत्र अस्फ़न्दयार को अग्नि-पूजक धर्म की वृद्धि करने की आज्ञा दी। अस्तु समस्त राजाओं तथा उनकी प्रजाओं को अग्नि-उपासक बना कर वह

कुछ काल पश्चात् लौट आया। जब गश्तास्प को अपनी इच्छा की पूर्त्ति का शुभ संदेश मिला तो वह गद्‌गद् हो गया।

गश्तास्प द्वारा अस्फ़न्दयार का बन्दी होना

गश्तास्प ने फिर एक दिन एक बड़ी सभा की जिस में समस्त सामन्त तथा सभासद सम्मिलित हुए। इन्हीं में गर्ज़म नाम का एक वीर भी था जो अस्फ़न्दयार से द्वेष रखता था। अनुकूल अवसर देख कर उसने गश्तास्प से कहा "महाराज! मुझे विश्वस्त सूत्र से ज्ञात हुआ है कि अस्फ़न्द यार को अपने बल पर भारी अभिमान है। वह आप का सर्वनाश कर स्वयं राज्य भोगना चाहता है। अब आप जो चाहें करें।"

गर्ज़म की यह बात सुन कर गश्तास्प को बड़ी चिन्ता हुई और रंग मञ्च से उठ कर अपने शयनागार में चला गया। तीन दिन तथा तीन रात वह इसी चिन्ता मग्न हो वहीं पड़ा रहा। चौथे दिन उसने अपने सेनापति को बुला कर अस्फ़न्दयार को अपने साथ लाने का आदेश कर के बिदा किया।

राजा से विदा होकर जामास्प अस्फ़न्दयार के पास पहुँचा और उसे राजाज्ञा सुना कर अपने साथ चलने को कहा। इस पर उस वीर ने कहा "कल रात्रि को मैंने स्वप्न देखा है कि मेरा पिता मुझ से रुष्ट है, परन्तु मुझे इसका कारण न विदित हो सका। उनकी आज्ञा से मैंने बड़े-बड़े योद्धाओं को पराश्त किया है, दूसरे राज्यों को उनके आधीन किया है, तदनन्तर ज़रदस्त के मत को सारे संसार में फैलाया है। फिर क्या कारण हुआ कि वह मुझ पर इस प्रकार रुष्ट हो गये हैं।"

राजकुमार की बात से सहमत होकर जामास्प ने कहा "यह बात तो ठीक है कि गश्तस्प तुम से रुष्ट है परन्तु फिर भी तुम्हें उसके पास अवश्य जाना चाहिये।" राजकुमार ने कहा "यदि मैं ऐसी स्थिति में उनके निकट जाऊँगा तो वह अवश्य मेरे साथ अन्याय करेंगे। परन्तु फिर भी जामास्प के विवश करने पर राज काज का भार अपने ज्येष्ठ पुत्र

बहमन के ऊपर छोड़ शेष तीन पुत्रों मेहरयोश, आज़र तथा नौशावर को लेकर ईरान को चल दिया।

जब अस्फ़न्दयार पिता के सामने पहुँचा तो उसने तुरन्त ही उसे बन्दी करके ज़रगुन्दा में भेज दिया। इधर जब बहमन को पिता के बन्दी होने का समाचार मिला तो वह शेष तीनों भाइयों को ले कर ज़र गुन्दा पहुँचा और वहाँ पिता को चार लोहे के खम्भों से बँधा देख कर बड़ा दुखी हुआ और उसकी सहायता की।

इधर बहुत दिन रहने के पश्चात गश्तास्प बलख को छोड़ कर सीस्तान की ओर चला जिससे वहाँ पर पहुँच कर अपने शासन को दृढ़ करे। जब गश्तास्प सीस्तान के निकट पहुँचा तो रुस्तम उसकी अगवानी के लिये आया और सम्मानपूर्वक अपने राजभवन में ले जाकर उसे उतारा। तदुपरान्त गश्तास्प के आदेशानुसार उसने भी ज़रदश्त के मत को अंगीकार किया और उस पवित्र पुस्तक को मत्थे चढ़ाया। इसके पश्चात् गश्तास्प बहुत दिनों तक उसका अतिथि रहा।

अर्जास्प के पुत्र गहरम द्वारा बलख पर आक्रमण

अस्फ़न्दयार के बन्दी होने तथा गश्तास्प के सेना सहित सीस्तान जाने का समाचार जब अर्जास्प को मिला तो वह बहुत प्रसन्न हुआ और अपने पुत्र गहरम को बलख पर विजय प्राप्त करने के लिये भेजा। गहरम पिता की आज्ञानुसार एक बड़ी सेना लेकर बलख पहुँचा तो वहाँ ऐसा कोई न था जो उसका सामना करता। अतएव सब सैनिकों ने लहरास्प के निकट आकर उसे सेना-सञ्चालन का भार लेने को कहा, तो उसने अनेक बहाने किये। परन्तु इन लोगों ने एक न मानी और विवश होकर लहरास्प को सुसज्जित सेना सहित रणक्षेत्र में उतरना पड़ा।

लहरास्प की सेना के रण-क्षेत्र में आते ही चीनियों ने आक्रमण कर दिया। बलख के वीर भी बड़ी वीरता से लड़े। स्वयं लहरास्प जिस

ओर जाता था उस ओर शवों के ढेर लग जाते थे। अपनी सेना को इस प्रकार करते देख गहरम को क्रोध आया और उसने अपनी सेना को धिक्कार कर कहा "बड़े दुख की बात है कि हम लोगों की दस हज़ार सेना होते हुये भी ये एक हज़ार बलख़ के सैनिक हम लोगों को गाजर मूली की भाँति काटे दे रहे हैं।" उसकी इस बात ने चीनी सैनिकों में नया उत्साह भर दिया और उन्होंने पूर्ण शक्ति से शत्रुओं का सर्वनाश आरम्भ कर दिया। अन्त में सब ने मिल कर लहरास्प पर आक्रमण किया। उस वीर ने भी वीरता पूर्वक शत्रुओं से लोहा लिया पर अन्त में मर्माहत हो पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसके पृथ्वी पर गिरते ही चीनी सैनिकों ने उसके दो खण्ड कर डाले।

लहरास्प के साथ-साथ बलख़ के शेष वीर भी काम आये। शत्रुओं को पराजित करके तथा बलख़-निवासियों का या तो वध कर के अथवा उन्हें बन्दी बना कर गहरम ने उस देश को अपने अधीन कर लिया। तदन्तर उस ने वहाँ के समस्त अग्नि-कुण्डों को नष्ट-भ्रष्ट कर के गश्तास्प के रनिवास पर भी अधिकार कर लिया।

इसी बीच गश्तास्प की एक पत्नी रनिवास से किसी प्रकार भाग निकली, और सीस्तान पहुँच कर उसने रो-रो कर बलख़ निवासियों तथा रानियों की दुर्दशा का दुःखद समाचार कह सुनाया। अपनी प्रजा तथा रनिवास के सर्वनाश का समाचार पाकर गश्तास्प को बड़ा क्रोध आया और उसने रुस्तम से सहायता माँगी। रुस्तम ने कहा "आप समर-भूमि को चलिये, मैं भी आप के पीछे आता हूँ।"

रुस्तम का वचन सुन कर गश्तास्प वहाँ से बिदा होकर सीधा बलख़ पहुँचा। इधर अर्जास्प को जब गश्तास्प के आगमन की सूचना मिली तो वह भी सेना लेकर अपने पुत्र की सहायता के हेतु आ गया। अर्जास्प के साथ इतनी बड़ी सेना थी कि जिसे देखने से ऐसा प्रतीत होता था मानों सागर की तरंगे उमड़ती हुई चली आ रही हैं।

इधर तो चीनियों की इतनी बड़ी सेना देख कर ईरानियों का साहस जाता रहा उधर रुस्तम के पत्र द्वारा ज्ञात हुआ कि वह कुछ आवश्यक कार्यों के कारण युद्ध में भाग नहीं ले सकता। रुस्तम के इस उत्तर से गश्तास्प को बड़ा क्रोध आया। अस्तु उसने ईश्वर का नाम लेकर सेना को रणक्षेत्र में अवतीर्ण किया।

ईरानी सेना के पदार्पण करते ही युद्ध छिड़ गया, और इतनी भयंकर मार-काट हुई कि सारी समर-भूमि वीरों के रक्त से परिपूर्ण हो गई। चीनियों की असंख्य सेना के सम्मुख ईरानी न टिक सके और पराजित होकर भागे। अन्त में गश्तास्प तथा उसकी सेना ने भाग कर निकट के पर्वत के शिखर पर आश्रय लिया।

पराजित गश्तास्प अपने सेनापति से विजय प्राप्त करने के सम्बन्ध में परामर्श करने लगा। अवसर देख कर उसने राजा से कहा "यदि अस्फ़न्दयार इस युद्ध में भाग ले तो अवश्य विजय हो सकती है।" सेनापति की यह बात सुन कर गश्तास्प ने तुरन्त ही अपने पुत्र के नाम एक पत्र लिख कर दिया और कहा "तुम अति शीघ्र उसे यहाँ ले आओ।"

अस्फ़न्दयार के हाथों अर्जास्प की पराजय

राजा का पत्र लेकर जामास्प सीधा ज़रे बुर्दा गया और अस्फ़न्दयार से अपने पराजित होने का समाचार कह सुनाया। इस पर राजकुमार ने दुःखी होकर कहा "मेरे पिता ने गर्ज़म के कहने पर मुझे बन्दी किया और जितना पीड़ित तथा अपमानित कर सकता था किया। अब भी तुम मुझ से क्या करने को कहते हो?" राजकुमार की यह बातें सुन कर जामास्प ने कहा "भाई! यह समय दुखी होने अथवा शिकायत करने का नहीं है। इस समय तुम अपने पिता के अन्यायों को भूल कर उसकी सहायता करो।" इतना कह कर उसने उन साँकलों को काटने के लिये रेती दी। बन्धन मुक्त होते समय वह अचेत होकर गिर पड़ा।

जब उसकी मूर्च्छा दूर हुई तो जामास्प उसे बड़े सम्मान के साथ उसके चारों पुत्रों सहित गश्तास्प के निकट ले आया। जब गश्तास्प ने उसे देखा तो हृदय से लगा लिया और अपने घृणित कार्यों के लिये क्षमा चाही, और प्रमाण-स्वरूप उसने गर्ज़म को उसी के सम्मुख यम-पुरी भेज दिया। इतना सब करने के पश्चात् गश्तास्प ने उसे एक बड़ी सेना देकर गहरम से युद्ध करने के हेतु भेजा।

जब दोनों सेनाएँ आमने-सामने हुईं तो उस ओर से करगुसार और इस ओर से अस्फ़न्दयार रण-क्षेत्र में उतरे। पहिले करगुसार ने बाण-वर्षा की और उसके कई बाण अस्फ़न्दयार के शरीर में घुस भी गये, परन्तु फिर भी वह गिरा नहीं। अब अस्फ़न्दयार ने अपनी नाग-पाश फेंक कर शत्रु की गर्दन उसमें फँसा ली और उसे बन्दी कर के अपनी सेना के हाथों सौंप दिया।

सेना से लौट कर उसने तीर तथा तलवार से शत्रुओं का नाश करना आरम्भ कर दिया, सहस्रों योद्धाओं को कटते देख कर गहरम रण-क्षेत्र से भाग निकला और अर्जास्प के पास जाकर सारा समाचार उससे कह सुनाया। उधर तो गहरम भय के कारण भागा और इधर ईरानियों ने बड़े वेग के साथ शत्रुओं का संहार किया। अन्त में चीनी सेना भाग खड़ी हुई; परन्तु अस्फ़न्दयार ने उनका पीछा न छोड़ा और इस भगदड़ में बहुतों को यमलोक भेज दिया, शेष ने उसकी आधीनता स्वीकार कर ली अतः उन्हें छोड़ दिया गया।

सेना के भागने का समाचार पाकर अर्जास्प भी दूसरे मार्ग से अपने देश को निकल गया, और इस प्रकार ईरानियों ने चीनियों को पराजित करके बलख को अपने अधिकार में फिर कर लिया। पश्चात् अस्फन्दयार गश्तास्प के पास आया। उसे देख कर गश्तास्प ने कहा "हे पुत्र, अर्जास्प तेरी बहनों को बन्दी करके ले गया है, तू जा और उन्हें छुड़ा कर ला, यदि तू कृत-कार्य हुआ तो विश्वास रख कि सारा राज-पाट तुझे सौंप कर मैं ईश्वर की आराधना के लिये चला जाऊँगा।"

पिता की बात को सुन कर अस्फ़न्दयार ने कहा "मुझे राज पाट की आवश्यकता नहीं है। मैं तो आपका एक तुच्छ सेवक हूं। मैं अभी जाकर अपनी बहनों को छुड़ा लाता हूँ।" साथ ही उसने यह भी कहा "गुर्गसार का कहना है कि यदि आप मुझे बन्धन मुक्त कर दें तो मैं आजन्म आपकी सेवा में रह कर जो आज्ञा होगी करूँगा।" अस्तु गश्तास्प ने उसे बन्धन मुक्त करके तथावचन बद्ध रहने का आदेश देकर उसे भी अपने पुत्र के साथ भेज दिया।

अस्फ़न्दयार का ज़रेरूई को प्रस्थान

गुर्गसार को बन्धन-मुक्त कर अस्फ़न्दयार ने उससे कहा, "यदि तू सत्य की ओर अग्रसर होगा तो मैं भी सदा तेरा सम्मान करूँगा अन्यथा ध्यान रहे कि मेरी तलवार तेरी गर्दन पर होगी।" जब गुर्गसार ने सत्य कहने का वचन दिया तो उसने पूछा "अच्छा अब यह बता कि ज़रेरूई पहुँचने के लिये कौन-सा निकटवर्त्ती मार्ग है।"

इस प्रश्न का उत्तर देते हुये गुर्गसार ने कहा "एक मार्ग तो वह है जिसमें घनी आबादी मिलती जायगी, तथा सभी प्रकार का सुभीता इस मार्ग में रहेगा, पर इससे जाने में यात्री को तीन मास का समय लग जाता है। दूसरा मार्ग इसकी अपेक्षा बहुत कम आबाद है। इसमें यात्री के हेतु भोजनार्थ फल-फूल तथा पीने के लिये निर्मल जल के सोते हैं; पर इस मार्ग को पार करने में पूरे दो मास लगते हैं। अब शेष रहा तीसरा मार्ग। वह एक सप्ताह में तय किया जा सकता है। परन्तु पग-पग पर विपत्तियों की आशंका होने के कारण यह मार्ग दुस्सह है कहीं तो इस मार्ग में सिंह, भेड़िये तथा चीते हैं, तो कहीं पर बड़े-बड़े अजगर हैं और कहीं सर्प, सीमुर्ग तथा अन्य हिंसक जीव हैं। अब आप को जो मार्ग सुगम जान पड़े उसी पर अनुगमन करें। यह सम्पूर्ण वृत्तांत सुनकर अस्फ़न्दयार ने कहा "मैं इन हिंसक जीवों से तनक भी भयभीत नहीं होता, अतः मैं सात दिवस वाले मार्ग से ही जाऊँगा।"

तदुपरान्त अस्फन्दयार ने गुर्गसार को मदिरा पिलाई। जब वह मद-मत्त हो गया तो बोला 'हे राजकुमार उस साप्ताहिक मार्ग से होकर जाना हँसी-खेल नहीं, तेरा उस मार्ग से जीवित लौटना असम्भव है।" राजकुमार ने उसकी यह बात सुन कर क्रोधाविभूत हो उसके हाथ-पैर बाँध दिये। अपने को फिर बन्दी पाकर वह रो कर पूछने लगा "आप ने जो कुछ पूछा था मैंने सत्य-सत्य बतला दिया, अब फिर मुझे किस दोष-वश बन्दी बनाया गया है।" राजकुमार ने उत्तर दिया "मुझे शंका है कि कहीं तू भाग न जाय। तुझे इसी अवस्था में रख कर यह दिखाऊँगा कि मैं किस प्रकार उन विपदाओं का सामना करके उन पर विजय लाभ करता हूँ।"

इतना कह कर अस्फन्दयार गश्तास्प के निकट गया, और उससे आज्ञा माँगी। गश्तास्प ने उसे समझा-बुझा कर दस हज़ार वीर सैनिक दिये तथा धन द्रव्य से परिपूर्ण कर उसे बिदा किया। इस अवसर पर सेना के सञ्चालन का भार पशोतन पर रखा गया। जब वह अपनी राज्य-सीमा को पार चुका तो उसे एक बहुत भारी बीहड़ बन दीख पड़ा।

पहिला पड़ाव

जब अस्फन्दयार ने वह विकट बन देखा तो गुर्गसार से पूछा कि इस बन में किस बात का भय है। उसने कहा "हे राजकुमार! यहाँ पर दो सिंहाकार हिंसक भेड़िये हैं जो एकाएक आक्रमण कर बड़े-बड़े वीरों को भी यमपुरी का मार्ग दिखा देते हैं।" गुर्गसार की यह बात सुन कर राजकुमार ने अश्वारोहियों से कहा "तुम सब लोग बहुत सावधानी से रहो और जैसे ही वह भेड़िये निकलें वैसे ही बाणों की वर्षा आरम्भ कर दो।"

उपर्युक्त बातें अश्वारोहियों को समझा कर अस्फन्दयार ने उस बन में प्रवेश किया। बन में प्रवेश करते ही वे दोनों भेड़िये निकल पड़े। फिर क्या था पहले तो सवारों ने ही बाण-वर्षा कर उन्हें घायल कर

दिया, फिर राजकुमार और पशोतन ने अपनी विष बुझी तलवारों से उनको खण्ड-खण्ड कर डाला।

गुर्गसार ने जो यह देखा तो वह आश्चर्य चकित हो गया और बोला "हे राजकुमार! इस बन में अब किसी भी प्रकार की आपत्ति की आशंका नहीं रही। अब हम लोग निश्चिन्त होकर यहाँ रात बिता सकते हैं।" अस्तु अस्फन्दयार ने अपनी सेना सहित उस रात को वहीं पड़ाव डाल कर विश्राम किया।

दूसरा पड़ाव

दूसरे दिन भोर होते ही राजकुमार ने अपने पथ-प्रदर्शक गुर्गसार से पूछा "आज हमें किन आपत्तियों का सामना करना पड़ेगा?" इस प्रश्न का उत्तर देते हुए उसने कहा "आज के मार्ग में दो सिंहों के मिलने की संभावना है जिनको देख कर बड़े-बड़े योद्धाओं की हृदय-गति अवरुद्ध हो जाती है। मुझे भय है कि कहीं आप चोट न खा जाँय।"

पशोतन ने अस्फन्दयार से कहा "यह सुन कर तो मेरी इच्छा यह है कि हम दोनों मिल कर उन पर आक्रमण करें।" परन्तु उसने इसे अस्वीकार किया। ज्यों ही वह लोग आगे बढ़े कि एक सिंह ने निकल कर आक्रमण कर ही तो दिया। उसे आते देख कर अस्फन्दयार ने छट तलवार खींच ली और उसके सामने जा पहुँचा और बड़ी वीरतापूर्वक उस सिंह के दो टुकड़े कर डाले। उसके धराशायी होते ही सिंहनी ने आक्रमण किया परन्तु इस वीर ने उसे भी मार गिराया।

इस विपदा से छुटकारा पाकर राजकुमार ने सुरादेवी का सेवन किया; तत्पश्चात् गुर्गसार से पूछा "अब भविष्य में किस विपदा की आशंका है।" इस पर उसने कहा "आगे चल कर हमें एक अजगर का सामना करना पड़ेगा। उस भयानक जन्तु के मुख से अग्नि की लपटें निकला करती हैं जिनके कारण उसका प्रतिद्वन्द्वी वहीं पर जल कर भस्म हो जाता है।"

गुर्गसार की उपर्युक्त बातें सुन कर असफ़न्दयार ने अपनी सेना को एक गरदूँ (रथ) के बनाने की आज्ञा दी। जब रातों रात वह रथ तैयार हो गया तो उसे अस्त्र-शस्त्रों से परिपूर्ण करके एक सन्दूक उसमें रख दिया। तत्पश्चात् उसमें दो वायु के वेग से चलने वाले दो घोड़े जोते।

तीसरा पड़ाव

दूसरे दिन प्रातःकाल वह उस गरदूँ (रथ) पर सवार होकर चल पड़ा। चलते समय वह सन्दूक के अन्दर बैठ गया। उसके थोड़ी दूर जाने पर वह अजगर दिखाई दिया। उसके दृष्टि-गोचर होते ही राजकुमार ने सन्दूक का ढक्कन बन्द कर लिया। इसी बीच उस अजगर ने श्वास खींची, जिसके परिणाम स्वरूप वह गरदूँ राज कुमार सहित उसके पेट में जा रहा। गरदूँ के अन्दर जाते ही उसमें से अस्त्र-शस्त्र निकलने लगे। इन शस्त्रों की मार से घबरा कर उस अजगर ने गरदूँ को उगल दिया। इन घावों से वह इतना क्षीण हो गया कि फिर उसमें युद्ध करने की शक्ति ही शेष न रही।

उसके पेट से बाहर होते ही राजकुमार ने सन्दूक से निकल कर उस पर आक्रमण किया, और अपनी तलवार से उस अजगर के दो भाग कर दिये, परन्तु स्वयं भी अचेत हो गया। इस पर पशोतन ने विष-नाशक औषधि पिला कर फिर उसे स्वस्थ किया। चैतन्य होने पर उसने मदिरा पान किया, और फिर अपने पथ-प्रदर्शक से भविष्य में आने वाली विपत्ति का समाचार जानना चाहा। उसने उत्तर दिया "आगामी पड़ाव में आपको एक ऐसी मायाविनी से पाला पड़ेगा जिसके साथ प्रत्येक समय कुछ थोड़े से वीर रहते हैं।"

गुर्गसार की बात सुन कर वह हँसा और कहने लगा "उसका इलाज तो बहुत ही सहज है।" इतना कह कर सब ने वहीं विश्राम किया।

चौथा पड़ाव

प्रातःकाल उस वीर ने अपनी यात्रा फिर आरम्भ की। थोड़ी दूर जा कर उसे एक उपवन दीख पड़ा। अस्तु उस ने वहीं पर आसन जमा दिया और सुरा देवी का सेवन आरम्भ कर दिया। इसी समय उसे एक सुन्दरी दीख पड़ी। जब वह निकट आई तो रोकर कहने लगी "वीर राज कुमार! मैं एक राजा की पुत्री हूँ और देवों द्वारा यहाँ पर बन्दी की गई हूँ। यदि आप उन देवों को मार डालें तो मैं निशि दिन आप की होकर आपके निकट रहूँगी और नित्य आप की सेवा किया करूँगी।"

जब अस्फन्दयार ने उसकी बातें सुनीं तो उसको यह शंका हुई कि हो न हो यह वही मायाविनी है। उसने उस सुन्दरी से पूछा "वह देव कहाँ हैं?" उस से यह ज्ञात कर कि वे सब आखेट के हेतु दूर गये हैं उसने उसे नाग-पाश द्वारा बन्दी करके साँकलों से जकड़ दिया। तुरन्त ही उस स्त्री ने बुढ़िया का रूप धारण कर लिया। उस के इस छद्म वेश को देख कर उसे विश्वास हो गया कि वास्तव में यह वही स्त्री है। अतएव उसने उसे अपनी तलवार का लक्ष्य बनाया।

उसके मरते ही सारा आकाश-मंडल काली घटाओं से परिपूर्ण हो गया और क्षण भर में काले देवों का दल दिखाई पड़ा। देवों को देखते ही अस्फन्दयार अपनी तलवार ले कर टूट पड़ा और लगा युद्ध करने। देवों ने उसे मारने के लिये अपनी सारी शक्ति लगादी परन्तु उस भाग्य-शाली पुरुष का बाल भी बाँका न कर सके। सारांश यह कि राजकुमार ने उन देवों को मार कर गुर्गसार के निकट आकर कहा "देखा तुमने कि मैंने किस प्रकार इन देवों को धराशायी किया।"

गुर्गसार ने उसे बधाई देते हुए कहा "आज तो आप निस्सन्देह बच गये, परन्तु कल आपके जीवित बच रहने की मुझे कोई आशा नहीं दीख पड़ती, क्योंकि अगले पड़ाव पर एक सीमुर्ग अपने दो बच्चों के साथ एक पर्वत पर रहता है। उसके बच्चे भी उसी की भाँति वीर हैं। वे

तीनों कल तुम्हारा तथा तुम्हारी सेना का विध्वंस कर डालेंगे।" इस पर राजकुमार यह कह कर "यदि ईश्वर सहायक है तो मैं उन पक्षियों को भी मार गिराऊँगा" विश्राम के हेतु अपने डेरे में चला गया।

पाँचवाँ पड़ाव

दूसरे दिन सवेरे अस्फन्दयार गरदूं पर चढ़ कर चला ही था कि वह सीमुर्ग आया और उसने झपट कर उस गरदूं को अपने पंजे में पकड़ा। गरदूं को पकड़ते ही उस में लगे हुये शस्त्रों के कारण उसके पंजे में घाव हो गया और रक्तस्राव होने लगा। घाव से पीड़ित होकर उसने अपनी चोंच से उसे पकड़ा परन्तु तलवार तथा भालों से उसकी चोंच तथा गरदन में भी सांघातिक चोटें लगीं। अधिक रक्त निकल जाने के कारण वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसके गिरते ही राजकुमार ने सन्दूक से निकल कर अपने खड्ग द्वारा उसके इतने घाव किये कि वह छिन्न-भिन्न हो गया। उसकी मृत्यु होते ही उसके बच्चे भयभीत होकर पर्वत पर जा छिपे।

सी-मुर्ग की मृत्यु पर गुर्गसार ने बधाई देते हुए फिर कहा "हे राजकुमार! इससे आगे वाले पड़ाव पर जाने का विचार त्याग दो। वहाँ दिन रात बर्फ गिरा करती है जिस से तुम्हारे तथा तुम्हारी सेना के प्राण गँवाने की आशंका है।" गुर्गसार की बात सुन कर सेना भयभीत हो उठी और उसने राजकुमार को लौट चलने का अनुरोध किया। इस पर राजकुमार ने दृढ़ स्वर में कहा "यदि तुम लोगों को भय है तो तुम लोग सहर्ष लौट जा सकते हो परन्तु मैंने तो जब आगे कदम रख दिया है तो पीछे कदापि न फिरूँगा। चाहे एक बार प्राण ही से क्यों न जूझना पड़े।"

राजकुमार की इस दृढ़ता को देख कर सेना ने कहा "महाराज! यदि आप अपने कर्त्तव्य में इतने दृढ़ हैं तो हम लोगों ने भी अपने प्राणों का मोह छोड़ दिया है। अब यदि हम लोगों को किसी भी बड़ी से बड़ी विपत्ति का सामना करना पड़ेगा तो सहर्ष उसका सामना करेंगे, परन्तु

आप का संग न छोड़ेंगे। सेना के प्रेम तथा स्वामि-भक्ति को देख कर अस्फ़न्दयार फूला न समाया और बोला "यदि हम लोग रूम से विजयी होकर लौटेंगे तो प्रत्येक सैनिक को धन से परिपूर्ण कर देंगे।" इसके पश्चात् सब ने विश्राम किया।

छठवाँ पड़ाव

दूसरे दिन भोर होते ही अस्फ़न्दयार अपनी सेना सहित चल पड़ा। सारे दिन चलने के पश्चात् जब संध्या हुई तो इन लोगों ने नीचे एक पर्वत-पार्श्व पर पड़ाव डाला। सूर्य भगवान् के अस्तगामी होते ही ठंडी वायु के झकोरे आने लगे। थोड़ी देर के अनन्तर हिम वर्षा आरम्भ हो गई, जिससे वह भाग हिमाच्छादित हो गया। इस तीक्ष्ण वायु तथा हिम की शीतलता के कारण अस्फ़न्दयार तथा उसकी सेना पीड़ित हो उठी। और सब ने मिल कर ईश्वर से प्रार्थना की "हे दीनबन्धु दीनानाथ, अब हम लोगों को रक्षा आप ही के हाथों है। अब आप अपनी दया द्वारा इस संकट को दूर कर के हम दीनों का उद्धार कीजिये।"

ईश्वर ने उनकी प्रार्थना को स्वीकार किया, फलतः वायु के शीतल झोंके तथा हिम वर्षा स्थगित हो गई। तब इन लोगों ने ईश्वर को धन्य-वाद दे कर गुर्गसार से सप्तम पड़ाव का वृत्तान्त सुनना चाहा। इस पर गुर्गसार ने कहा "आगामी पड़ाव इससे भी अधिक दुखदायी है क्योंकि सम्पूर्ण मार्ग एक मरुस्थल है जहाँ एक पौदा भी नहीं है, और न कोई पानी का सोता ही। सूर्योदय से सूर्यास्त तक समस्त मरुस्थल नरक के अग्निकुण्ड की भाँति तप्त रहता है। इसमें से जीवित लौटना असम्भव है। अतएव आप मेरा कहना मान जाइये और आगामी पड़ाव का विचार अपने हृदय से निकाल डालिये दूसरी। बात यह भी तो है कि ज़रूई का गढ़ इतना सुदृढ़ बना है कि यदि सौ वर्ष तक भी उस पर आक्रमण करते रहें तो भी उस पर विजय प्राप्त करना असम्भव है।" इस पर राजकुमार

ने कुछ न कहा और ईश्वर का ध्यान कर के उस रात्रि को वहीं काट कर दूसरे दिन यात्रा के लिये आगे बढ़ा।

सातवाँ पड़ाव

उक्त स्थान से विदा हो कर राजकुमार आगे बढ़ा परन्तु उसे किसी भी मरुस्थल का चिह्न न दीख पड़ा। वह और भी आगे बढ़ा तो उसने देखा एक बहुत बड़ा सागर अपनी तरंगों से अठखेलियाँ कर रहा है। यह देख कर अस्फन्दयार के क्रोध की सीमा न रही और उसने गुर्गसार से पूछा "तूने असत्य भाषण क्यों किया और यह क्यों कहा आगे एक बड़ा विकट मरुस्थल है, जहाँ पानी की एक बूँद भी प्राप्त करना असम्भव है। इस पर गुर्गसार ने कहा "अब तक मैंने सब बातें आप से सत्य-सत्य कही थीं परन्तु अब इस प्रकार बन्दी होने से दुखी हो कर मैंने असत्य कहा, जिससे आप यहाँ से लौट चलें। और मुझे इस बन्धन से मुक्ति प्राप्त हो जाय।"

उसकी इस बात पर राजकुमार हँस पड़ा और तुरन्त ही उसे बन्धन-मुक्त कर दिया। तदुपरान्त सागर को पार कर वह ज़रूई से निकट गया और गढ़ को देख कर गुर्गसार से बोला "अब तू बतला कि इस गढ़ को किस प्रकार विजय किया जाय।" गुर्गसार ने क्रोध-मिश्रित स्वर में कहा "यदि आप दो सौ वर्ष पर्यन्त भी इस गढ़ पर आक्रमण करते रहें तो भी इस पर विजय प्राप्त नहीं कर सकते।" गुर्गसार की इस प्रकार की बात को सुन कर राजकुमार को भी क्रोध आ गया और झट उसने उसका सिर काट लिया।

इसके अनन्तर वह कुछ लोगों को साथ लेकर गढ़ के द्वार पर गया और उसकी रचना देख कर चकित हो गया और उसने जान लिया कि युद्ध करके इस गढ़ पर विजय प्राप्त करना असम्भव है। अस्तु वह वहाँ से लौटा और मार्ग में एक साधु को देख कर उससे इस गढ़ के भीतर प्रवेश करने की युक्ति पूछी। साधू ने कहा "इस गढ़ के भीतर इन लोगों

के पास एक बड़ी सेना है और इसी के भीतर ही ईश्वर ने उनकी आवश्यकतानुसार समस्त वस्तुऐं एकत्रित कर दी हैं। जिनके कारण इन्हें बाहर आने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। हाँ, यहाँ के अधिकारी की यह आज्ञा है कि यदि कोई व्यापारी हो तो उसको अन्दर आने दिया जाय अन्यथा गढ़ का द्वार कभी भी बिना राजा की आज्ञा के न खोला जाय।"

साधू की बात सुन कर वह पशोतन के निकट आया और बोला "अब हम व्यापारी के वेश में गढ में प्रवेश करते हैं। तुम तनिक सावधानी से रहना और मेरी कोई चिन्ता न कर के सेना की देख-रेख करते रहना। जिस समय गढ़ के भीतर अग्नि की लपट उठे उस समय तुम सेना लेकर गढ़ के फाटक पर आजाना और मार-काट आरम्भ कर देना।

असफ़न्दयार द्वारा ज़रकई गढ़ विजय

पशोतन को इस प्रकार से समझा बुझा कर असफ़न्दयार ने सौ ऊँट एकत्र किये, जिनमें से बीस ऊँटों पर तो उसने सामान लादा और शेष अस्सी ऊँटों पर एक-एक वीर को एक-एक सन्दूक में बन्द कर के लाद दिया। सौ ऊँटों के संरक्षक के रूप में उसने सौ वीर और भी साथ लिये। इस प्रकार सुसज्जित होकर तथा व्यापारियों को वेश-भूषा बना कर उसने गढ़ की ओर प्रस्थान किया।

इधर जब अर्जास्प को ज्ञात हुआ कि ईरान से व्यापारियों का एक झुण्ड आ रहा है तो उसने अपने कर्मचारियों से कह दिया कि कोई इनसे छेड़-छाड़ न करे। अस्तु असफ़न्दयार बिना किसी रुकावट के गढ़ के भीतर पहुँच गया। वहाँ पहुँच कर उसने अर्जास्प के पास अपने आने की सूचना भेजी तथा उसके दर्शन करने की इच्छा प्रकट की। आज्ञा पाकर उसने उसके निकट जाकर अपना सब सामान दिखाया जिसे देख कर अर्जास्प बहुत प्रसन्न हुआ और उसका नाम पूछा। राजकुमार ने अपना

नाम जरीद बतलाया। तदुपरान्त अर्जास्प ने उससे गश्तास्प तथा उसके पुत्र अस्फन्दयार का समाचार पूछा। इस पर राजकुमार ने कहा "मुझे ईरान छोड़े हुए पाँच मास हुये, अतएव मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता कि वहाँ का क्या समाचार है; परन्तु मार्ग में मैंने यह अवश्य सुना है कि अस्फन्दयार सस-खिवस वाले मार्ग से यहाँ आने वाला है।" अर्जास्प इस बात पर बहुत हँसा और बोला "तो फिर यह निश्चय जानो कि वह मार्ग का ही हो रहेगा।"

तदनन्तर जब जरीद वहाँ से चलने लगा तो अर्जास्प ने कहा "जब तुम्हारी इच्छा हो यहाँ चले आया करो, तुम्हारे लिए कोई रोक-टोक नहीं है।" अस्तु राजकुमार अपने साथियों सहित गढ़ में पहुँच गया और एक मकान किराये पर लेकर उसमें अपनी दूकान लगा दी। फिर क्या था धड़ा-धड़ बिक्री होने लगी।

इसी बीच जब अस्फन्दयार की बहिनों को ईरानी व्यापारियों की सूचना मिली तो वह भाग कर अस्फन्दयार के निकट आईं और गश्तास्प आदि का समाचार पूछने लगीं। उनके इस प्रश्न को सुन कर अस्फन्दयार ने क्रोधित होकर उत्तर दिया "मैं तो व्यापारी हूँ, मैं क्या जानूँ कि गश्तास्प कौन है और कौन अस्फन्दयार। तुम लोग यहाँ से चली जाओ।" राजकुमार के इस रूखे उत्तर को सुन कर वे रोने लगीं और पश्चात् राज-महल को लौट गईं।

लौटते समय मार्ग में उन्होंने अपने भाई के कंठ-स्वर से व्यापारी के कण्ठस्वर की तुलना की और इस रहस्य को समझ गईं और रात को फिर अपने भाई के पास पहुँच कर बोली "आप एकान्त में चलिये हमें आपसे कुछ गुप्त बातें करनी हैं।" अपनी बहन को पहचान कर वह एकान्त में गया और उनकी बातें सुन कर बोला "मैं भी तुम्हारी ही मुक्ति के हेतु आया हूँ, परन्तु ध्यान रहे कि यह रहस्य किसी पर प्रकट न होने पावे।" इसके पश्चात वह दोनों युवतियाँ वहाँ से राज-महल को वापस चली गईं।

एक दिन अस्फ़न्दयार अर्जास्प के पास जाकर विनीत भाव से बोला "हे राजन्! पोत पर आते समय मार्ग में एक ऐसी आँधी आई जिससे हम लोगों को सागर-मग्न होने की आशंका हुई, अतः हम लोगों ने ईश्वर की पूजा और मानता की और उसकी कृपा से हमारा पोत सकुशल तीर पर आ लगा। अतएव यदि आप हमारे उत्सव में भाग लेने का वचन दें तो हम लोग यहीं उत्सव मनावें।" अर्जास्प ने उत्तर दिया "अच्छी बात है हम प्रातःकाल आवेंगे।" राजा की स्वीकृति पाकर अस्फ़न्दयार ने कहा "महाराज! जहाँ पर हमने अपना निवासस्थान बनाया है वह स्थान रंग-मञ्च के हेतु उपयुक्त नहीं है। यदि आज्ञा हो तो दुर्ग के उच्च शिखर पर रंग-मञ्च बना कर हम श्रीमान् का स्वागत करें।" भावी बड़ी प्रबल होती है, तभी तो अर्जास्प ने एक मूर्ख की भाँति बिना कुछ सोचे-विचारे ही इस प्रस्ताव को भी स्वीकार कर लिया।

इच्छानुसार अर्जास्प की स्वीकृति पाकर अस्फ़न्दयार ने दुर्ग के सर्वोच्च शिखर पर रंगमञ्च बनाया तथा उसे पूर्ण रूप से सजा कर और भिन्न-भिन्न प्रकार के भोजनों से परिपूर्ण करके अर्जास्प के आगमन की प्रतीक्षा करने लगा। भोर होते ही अर्जास्प अपने सामन्तों एवं वीरों सहित उस स्थान पर आ उपस्थित हुआ। सम्मान-पूर्वक स्वागत कर उसे बैठालने के पश्चात् अस्फ़न्दयार ने मदिरा-पात्र सब के सम्मुख प्रस्तुत किया। लोगों ने मदिरापान आरम्भ कर दिया और इतनी पी कि सब मस्त हो गये। तदुपरान्त अस्फ़न्दयार ने अग्नि प्रज्वलित की जिसकी लपट दूर-दूर तक दिखाई देती थी।

इधर पशोतन ने जो उस अग्निशिखा को देखा तो झट अपनी सेना लेकर दुर्ग के फाटक पर धाया, और जो कोई उसके सामने पड़ा उसे अपनी तलवार से यमपुरी पहुँचा दिया। उधर अस्फ़न्दयार ने भी ललकार कर कहा "ओह मूर्ख अर्जास्प! देख, अस्फ़न्दयार प्रत्यक्ष तेरे सम्मुख खड़ा है।" यह सुन कर अर्जास्प वहाँ से भागा और अपने पुत्र कोहरम की अध्यक्षता में पाँच हज़ार सैनिक देकर पशोतन से युद्ध

करने के निमित्त उसे भेजा। इधर जब अस्फ़न्दयार को यह विदित हुआ कि अर्जास्प के पास बहुत थोड़ी सेना है तो वह आठ सौ चुने हुए वीरों को लेकर रात के समय उस पर चढ़ दौड़ा। भीषण मार-काट हुई, अन्त में शेष चीनी सवार भाग निकले।

इसी बीच अस्फ़न्दयार की दोनों बहनों ने आकर अर्जास्प के शयनागार का पता बताया और स्वयं फिर लौट गईं। उनके जाते ही अस्फ़न्दयार अपनी सेना लेकर अर्जास्प के रनिवास में जा पहुँचा और उसे चुनौती दी; फलतः वह भी शस्त्र लेकर बाहर निकल आया और दोनों के शस्त्र चमकने लगे। अन्त में अर्जास्प धराशायी हुआ और उसकी बहू, बेटियाँ तथा बहनें और स्त्रियाँ सब अस्फ़न्दयार के हाथ आईं।

इसके पश्चात् वह वीर फाटक की ओर फिर आया और उसने तुर्कों का वध करना आरम्भ कर दिया। इसी बीच कोहरम तथा उसके सैनिकों को अर्जास्प के वध का समाचार मिला, अतएव वे पशोतन से युद्ध छोड़ कर इधर आये और अस्फ़न्दयार से युद्ध करने लगे। कोहरम के फाटक छोड़ते ही पशोतन भी गढ़ के भीतर घुस गया और उसे घेर लिया। इस स्थान पर ऐसी विकट मारकाट हुई कि समस्त दुर्ग रक्त रंजित हो गया। इस प्रकार पराजित होते देख तुर्कों ने पीठ दिखा दी फिर भी वीर कोहरम अपने स्थान पर डटा ही रहा। उसे खड़ा देख कर अस्फ़न्दयार ने ललकारा। दोनों में द्वन्द्व युद्ध होने लगा। अन्त में अस्फ़न्दयार ने उसका कमर बन्द पकड़ शिर से ऊँचा उठा तथा पृथ्वी पर पटक कर उसका भी शिर तलवार से काट लिया।

कोहरम को मार कर राजकुमार ने विज्ञप्ति की कि जो कोई भी मेरी अधीनता स्वीकार कर लेगा उसे मैं बहुत-सा धन दूँगा। फलतः गढ़ के अधिकांश निवासियों ने उसे अपना शासक स्वीकार कर लिया। और जिसने उसकी अधीनता स्वीकार नहीं की उनको यमपुरी पहुँचा दिया गया।

तदुपरांत उसने समस्त सैनिकों में धन- द्रव्य वितरित कर अर्जास्प की सुन्दर स्त्रियों को अपने अधीन रखा तथा उसकी पुत्रियों एवं भगिनियों को अपने पुत्रों को सौंप दिया। और गश्तास्प को इस विजय का शुभ संदेश भेजा। इस पर गश्तास्प ने लिखा कि चीन तथा तूरान को भली भाँति अधीन करने के हेतु तू वहीं रह, परन्तु जब उसे यह ज्ञात हुआ कि चीन तथा तूरान का बच्चा-बच्चा उसकी अधीनता स्वीकार कर चुका है तो राजकुमार को वापस बुला लिया।

अस्फ़न्दयार की वापिसी

पिता की आज्ञा पाकर अस्फ़न्दयार वहाँ से उसी सप्त दिवस वाले मार्ग से वापिस लौटा। जिस स्थान पर शीतल वायु तथा हिम का प्रकोप हुआ था और उसकी कुछ वस्तुऐं छूट गई थी वे सब उसे फिर उसी अवस्था में मिल गईं। अस्तु वह उन्हें लेकर पिता के पास चला। जब नगर थोड़ी दूर रह गया तो गश्तास्प ने अपने सभासदों को उसके स्वागत के हेतु भेजा और जब वह निकट आ गया तो स्वयं भी गया और अपने पुत्र को आशीर्वाद देकर राजसभा में ले गया और निश्चित सिंहासन पर सम्मानपूर्वक उसे बिठा कर एक रंग-मंच बनाने की आज्ञा दी जिससे इस विजय के उपलक्ष में बड़ा भारी उत्सव मनाया गया।

इस सभा में गश्तास्प ने स्वयं अपने हाथ से पुत्र को मदिरा दी और स्वयं भी पी। मदिरा का रंग कुछ जमने पर उसने अस्फ़न्दन्दयार से साप्ताहिक मार्ग तथा अर्जास्प की हत्या का वृतान्त पूछा। राजकुमार ने विनीत स्वर में कहा "मद्यप की बातों पर लोग विश्वास नहीं करते अतः कल मैं आप को सम्पूर्ण वृतान्त कह सुनाऊँगा।"

दूसरे दिन पुत्र के वीरता-पूर्ण कार्य कलाप से अवगत हो गश्तास्प ने उसे सीस्तान जाकर तथा रुस्तम को बन्दी कर लाने का आदेश किया। पहिले तो अस्फ़न्दयार ने इसे अस्वीकार किया परन्तु फिर पिता तथा अन्य लोगों के समझाने से वह सहमत हो गया। गश्तास्त ने किताबून

के पास जाकर यह सब बातें कहीं जिन्हें सुनकर वह रोने लगी और अस्फन्दयार के आने पर बोली "रुस्तम से युद्ध करना अपनी मृत्यु को आह्वान करना है" परन्तु राजकुमार ने उत्तर दिया "वचन देकर उससे मुँह मोड़ना वीरों का धर्म नहीं है, अतः अब मैं सीस्तान अवश्य जाऊँगा।"

अस्फ़न्दयार का सीस्तान-प्रयाण

दूसरे दिन प्रातःकाल अस्फ़न्दयार अपने पिता से बिदा होने गया। गश्तास्प ने उसे सेना तथा बहुत-सा धन देकर बिदा किया। जब वह चलने को उद्यत हुआ तो वह ऊँट जो सब से आगे था बैठ गया। लोगों ने अनेक प्रयत्न किये, पर वह टस से मस न हुआ। अन्ततः अस्फ़न्दयार ने उसे अपनी तलवार घाट उतार दिया। इस घटना का लोगों के हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ा, वे सब इसे भारी अपशकुन मानकर कहने लगे कि हम लोगों का सीस्तान न जाना ही श्रेयस्कर है क्योंकि कार्य में बाधा तथा भीषण हानि की सम्भावना है। परन्तु अस्फ़न्दयार ने एक न सुनी। और आगे बढ़ा।

जब वह लोग सीस्तान के निकट पहुँचे तो अस्फ़न्दयार ने अपने पुत्र बहमन को रुस्तम को बुलाने के निमित्त भेजा। जब बहमन सीस्तान पहुँचा और ज़ाल को उसके आने की सूचना मिली तो बड़े सद्भाव एवं नम्रता के साथ आकर उसका अभिवादन किया और आज्ञा चाही। इस पर बहमन ने कहा "मेरे पिता सीस्तान से बाहर नदी किनारे उपस्थित हैं और उन्होंने रुस्तम को बुला भेजा है।

बहमन का अभिप्राय जान कर ज़ाल ने जाकर रुस्तम को सूचित किया। रुस्तम ने पिता से पूछा "अब क्या कर्त्तव्य है।" ज़ाल ने उत्तर दिया "तू जाकर अस्फ़न्दयार को सम्मान पूर्वक यहाँ ले आ और अपनी शक्ति भर उसका आदर-सत्कार कर।" पिता के वचन सुन कर रुस्तम बाहर

आया और बहमन के साथ हो लिया। जब वे दोनों नदी के निकट पहुँचे तो बहमन उसे वहीं ठहरा कर स्वयं पिता को रुस्तम के आगमन की सूचना देने के हेतु चला गया।

जब असफ़न्दयार को उसके आगमन की सूचना मिली तो वह घोड़े पर सवार होकर रुस्तम के निकट आया। ज्यों ही रुस्तम ने उसे देखा त्योंही घोड़े पर से उतर कर उसके सम्मुख नत-मस्तक हो कहने लगा "हे राजकुमार! ईश्वर करे जब तक सूर्य तथा चन्द्रमा हैं तब तक आप राज्य करें और जो प्राणी आप की अधीनता स्वीकार न करे उसका ईश्वर नाश करे। आप के दर्शन कर मैंने अपने नेत्रों को सफल किया।"

रुस्तम की स्वामि-भक्ति तथा विनीत भाव को देख असफ़न्दयार अपने घोड़े से उतर पड़ा और रुस्तम को छाती से लगा कर कहने लगा "हे वीर! मैं तेरे साहस तथा वीरता की सराहना करता हूँ। ईश्वर तेरे इन भावों की सदा वृद्धि करे। तू जिस प्राणी का सहायक हो जाता है उसे फिर संसार के किसी जीव की आशंका नहीं रहती।" असफ़न्दयार की इन बातों को सुन कर उसने फिर अपना मस्तक झुकाया। और बोला "हे राजकुमार! आप इस दीन की झोपड़ी में चल कर जो कुछ रूखा सूखा मिले उसे सहर्ष स्वीकार कर कृतार्थ कीजिये," परन्तु राजकुमार इसे अस्वीकार कर के रुस्तम ही को अपने डेरे में ले गया।

डेरे पर पहुँच कर असफ़न्दयार ने कहा "राजाज्ञा यह है कि मैं तुम्हें बन्दी कर के ले जाऊँ। अब कहो तुम्हारा क्या विचार है। मेरी इच्छा है कि मैं तुम्हें पिता जी के सम्मुख उपस्थित कर के बन्धन-मुक्त कर दूँ पर यदि तेरी यह इच्छा नहीं है तो तू अपने घर जा।" यह सुन कर रुस्तम ने कहा "यदि आप दास के झोपड़े पर चले चलें तो इस में हानि ही क्या है फिर वहाँ जो भी आज्ञा होगी मैं पूर्ण करूँगा।"

असफ़न्दयार ने उत्तर दिया "हे वीर, तुम जानते हो कि यदि तुम्हारे यहाँ जाकर मैं तुम्हारा अन्न-जल ग्रहण कर लूँगा तो फिर भला

यह किस प्रकार सम्भव होगा कि मैं तुम्हें बन्दी करूँ और यदि मैं तुम्हें बन्दी करके न ले जाऊँगा तो फिर पिता जी को क्या मुँह दिखाऊँगा।" रुस्तम ने उत्तर दिया "फिर तो मैं भी इस अवस्था में आपका नमक नहीं खा सकता।" अस्फन्दयार ने प्रस्ताव किया "अच्छा आओ तुम स्वयं भी मदिरा पियो और मुझे भी पिलाओ।" सारांश यह कि रुस्तम मदिरा पी-पिला कर वहाँ से बिदा हो घर आया। चलते समय वह भी कह गया कि मैं इस पर अपने पिता की अनुमति लेकर कल फिर आऊँगा और जो निश्चय होगा वह आप से कह सुनाऊँगा। इस पर अस्फन्दयार ने कहा "यदि तुम्हें न आना हो तो किसी अनुचर द्वारा उत्तर भेज देना।"

रुस्तम के चले जाने के पश्चात् अस्फन्दयार के एक साथी ने कहा "आपने चिड़िया को हाथ में पाकर उसे फिर छोड़ दिया यह अच्छा नहीं किया।" यह सुनकर उसने कहा "वह कल फिर आयेगा। यदि तेरी यही इच्छा है तो मैं उसे बन्दी कर लूँगा।"

इधर जब रुस्तम जाल के पास पहुँचा और सब समाचार कह सुनाया तो उसने कहा कि किसी बात का भय न करना, क्योंकि अस्फन्दयार अपना ही राजकुमार है। अस्तु, दूसरे दिन सवेरे रुस्तम फिर असफन्दयार के निकट गया और राजकुमार स्वयं आकर उसे सम्मान-पूर्वक ले गया। थोड़ी देर पश्चात् रुस्तम ने कहा "राजकुमार चलिये, मेरे पिता ज़ाल ज़र आप की प्रतीक्षा कर रहे होंगे।" इस पर उसने कहा "मैं वहाँ नहीं जाऊँगा और तुम भी यहीं रहो और मेरे साथ बन्दी होकर गश्तास्प के सम्मुख चलो।"

रुस्तम ने उत्तर दिया "हे राजकुमार, तुम इसी प्रकार सर्वदा मेरे ऊपर कृपा करते रहो। मैं तुम्हारे बहुत काम आऊँगा और सदा तुम्हारी सेवा करता रहूँगा। मैंने बहुत से पराक्रम-पूर्ण कार्य्य किये हैं, मैंने अनेक बड़े-बड़े योद्धाओं को नीचा दिखाया है। मैं संसार में सर्वाधिक

बलवान तथा शक्तिशाली योद्धा समझा जाता हूँ। यही तक नहीं मैं ईरान के शासकों का संरक्षक हूँ। मैंने शत्रुओं को नष्ट कर विद्रोहियों का मद-मर्दन किया है। इस कारण मुझे आपके सम्मुख दृष्टि नीची करनी होती है अन्यथा मुझे आपका कोई भय नहीं है।"

रुस्तम की अन्तिम बात को सुन कर असफन्दयार क्रोध से तमतमा गया और चाहा कि अपनी तलवार से रुस्तम पर आघात कर दे, पर फिर कुछ सोच समझ कर तथा धैर्य धारण कर हँसा और बोला "तूने पूर्व में कठिन परिश्रम किया अतएव अब तू बैठ कर मदिरा पान कर आ और मेरी दाहिनी ओर बैठ जा।" इस पर रुस्तम ने हँस कर कहा कि हम बायें पर ही ठीक बैठे हैं। फिर बिना किसी हिचक के उठकर वह निर्दिष्ट स्थान पर जा बैठा।

तदुपरान्त चीन का सेनापति क्रोधित होकर बोला 'रुस्तम मैंने सुना है कि ज़ाल ज़र देव की संतान है। उसके काले शरीर, श्वेत मुख तथा बालों को देख कर साम निराश होकर उसे वन में डाल आया था जिससे हिंसक पशु उसे भक्षण कर लें। इतने में एक सीमुर्ग़ वहाँ पर आया और उसके घृणित मुख को देख कर उसने भी उसे न खाया, प्रत्युत अपने घोंसले में बच्चों के पास ले जाकर रक्खा तथा मांस खिला कर उसका लालन-पालन किया। जब बड़ा हुआ तो फिर सीस्तान लौटा और साम के और कोई पुत्र नहीं था इस कारण उसने उसे ग्रहण किया। उसने युवा होकर ईरान के शासकों के यहाँ चाकरी करके अपना जीवन निर्वाह किया। ऐसे पिता की संतान होकर भी तू यहाँ आकर बढ़-बढ़ कर बातें मारता है।"

असफन्दयार की यह नीचता भरी बातें सुन कर रुस्तम ने क्रोधित होकर कहा "राजाओं को ऐसी बातें शोभा नहीं देतीं। तू तो अभी निरा अबोध बालक है और बुद्धिहीन है। तेरा बाप भली-भाँति जानता है कि ज़ाल साम ही का पुत्र है और साम का पिता नरीमान होशंग का पुत्र था, जिसके सम्मुख सिंह भी दुम हिलाते थे। ऐ राजकुमार, तू

भली भाँति जान ले कि हममें और तुम में कोई अन्तर नहीं है क्योंकि मेरी माता मेहराब शाह की पुत्री हैं जो कि एक विख्यात राजा हो गया है और ज़ोहाक उसी का निकट सम्बन्धी है। समस्त ईरान निवासियों ने कई बार मुझे राजमुकुट पहनाना चाहा परन्तु मैंने स्वयं ही उसको स्वीकार न किया, अन्यथा जो मुकुट कि तुम्हारे पिता के शिर पर सुशोभित है उसके तुम लोगों को स्वप्न में भी दर्शन न होते।"

रुस्तम कहता ही गया—"इसके अतिरिक्त यदि तुझे अपनी वीरता पर अभिमान है तो बता कि तूने कौन कौन से पराक्रम किये हैं। केवल अजीरिप को मार लेने पर तुझे इतना गर्व हो गया है कि वीरता में मेरी बराबरी करता है। सुन, मैंने अनेक शासकों एवं देवों को युद्ध में परास्त कर यमपुरी भेज दिया, सप्तदिवस के मार्ग को सर्व आपत्तियाँ विहीन कर सर्वदा के लिये सर्व सुगम बना दिया। मैंने उन श्वेत देव तथा अगवान देव को मारा जिनका आतंक समस्त संसार में छाया हुआ था। तदन्तर मैंने माज़िन्दरान के शासक को मटियामेट करके काऊस, गेव, गस्तहम तथा तोस को परलोक प्रयाण कराया। तूरान के शासक अफरासियाब को कई बार युद्ध में पराजित किया जिसके सम्मुख संसार का कोई योद्धा खड़ा न हो सकता था। मैंने ही चीन के ख़ाक़ान को बन्दी किया। अस्तु, हे राजकुमार, तुम मुझसे युद्ध करने के विचार को अपने हृदय से निकाल दो, अन्यथा अकारण ही अपने प्राण गँवाओगे।"

रुस्तम की उपर्युक्त बातें सुनकर अस्फन्दयार को इतना क्रोध आया कि उसने रुस्तम का शिर धड़ से पृथक कर देना चाहा, परन्तु फिर यह विचार कर कि वह इस समय मेरा अतिथि है और स्वयं ही यहाँ पर आया है उसने कहा "मैंने तो तेरे साथ नम्रता से बात की पर तू अग्नि की भाँति क्यों प्रज्ज्वलित हो उठा। मैं मानता हूँ कि तू इस समय आकाश के समान उच्च है, परन्तु फिर भी दास है। तूने यह सब मान-मर्यादा केवल ईरान की चाकरी करके ही पायी है। तू अहर्निशि दासता ही करता रहा, पर मैंने की है पैग़म्बरी। मैंने ईरान

से रूम तथा तूरान से चीन तक एक नवीन धर्म का प्रचार किया है परिणाम स्वरूप बहुत से मनुष्यों को अग्नि का उपासक बना डाला। इसके अतिरिक्त मैंने बड़े-बड़े योद्धाओं को नीचा दिखाया है। हे वीर! ज़र रुई के सम्मुख माज़िन्दरान का कोई मूल्य नहीं और न मेरे सप्त दिवस वाले मार्ग की बराबरी तेरा सप्त दिवस वाला मार्ग ही कर सकता है" यह सुनकर रुस्तम ने उत्तर दिया "जब तू उस विकट मार्ग से गया था उस समय तेरे साथ दस हजार सेना थी, पर मैं था एकदम अकेला। मेरी यात्रा में रख्श तथा गदा के अतिरिक्त और कोई मेरा सहायक नहीं था। उस पर मैंने अकेले ही उन नर-पिशाच देवों को यम-पुरी भेज दिया। यदि कहीं मेरे स्थान पर तू तथा तेरी दस हज़ार सेना होती तो निश्चय ही देव तुझे तथा तेरी सेना की चटनी बना डालते या फिर तू शिर पर पैर रख कर भागता।

"अब मैं कहाँ तक बताऊँ। संसार स्वयं ही जानता है कि जिस समय कैखुसरू ने लहरास्प को राजगद्दी देनी चाही थी उस समय ईरान का कोई प्राणी उससे सहमत न था। सब की यही हार्दिक इच्छा थी कि फरेबुर्ज़ उसका उत्तराधिकारी हो परन्तु वह मैं ही था जिसने सबकी इच्छा के विरुद्ध लहरास्प को राज्य दिलाया। तू लहरास्प के राजमुकुट धारण करने अथवा गश्तास्प की नवीन प्रथाओं पर न फूल। यदि तेरी तथा तेरे पिता की यह इच्छा है कि मुझे बन्दी करें तो इसका ध्यान स्वप्न में भी न कर क्योंकि अभी तक कोई ऐसा नहीं जन्मा है जो मुझे बन्दी कर सके।

"मैंने यहीं जन्म लिया है, और तब से इसी संसार में बढ़कर वृद्ध हो गया हूँ। परन्तु आज तक मैंने किसी के मुख से ऐसे नीच तथा भ्रष्ट वचन नहीं सुने। एक बार मैंने अपने पुत्र के सबसे बड़े शासक कैकाऊस के सामने अवश्य क्रोध किया था तथा कुछ नीच ऊँच कह कर उसकी सभा को त्याग दिया था। उस काल में उसकी सभा में बड़े-बड़े योद्धा थे परन्तु किसी का साहस नहीं हुआ कि हस्तक्षेप करे। मेरे चले आने

पर कैकाऊस ने मुझे फिर बुला कर गले से लगाया और मेरा अत्यधिक सम्मान किया। इस कारण मैं कहता हूँ कि तू मेरे साथ युद्ध करने का विचार न कर।"

रुस्तम की उक्त बातें सुन कर अस्फन्दयार ने कहा—"रुस्तम, तू इस प्रकार गर्व में न फूल और न कैकाऊस की प्रशंसा कर। तुझे विदित होना चाहिए कि जितना बल मुझमें है उसका पासंग भी कैकाऊस में नहीं था। यदि तुझे विश्वास न हो तो आ पञ्जा लड़ाकर परीक्षा करले। इतना कह कर उसने अपना पञ्जा बढ़ाया।"

रुस्तम उसका यह कार्य देख कर चकित हो गया, और बोला—"हे राजकुमार, तुम्हारे साथ पञ्जा मिलाना असंगत है।"

रुस्तम को इस प्रकार पीछे हटते देख कर अस्फन्दयार ने हँसकर कहा "सुन, आज मुझे तेरे बल का ज्ञान हो गया। आज तू मेरा अतिथि है, अतएव मदिरा पान कर और घर को लौट जा। मैं कल तेरे यहाँ आकर सहज ही में तुझे बन्दी करके गश्तास्प के पास लेचलूँगा। पश्चात् तुझे निर्दोष सिद्ध कर तुझे बन्धन-मुक्त कर दूँगा।"

अस्फन्दयार की इन अभिमान पूर्ण बातों को सुनकर रुस्तम ने कहा—"तू एक वीर है, फिर भी मेरे सामने तू अभी बालक ही है। अभी तुझे वीरों की तलवारों तथा गदाओं की हवा भी नहीं लगी। कल जिस समय तू रणक्षेत्र में आयेगा उस समय तुझे घोड़े की पीठ पर से उठाकर जाल के निकट ले जाऊँगा और फिर एक रत्न-जटित सिंहासन पर बिठाल कर तथा बहुत सा धन-द्रव्य तेरी भेंट कर तथा राज मुकुट पहना कर तुझे गश्तास्प के निकट ले जाऊँगा, और राजगद्दी तुझे दिला कर स्वयं तेरी रक्षा किया करूँगा। इस प्रकार जब तुम राजा बनोगे और मैं तुम्हारा दास तो फिर संसार में किसी का साहस न होगा कि तुम्हारे विरोध में खड़ा हो सके।"

इस पर अस्फन्दयार ने कहा "तू इस प्रकार की बकझक कब तक करता रहेगा। पहले कुछ भोजन कर ले फिर जब तेरी चेतना लौट आवे

सब बात करना।" यह कह कर उसने भोजन मँगाया, जिसे रुस्तम ने एक ही बार में चट कर डाला। इसके पश्चात् उसने मदिरा पीना आरम्भ किया और जो पात्र उसके सम्मुख आया उसे रिक्त कर दिया। पश्चात् उसने कहा "इतने से क्या होता है भला इतनी तो और मंगा, मेरे कानों पर जूँ भी तो रेंगे। इस पर असफन्दयार ने एक घड़ा मँगाया जिसमें एक मन मदिरा आती थी उसके आते ही रुस्तम ने उसे भी जल की भाँति पीना आरम्भ कर दिया। उसके खान-पान के इस क्रम को देख कर सभी चकित हो रहे। उसकी यह अवस्था देख कर असफन्दयार ने कहा "अब तू यहाँ से जाकर ज़ाल से परामर्श करना। यदि वह तेरे बन्दी होने पर सहमत हो जाँय तो निश्चय जान कि तेरा कुछ भी अनिष्ट न होगा, अन्यथा कल तू युद्ध के लिये तैयार होकर आना।"

जब रुस्तम ने असफंदयार की उपर्युक्त बातें सुनीं तो गरज कर बोला "अच्छा अब तुम भी अपने मंत्रियों से परामर्श कर लो। यदि उनकी अनुमति हो तो तुम यहाँ से मेरे घर चलो, फिर मैं वहाँ से बिना बन्दी हुए तुम्हारे साथ चलूँगा।"

इसके उत्तर में असफन्दयार ने कहा "जो कुछ तू कहता है मैं उसे स्वीकार करता, परन्तु विवश हूँ क्योंकि ऐसा करने से पिता जी यह समझेंगे कि मैं तुमसे डर गया और इसी कारण तुझ को बन्दी न कर सका। फिर भला मैं ऐसा काम क्यों करने लगा, जिस में मेरी मान-हानि की आशंका हो। मैं तुझ से तनक भी भयभीत नहीं हूँ, क्योंकि अब मुझे ज्ञात हो गया है कि तेरा बन्दी करना नितांत सहज है।"

असफन्दयार के इस विचार पर रुस्तम ने कहा "जिन-जिन वीरों से मैं युद्ध कर चुका हूँ तू उनके समान नहीं। मुझे तेरे साथ युद्ध करने में अपने प्राण का भय तो नहीं है, फिर भी मैं यह डरता हूँ कि यदि युद्ध-स्थल में तुझे मेरे हाथों प्राणों की क्षति उठानी पड़ी तो फिर मैं किस मुँह से गश्तास्प के निकट जाऊँगा। अतः भली भाँति सोच-समझ लो कि मेरे साथ युद्ध करने में लाभ है अथवा सन्धि करने में। क्योंकि

अब तू युवावस्था को प्राप्त हुआ है और राज्य का उत्तराधिकारी भी बना है। इसके अतिरिक्त तू ने बड़े-बड़े महत्वपूर्ण कार्य्य भी किये हैं। तेरे बल पराक्रम को देख कर तेरे पिता को अब तेरी ओर से शंका होने लगी है, यही कारण है कि उसने तुझे मेरे बन्दी करने के हेतु भेजा है क्योंकि वह जानता है कि तू युद्ध में मेरे हाथों मारा जाएगा और इस युक्ति से तेरी ओर से निःशंक हो कर वह राज्य करेगा। तू मेरे साथ भिड़ कर एक बालक की हत्या के दोष से मुझे लांछित न कर।"

रुस्तम की बात सुन कर उसने उत्तर दिया, "तू इस प्रकार मुझे फुसलाने का प्रयत्न न कर। मैं स्वयं अपना ऊँच-नीच समझता हूँ। मैं तुझे बन्दी करके अवश्य ले जाऊँगा। अथवा कल प्रातःकाल तुझे यमपुरी का मार्ग दिखाऊँगा। तू अपने बाप और भाई को भी लेता आना जिससे तेरी मृत्यु के पश्चात् वह तेरे नाम को रोएँ।" रुस्तम ने कहा "जो प्राणी काल के वश हो जाता है उसे समझा कर किसी भी प्रकार सुमार्ग पर लाना असम्भव है। अस्तु अब मैं जाता हूँ और कल प्रातःकाल लोग स्वयं ही इस बात का निर्णय कर लेंगे कि किस का पिता विलाप करता है।"

उपर्युक्त बातें कह कर रुस्तम ने अपने घर लौट कर ज़ाल से सब बातें कह सुनायीं और कहा "अब मैं कल उससे युद्ध करूँगा।" इस पर ज़ाल ने उसे बहुत ऊँच नीच समझाया परन्तु उसने एक न मानी और कहा "उसने मुझे बहुत से कटुबचन कहे हैं और यह भी कहा है कि तू देव के वीर्य्य से है, न कि ज़ाल के। अस्तु अब मैं कल उससे अवश्य युद्ध करूँगा।" इस पर ज़ाल रोने लगा और कहने लगा "यदि तेरा अनिष्ट होगा तो फिर दोनों का ही पतन होगा और यदि वह मारा गया तो सदैव के लिये कलंकित होकर कयानी वंश का शत्रु बन कर रहना पड़ेगा।"

इस पर रुस्तम ने कहा "धीरज रखिए मैं युद्ध से उसे बन्दी करके आप के सम्मुख उपस्थित करूँगा और फिर उसे राज-पाट का उत्तरा-

धिकारी बना कर सदा उसका दास बना रहूँगा।" रुस्तम की यह अभिमान-पूर्ण बात सुन कर ज़ाल ने हँस कर कहा "हे पुत्र! तू इसका स्वप्न में भी ध्यान न कर कि तू उसे घोड़े की पीठ पर से उठा लेगा। ध्यान रहे कि जिसने चीन के शासक को पराजित किया, फिर भला संसार में किसकी शक्ति है जो उसकी समानता कर सके। अस्तु इसका ध्यान हृदय में न ला कि तू ही विजयी हो सकता है।"

रुस्तम तथा अस्फ़न्दयार का युद्ध तथा अस्फ़न्दयार का वध

दूसरे दिन जब रुस्तम ने अस्फन्दयार के साथ युद्ध करने के लिए कवच धारण किया तो ज़ाल ने स्वयं उसकी गाँठ बाँधी और ज़वारा को सेना का संरक्षक नियुक्त करके कहा कि देखो रुस्तम की ओर से असावधान न होना। तत्पश्चात् उनको बिदा करके स्वयं ईश्वर से प्रार्थना करने लगा "हे दयामय! अब तेरे अतिरिक्त मेरा अन्य कोई सहायक नहीं है अस्तु मैंने तेरे ही भरोसे उसे युद्ध क्षेत्र में भेज दिया है।"

पिता से बिदा हो कर जब रुस्तम आगे बढ़ा तो उसने ज़बारा से कहा "तुम सेना लेकर मुझ से दूरी पर चलो। मैं अकेला ही उससे युद्ध करूँगा।" ज़बारा रुस्तम के आदेशानुसार कुछ दूरी पर पीछे रहा। जब तसवीन ने रुस्तम को अकेला देखा तो समझा कि वह सन्धि करने के लिये आया है अस्तु उसने अस्फन्दयार से कहा "अब तुम रुस्तम से सन्धि कर लो और उसे बिना हाथ-पैर बाँधे ही पिता के पास ले चलो।" परन्तु काल-वश अस्फन्दयार ने उसे डाँटा और कहा "तुम कवच लाओ, मैं उससे युद्ध अवश्य करूँगा।" वह विवश होकर कवच लाया और अस्फन्दयार युद्ध के आयुधों से सुसज्जित होकर तसवीन से बोला "देखो रुस्तम अकेला ही आया है, अतः तुम भी दूर से हम दोनों का युद्ध देखते रहो और जब मैं संकेत करूँ तो सेना-सहित उस पर कट पड़ो। उसे इस प्रकार समझा कर तथा शबरंग पर चढ़ कर अस्फन्दयार मैदान में आया।

उसे देख कर रुस्तम ने कहा "भाई हमारे पास सेना कम है अत-एव आओ हम तुम दोनों निपट लें।" इस पर अस्फन्दयार ने भी कहा "मैं भी नहीं चाहता कि सैनिकों का रक्त बहे, अस्तु मैं तुम्हारी बात मानने को उद्यत हूँ।" तदुपरान्त रुस्तम ने कहा "साथ ही यह भी ध्यान रहे कि हमारे और तुम्हारे युद्ध के बीच कोई हस्तक्षेप न करे। इस प्रकार वचन-बद्ध हो कर दोनों ने शस्त्र उठाये।

प्रथम दोनों ने भाले थामे और बहुत देर युद्ध करने के बाद जब भाले बेकाम हो गये तो दोनों ने तलवारें सँभाली। जब तलवारें भी टूट गईं तो फिर गदा की बारी आई। लड़ते-लड़ते गदा भी जब दोनों के हाथ से छूट गई तो दोनों ने एक दूसरे का पट पकड़ा और लगे बल प्रयोग करने। बहुत देर तक यही होता रहा परन्तु कोई भी घोड़े की पीठ से न टल सका। जब दोनों वीर तथा घोड़े पसीने में तर हो गये तो एक दूसरे से पृथक् हो कर दम मारने लगे।

इधर युद्ध देख कर ज़वारा के रक्त ने जोश मारा तो रण-क्षेत्र में आकर बोला "अब अपनी सेना को भेज कर ज़ाबुल की सेना के रण-कौशल की बान भी तो देखो।" उसकी यह बात सुन कर अस्फन्दयार का पुत्र नौशावर सामने आया और बोला "जिसका जी चाहे वह आ जाय।" इतने में रुस्तम का शिष्य ईवाम उससे युद्ध के लिये आ धमका, परन्तु तुरन्त ही मारा गया। उसके मरते ही ज़वारा मैदान में आया और बोला "ले सम्भल जा क्योंकि मैं ईवाम नहीं हूँ।" इतना कह कर उसने एक गदा मारी। गदा के लगते ही प्रतिपक्षी धराशायी हो गया।

नौशावर के धराशायी होते ही उसका दूसरा भाई मेहरयोश रण-क्षेत्र में आया। उसे देखते ही फ़रामर्ज़ सामने आया और उसे तुरन्त यमपुरी की राह दिखा दी। उसके मरते ही बहमन ने जाकर अस्फन्दयार से कहा "शत्रुओं ने बहुत से ईरानियों का बध कर डाला और साथ ही आप के दो पुत्र भी मारे गये हैं। बहमन की यह बात सुन कर

असफ़न्दयार के क्रोध की सीमा न रही। उसने रुस्तम से पूछा "क्या यही वीरों का कर्तव्य है।" उसने वृत्तान्त जो सुना तो लाज के कारण उसकी आँखें नीची हो गईं। और उसने कहा "अपने भाई तथा पुत्र को मैं अभी आपके सम्मुख उपस्थित करता हूँ। वचन तथा नियम भंग करने के दोष में आप स्वयं उन्हें अपने हाथों मारें।"

असफ़न्दयार ने कहा "मैं उन दोनों का प्रतिशोध तुम्हारा बध कर के लूँगा।" इतना कह कर दोनों ने अपने-अपने धनुष चढ़ाये। रुस्तम ने कई बाण चलाये, परन्तु सफल एक भी न हुआ। इधर असफ़न्दयार के बाणों ने रुस्तम तथा रख्श को घायल कर दिया। जब रुस्तम ने रख्श को इस प्रकार घायल देखा तो वह उस पर से उतर पड़ा और वह घर की ओर चला गया। जब ज़वारा ने जो भाई की यह दुर्दशा देखी तो वह उसे उस स्थान से दूर ले गया।

रुस्तम को जाते देख कर असफ़न्दयार ने कहा "ऐ रुस्तम अब देवों को धराशायी करने वाली शक्ति कहाँ गई, जिस पर तुझे इतना अभिमान था, और कहाँ गई तेरी वह विष से बुझी तलवार जिस की प्रशंसा में तू ने आकाश-पाताल एक कर दिया था। इतने में ज़वारा रुस्तम को अपने घोड़े पर बिठा कर और स्वयं पैदल होकर असफ़न्दयार के निकट गया, और बोला "आ, मैं तुझ से युद्ध करने को उद्यत हूँ।" असफ़न्दयार आगे बढ़ा और चाहता था कि उससे युद्ध करें कि इतने में रुस्तम आगे बढ़ आया और बोला "आ, मैं फिर युद्ध के हेतु प्रस्तुत हूँ। उसकी बात सुन कर असफ़न्दयार ने कहा "तेरी दयनीय अवस्था का मुझे पूरा ज्ञान है, एड़ी से चोटी तक तेरा शरीर क्षतविक्षत हो गया है।" यह सुन कर रुस्तम ने उत्तर दिया "रक्त तो अवश्य बह रहा है पर इस से मैं क्षीण तो नहीं हो गया हूँ। अब तो संध्या हो गई है अतएव कल मैं फिर तेरे साथ युद्ध के हेतु उपस्थित होऊँगा।" तत्पश्चात् दोनों अपने अपने स्थान को लौट गये।

युद्ध बन्द होते ही अस्फ़न्दयार अपने पुत्रों के शव के पास जाकर फूटफूट कर रोया। तत्पश्चात् उसने रुस्तम की शक्ति का वर्णन करते हुए युद्ध का सम्पूर्ण वृत्तान्त अपने पिता को लिख भेजा। साथ ही अपने दोनों पुत्रों के शव शरीर भी उनके पास भेज दिये। पशोतन से वह बोला "रुस्तम वास्तव में लोहे का बना है। मैंने अपने सभी शस्त्रों के प्रहार उस पर किये परन्तु सब निष्फल। अन्ततः बाणों द्वारा मैं उसे ऐसा घायल कर सका हूँ कि आज रात ही को वह चल बसेगा। यदि जीवित बच जाय तो इसे यह आश्चर्य ही समझना चाहिए।"

इधर तो यह बातें हो रही थीं, उधर जब रुस्तम अपने घर पहुँचा और ज़ाल ने जो उसकी यह दुर्दशा देखी तो रोने लगा और कहा "इस वृद्ध अवस्था में यह भी देखना बदा था! इसीलिये तो अब तक जीता हूँ।" इतने में घर के सभी लोग वहाँ आ गये और उसे ऐसी बुरी तरह घायल देख कर रोने लगे तदुपरान्त ज़ाल ने उसके घावों पर औषध लगा कर पट्टियाँ बाँध दीं। जब रुस्तम का चित्त ठिकाने हुआ तो कहने लगा "अस्फ़न्दयार की श्रेणी का वीर तो हम ने आज तक नहीं देखा क्योंकि जितने शस्त्र हमने उस पर चलाये वे सब निष्फल गये। वह तो कहिये संध्या हो गई, नहीं तो वह आज मेरा अन्त ही कर डालता। अब मुझ में इतनी शक्ति नहीं है कि उससे युद्ध कर सकूँ। अब तो यही जी चाहता है कि किसी ऐसे स्थान पर भाग जाऊँ जहाँ वह वीर मेरा पता न लगा सके।"

रुस्तम की इन बातों को सुन कर ज़ाल ने कहा "यदि तुम चले जाओगे तो वह यहाँ आकर हम लोगों की दुर्दशा कर डालेगा और सब को बन्दी कर के ले जायेगा। दूसरे बरज़ू भी ग़ोर में है। इतना समय भी तो नहीं है कि उसे इससे युद्ध करने के निमित्त बुला सकूँ। अब केवल एक ही साधन शेष रह गया है वह है सीमुर्ग़। मैं अभी उसे बुला कर अस्फ़न्दयार को पराजित करने का उपाय पूछता हूँ।"

तदुपरान्त वह एक ऊँचे स्थान पर गया और उसने सीमुर्ग़ का पंख जलाया। पंख जलते ही सीमुर्ग़ आ पहुँचा। और उसने ज़ाल से अपने बुलाने का कारण पूछा। ज़ाल ने आद्योपान्त सब वृत्तान्त कह सुनाया जिसे सुन कर सीमुर्ग़ ने रुस्तम तथा रख़्श को बुला कर तथा उनका रक्त पीकर अपना पंख उनके घावों पर रगड़ दिया, फलतः वे दोनों फिर स्वस्थ तथा शक्ति-सम्पन्न हो गये। इसके अनन्तर ज़ाल ने अस्फ़न्दयार पर विजय प्राप्त करने की युक्ति पूछी। सीमुर्ग़ ने कहा "इस मनुष्य से पार पाना असम्भव है, क्योंकि इसे मारने वाले ने एक प्रकार से अब तक जन्म ही नहीं लिया। अब रहा मैं सो तुम्हें विदित ही हो चुका है कि इसने मेरे साथ के एक सीमुर्ग़ को किस प्रकार मारा है; अतः मेरा इससे युद्ध करना असम्भव है और मेरी यही अनुमति है कि रुस्तम यहाँ से कहीं चला जाय।"

ज़ाल ने जब सीमुर्ग़ की यह बात सुनी तो कहा "यदि रुस्तम यहाँ से कहीं दूसरे स्थान पर चला जायेगा तो वह नीच अस्फ़न्दयार हम लोगों की दुर्दशा कर डालेगा, इस कारण अब आप कोई युक्ति ऐसी बताइए जिससे इस नीच का अन्त हो जाय। विवश होकर सीमुर्ग रुस्तम को नदी के पार ले गया और एक वृक्ष दिखा कर बोला "तू इस वृक्ष की एक डाल काट कर लेजा और इसे सीधा करके आग पर जला, फिर इसके द्वारा एक दो फल का बाण बना कर कल भोर होते ही युद्ध स्थल को प्रयाण कर और युद्ध के समय उस बाण का प्रहार कर; पर तू उसके प्राण मत लेना क्योंकि उसके घातक को अन्त में बड़ी विपत्ति में पड़ना पड़ेगा; अतएव तू उसको अन्धा भर कर देना ऐसा करने से तुम को किसी प्रकार भी आपत्ति की आशंका न रहेगी। इस बाण का यह गुण है कि इसका चलाने वाला जिस स्थान का ध्यान कर इसे छोड़ेगा यह बाण उसी लक्ष्य पर जाकर लगेगा।"

सीमुर्ग़ की उपर्युक्त बातें सुन कर तथा उस डाल को लेकर रुस्तम घर वापिस आया और उस प्रकार से बाण बना कर पौ फटने के पूर्व ही

रण-क्षेत्र में जा धमका, और अस्फन्दयार को ललकारा "उठ, सवेरा हो गया। उठकर देख, रण-क्षेत्र में रुस्तम तेरी प्रतीक्षा कर रहा है।" जब रुस्तम के शब्द अस्फन्दयार के कान में पड़े तो वह उठ बैठा और पशोतन से बोला "कल रात को मैंने यह सोचा था कि वह रात-भर में यमपुरी की राह नापेगा। क्योंकि उसके शरीर में लगा प्रत्येक घाव संघातक था; परन्तु उसे जीवित देख कर मुझे आश्चर्य होता है। ज़रा जाकर देखो तो सही कि इस में सत्य कितना है।" आदेश पाते ही पशोतन घोड़े पर सवार होकर जब रुस्तम के सम्मुख पहुँचा तो उसे रुस्तम तथा रख्श को देख कर अचम्भा हुआ। पशोतन को चकित देख कर रुस्तम ने कहा "तुम आश्चर्य चकित क्यों हो गये, मेरे पास एक ऐसी औषध है जिस से कैसा भी संघातक घाव हो अच्छा हो जाता है। जाओ और अस्फन्दयार से कहो "रुस्तम तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है।"

जब पशोतन अस्फन्दयार के पास लौट आया तो उसने कहा "रुस्तम के शरीर पर घाव के कुछ भी चिन्ह शेष नहीं है। ईश्वर जाने उसके पास कौन सी औषधि है जिसके लगाते ही सारा घाव पुर जाता है। इसके अतिरिक्त वह तथा रख्श दोनों कल से अधिक हृष्ट-पुष्ट दीखते हैं। अतएव मेरी तो यही अनुमति है कि अब तुम उससे सन्धि कर लो, क्योंकि जब तुम्हारे तीक्ष्ण तथा विषैले बाणों से भी वह नहीं मरा तो इससे यही प्रतीत होता है कि आज वह तुम्हें अवश्य पराजित कर देगा।" पशोतन की ऐसी कायरता भरी बातें सुन कर अस्फन्दयार ने ने उसे डाँटा और फिर अपना कवच धारण करके रण-क्षेत्र में आ धमका।

वहाँ पहुँच कर तथा रुस्तम एवं रख्श को स्वस्थ देख कर वह बोला "हे रुस्तम! मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि तेरा पिता मायावी भी है, तभी तो उसने अपनी माया द्वारा तेरे सब घावों को अच्छा कर दिया। परन्तु इससे क्या? आज मैं तेरी वह गति बनाऊँगा कि ज़ाल अपने

मायाजाल को भूल जायेगा, और तेरे वियोग में रो-रो कर माथा दे देगा।" इस पर रुस्तम ने कहा "अब भी तेरा भला इसी में है कि तू सन्धि कर ले, और मेरे घर चल फिर मैं वहाँ से तेरे साथ गश्तास्प के निकट चलूँगा। वह चाहे मेरा बध कर डाले, या छोड़ दे, मुझे इसकी कोई चिन्ता नहीं।" परन्तु अस्फ़न्दयार के अस्वीकार करने पर उसने कहा "अब तू इसका ध्यान अपने मस्तिष्क से एकदम बाहर कर दे। आज तेरा कोई भी अस्त्र मेरे शरीर पर सफल न होगा और आज तू सर्वदा के लिये इस संसार के बन्धनों से मुक्त हो जायेगा।"

रुस्तम की इन बातों को सुन कर अस्फन्दयार हँसा और अपने धनुष को संधान कर तीक्ष्ण बाण छोड़ा। रुस्तम ने उस ओर तनक भी ध्यान न दिया और ईश्वर को हाथ जोड़ कर बोला "हे दयामय! अब इसकी हत्या का दोषी मुझे न बनाना। मैंने काल के वश हुए इस अस्फन्दयार को अनेक भाँति समझाया और प्रलोभन तक दिया कि वह युद्ध विरत हो सन्धि कर ले, परन्तु उसने मेरी तथा अन्य किसी की भी अनुमति न मानी और युद्ध करने पर, तुल गया है। अस्तु मेरा यह बाण उसे नेत्र-विहीन कर दें, इतना कह कर और कान तक धनुष को खींच कर उसने बाण को छोड़ दिया। द्वि फल वाले बाणों के लगते ही अस्फन्दयार के नेत्रों से रक्त की धारा बह निकली और वह अपना मुँह घोड़े की पीठ पर रख कर रोने लगा! उसे रोता देख कर रुस्तम ने कहा "हे वीर! कल तेरे तीक्ष्ण बाणों द्वारा जब मेरा शरीर क्षत विक्षत हो गया था तब मैंने न तो विलाप किया था और न अपना मुँह छिपाया।"

बहमन तथा पशोतन ने जो उसकी यह अवस्था देखी तो दौड़ कर वहाँ पर आये और उसे डेरे में ले जाकर नेत्रों की चिकित्सा यत्नपूर्वक की, पर सब व्यर्थ। इतने में ज़ाल तथा रुस्तम भी वहाँ जा पहुँचे। इनके पहुँचते ही अस्फन्दयार रो रोकर कहने लगा "हे रुस्तम! इसमें

तुम्हारा कोई दोष नहीं है। तुमने स्वयं मुझे समझाया, पर काल के वश होकर मैंने तुम्हारी बात न मानी; दूसरे जैसा तुमने कहा था वैसा ही हुआ। मेरे पिता ने राज्य के लोभ में पड़कर मुझे तुमसे युद्ध करने को भेजा, अब मेरी मृत्यु के पश्चात् वह अब निःशंक होकर राज्य-भोग करेगा।"

इतना कह कर अस्फन्दयार फूट-फूट कर रोने लगा। उसकी यह दीन दशा देख कर प्रत्येक उपस्थित प्राणी के नेत्र सजल हो गये। जब रोना धोना कुछ कम हुआ तो उसने कहा "रुस्तम अब मेरी यही एक अन्तिम इच्छा है कि मेरी मृत्यु के पश्चात् पशोतन मेरे शव को अपने साथ ईरान ले जाय और तुम मेरे पुत्र बहमन को अपने पास रख कर उसे रण-कौशल तथा युद्ध विद्या में दक्ष बनाओ।" इतना कहकर अस्फन्दयार एक दीर्घ निश्वास खींच कर सर्वदा के लिए इह-लीला से विरक्त हो गया।

अस्फन्दयार के मरते ही लोगों में हाहाकार मच गया। थोड़ी देर तक रोने-धोने के पश्चात ज़ाल अस्फन्दयार के कथनानुसार बहमन को अपने साथ लेकर सीस्तान की ओर चला और शेष ईरानी सेना ने शव को लेकर ईरान की ओर प्रस्थान किया। सीस्तान पहुँच कर जवारा ने कहा "सर्प को मार उसके बच्चे को दूध पिलाना असंगत और नीति विरुद्ध है क्योंकि ध्यान रहे कि अस्फन्दयार को मार कर एवं बहमन को अपने पास रख कर रण कौशल में निपुण करना आपके लिये हितकर नहीं है; क्योंकि पिता! यह निश्चय जानो कि शक्तिशाली होने के पश्चात् एक न एक दिन वह अपने पिता के घातक से अवश्य ही बदला लेगा।" जवारा की बात सुन कर रुस्तम ने कहा "चाहे कुछ भी हो परन्तु वचन हार कर अब मैं गत जीव की अन्तिम अभिलाषा को पूर्ण न करके उसे दुखी न करूँगा।" रुस्तम की उपर्युक्त बातों को सुन कर जवारा चुप हो रहा।

इधर पशोतन जब अस्फन्दयार का शव लेकर ईरान पहुँचा तो

ईरानियों में हाहाकार मच गया। ईरान का प्रत्येक निवासी मृतक की वीरता को याद करके रोता था, और गश्तास्प पर राज-पाट के लालच में पड़ कर पुत्र-हत्या का दोषारोपण करके कोसता था।

इसी बीच रुस्तम ने अपने पत्र-वाहक द्वारा गश्तास्प को लिख भेजा "मैंने आप के पुत्र का बध किया है, परन्तु वास्तव में मैं उसका दोषी नहीं हूँ, क्योंकि युद्ध के पूर्व हमने उन्हें प्रत्येक रूप का प्रलोभन दिया, स्वयं बन्दी होने का वचन दिया परन्तु उन्होंने एक बात भी स्वीकार न की। अन्त में मेरे हाथों से वह वीर-गति को प्राप्त हुये।"

जब गश्तास्प ने रुस्तम का पत्र पढ़ा तो बड़ा चकित हुआ, और इसमें निहित सत्य की परीक्षार्थ पशोतन से परामर्श किया। पशोतन ने रुस्तम द्वारा लिखी बात को सत्य बता कर तथा पूर्ण वृतान्त सुना कर उसे निर्दोषी प्रमाणित किया। तब गश्तास्प ने रुस्तम को लिखा "तुम बिलकुल निर्दोष हो, और तुम को मेरी ओर एकदम निश्चिन्त रहना चाहिए। परन्तु यह ध्यान रहे कि आवश्यकता होने पर तुम मेरी सहायता अवश्य करना।" जब पत्रोत्तर को रुस्तम ने पढ़ा तो बहमन को बहुत सी वस्तुएँ भेंट स्वरूप दे कर सम्मान के साथ विदा किया और वह ईरान पहुँच कर अपने बाबा के साथ सुख-पूर्वक रहने लगा।

ज़ाल के दासी पुत्र शग़ाद द्वारा रुस्तम का बध

एक बार ज़ाल अपनी एक दासी पर आसक्त हो गया और कुछ दिनों में वह गर्भवती हो गई और निश्चित अवधि में एक पुत्र की जननी बनी जिसका नाम ज़ाल ने शग़ाद रक्खा। जन्म संस्कारण के समस्त आवश्यक कार्यों से निवृत्त हो कर ज़ाल ने उसकी जन्म-कुण्डली ज्योतिषियों को दिखाई। उन लोगों ने बहुत सोच-विचार के पश्चात् निर्णय कर के ज़ाल से कहा "यह पुत्र युवा होकर वंश के सर्वनाश का कारण होगा, अतएव युवा अवस्था प्राप्त करने पर आप इसे सीस्तान में न रखियेगा।" ज्योतिषियों के इस कथन से ज़ाल को अत्यधिक दुःख हुआ, और उसने उसकी

शान्ति के निमित्त अनेक प्रकार की पूजाएँ कीं तथा मानतायें मानीं।

जब शग़ाद युवावस्था को प्राप्त हुआ तो ज़ाल ने उसे काबुल-नरेश के पास भेज दिया। उसके वहाँ पहुँचने पर काबुल-नरेश ने उसका बहुत सम्मान किया, यहाँ तक कि शग़ाद को एक पुत्री दान कर के अपना जामाता बना लिया। कुछ काल बीतने पर काबुल-नरेश ने शग़ाद से कहा "मेरी एक अभिलाषा है, यदि तुम उसे पूर्ण करो तो मैं सर्वदा तुम्हारा ऋणी रहूँगा।" श्वसुर की उपर्युक्त बात सुन कर उसने कहा "मैं तन-मन-धन से आप की सेवा करने को उद्यत हूँ।" उसको प्रतिश्रुत हुआ देख कर उसने कहा "मैं रुस्तम द्वारा बहुत सताया गया हूँ। यदि किसी प्रकार तुम उसका बध करने में सफल हो सके तो मैं समस्त राजपाट का उत्तराधिकारी तुम्हें बना दूँगा।"

शग़ाद के स्वीकार करने पर काबुल नरेश ने कहा "भरी सभा में मैं तुम्हें कटु-वचन कहूँगा, तब हमारा साथ छोड़ कर तुम सीस्तान चले जाना, और जाकर रुस्तम से अपना सारा दुखड़ा रोना। भाई होने के नाते वह तुम पर विश्वास करके काबुल पर आक्रमण करेगा। तुम्हारे इस प्रकार कृतकार्य होने पर शेष कार्य मैं कर लूँगा, परन्तु उसमें भी तुम्हारी सहानुभूति की आवश्यकता होगी। काबुल नरेश द्वारा दिये गये प्रलोभनों ने उसे अन्धा बना दिया और वह अपने भाई की हत्या के निमित्त षड्यन्त्रकारी का साथ देने को उद्यत हो गया।

कुछ समयोपरांत एक दिन काबुल नरेश ने शग़ाद को भरी सभा में अपमानित करके कहा "तुझको गर्व किस बात का है? क्या तू रुस्तम के बल पर अभिमान करता है जो कि तुझे दासी पुत्र समझ कर अपना भाई तक नहीं मानता। उसका कहना है कि तू ज़ाल तथा नरीमन् के वंश का नहीं है। इसी कारण उन्होंने तुझे अपने राज्य में न रख कर मेरे यहाँ भेज दिया है।" बात तो सधी बदी थी ही। अस्तु शग़ाद भी क्रोध प्रकट करता हुआ कुछ ऊँची-नीची बातें काबुल नरेश को कह कर सभा को त्याग कर सीस्तान आया और रो-रो कर अपने अपमान का

समस्त हाल रुस्तम से कह सुनाया।" रुस्तम ने, जो शग़ाद के छल से अनभिज्ञ था, भाई को इस प्रकार अपमानित होते सुन कर सेना सहित काबुल पर आक्रमण कर दिया।

इधर ज्यों ही काबुल नरेश को ज्ञात हुआ कि रुस्तम सेना लेकर आरहा है त्योंही वह तुरन्त स्वयं अपने सामन्तों सहित उसके निकट गया और अपनी धृष्टता की क्षमा-याचना करके तथा भविष्य में ऐसे दोषों से वंचित रहने का वचन देकर उसके क्रोध को शान्त करता हुआ राजधानी में ले गया और सब प्रकार से आदर-भाव दिखाकर उसे सन्तुष्ट किया।

जब रुस्तम का क्रोध शान्त हो गया तो एक दिन उसने शग़ाद को एकान्त में बुला कर कहा कि मैंने मृगया-बन में सात कुएँ खोदवा रक्खे हैं और उन्हें खड्ग आदि शस्त्रों से पूर्ण कर उन पर घास फूस डलवा रक्खी है। तुम रुस्तम को किसी दिन आखेट के लिये उसी बन में ले चलो, और सुरक्षित ओर से स्वयं चल कर रुस्तम को कुएँ की ओर से चलने का आदेश करके अपना घोड़ा बढ़ाओ। बस, ज्योंही रुस्तम आगे बढ़ेगा त्योंही अश्व सहित उस कुएँ में जा रहेगा। इस प्रकार सातों कुओं पार करते-करते उसकी मृत्यु हो जायेगी। इन बातों को भली भाँति समझा कर काबुल नरेश ने शग़ाद को बिदा किया।

वहाँ से बिदा होकर शग़ाद रुस्तम के निकट आया और सभा में रुस्तम की बाण विद्या की प्रशंसा कर उसे आखेट के लिये कहा। शग़ाद की बात सुन कर काबुल नरेश ने भी हां में हां मिलाई और उसे निमन्त्रित किया। भाई तथा काबुल नरेश की बात को स्वीकार कर एक दिन आखेट के हेतु निश्चित किया गया।

निश्चित तिथि पर सब लोग उस बन में गये। जब कुएँ के निकट पहुँचे तो काबुल नरेश ने संकेत द्वारा शग़ाद को सूचित कर दिया। शग़ाद ने संकेत को समझ कर कहा "हम लोग दाहिने मार्ग से बन में प्रवेश करेंगे, आप बाम मार्ग से आखेट की खोज में चलिये।" रुस्तम को

क्या ज्ञात था कि इन विश्वासघातियों के कुचक्र में पड़ कर स्वयं ही आखेट बन जाऊँगा। अस्तु, उसने जवारा को साथ लेकर बायें मार्ग पर मुड़ कर पदार्पण किया।

अभी थोड़ी दूर भी न गया होगा कि कुआँ आ गया। रख्श को जब नवीन धूल की बास मिली तो ठिठक गया क्योंकि दैवी शक्ति के कारण उसे यह ज्ञात हो गया कि यहाँ की भूमि में गड्ढा है। उसके ठिठक जाने पर रुस्तम को बड़ी लज्जा लगी, अतएव उसने क्रोध के आवेश में उसके एक कोड़ा जमा दिया। कोड़े का लगना था कि रख्श अपने स्थान पर से तड़पा परन्तु कालवश वह कुआँ न फांद सका, परन्तु रुस्तम सहित वह काल-कूप में जा रहा। कुण्ड के शस्त्रों से परिपूर्ण होने के कारण रख्श तथा रुस्तम का शरीर चलविचल हो गया। परन्तु रख्श इन घावों की लेश-मात्र भी चिन्ता न कर के जो वहाँ से तड़पा तो दूसरे कुएँ में आ रहा। इसी प्रकार क्रमशः दूसरे से तीसरे-तीसरे से चौथे में घायल होते तथा उसी प्रकार तड़पते हुये सातवें कुएँ को भी पार कर के बाहर जा गिरा। वहाँ पहुँच कर तथा शस्त्रों द्वारा सारा शरीर छिन्न-भिन्न हो जाने के कारण रख्श तो पृथ्वी पकड़ते ही निर्जीव हो गया। अब रुस्तम भी पृथ्वी पर जा पड़ा, उसे ज्ञात हुआ कि दोनों मेरे प्राण के गाहक हैं अस्तु वह क्रोधान्ध होकर शगाद से बोला "नीच तूने मेरे साथ विश्वासघात किया, मैं तो तेरे ही अपमान का प्रतिशोध लेने के लिये तेरे साथ आया था। मैंने तेरा कौन सा अपराध किया था जिसका तू ने इतना कठोर दण्ड दिया?" इस पर शगाद ने हँस कर कहा "तूने बहुत से जीवों की हत्या की है उसी का प्रतिफल तो यह है।"

इसी समय काबुल-नरेश ने हँस कर कहा "कहो तो विष-हर औषध मँगा दूँ।" इस पर रुस्तम ने कहा "तू अपनी विष-हर औषध को अपने शिर पर पटक ले। मैं तो यह जानता हूँ कि इस संसार में कोई भी अमर होकर नहीं आया है। बड़े-बड़े राजे महराजे तथा वीर इस असार संसार को त्याग कर शीघ्र ही चले गये। फिर मैं तो बड़ा ही भाग्य

शाली हूँ, जो इतने काल तक इस अतिथि शाला का सुख-भोग कर जाता हूँ।" इसके पश्चात् उसने शगाद को सम्बोधन कर के कहा "अब मैं मरूँगा तो अवश्य परन्तु यदि तुम एक धनुष बाण मुझे दे दो तो मैं तुम्हारा बड़ा कृतज्ञ होऊँगा क्योंकि मेरी इच्छा है कि शरीर प्राण रहते तक पशु पक्षियों द्वारा अपनी दुर्दशा न होने दूँ।"

शगाद ने इस समय यह न सोचा कि रुस्तम वास्तव में अपनी रक्षा के लिये धनुर्बाण माँगता है, अथवा इसमें उसका कोई अन्य उद्देश्य है, उसने तुरन्त धनुष-बाण उसे दे दिया। धनुष-बाण अधिकार में आते ही उसने जो लक्ष्य साध कर बाण छोड़ा तो शगाद पृथ्वी पर गिर कर लगा तड़फड़ाने। उसकी अन्तिम घड़ी देख कर रुस्तम ने एक ठंढी श्वास खींची, और बोला "हे जगदीश्वर! मैंने अपने विश्वासघाती शत्रु को उसके कार्यों का फल चखा दिया, अस्तु अब मैं शान्तिपूर्वक मृत्यु को आलिंगन करता हूँ।" इतनी बातों के समाप्त होते ही रुस्तम सुरपुर को सिधारा और उसका शरीर सदैव के लिये निष्प्राण होकर पड़ गया।

रुस्तम की भाँति उसके सेनापति ज़वारा तथा अन्य सैनिकों की भी यही दुर्दशा हुई। परन्तु भाग्यवश एक सैनिक शेष रह गया, जिसने सीस्तान पहुँच तथा रो-रो कर ज़ाल से यह दुःखद समाचार कह सुनाया। पुत्र की इस अनायास मृत्यु का शोक-समाचार पाकर ज़ाल बिलख-बिलख कर रोने लगा। जब रुस्तम की माता को इसका पता चला तो वह छाती पीट-पीट कर विलाप करने लगी। सारांश यह कि जाबुल का बच्चा-बच्चा रुस्तम की मृत्यु से शोकातुर हो गया।

जब ज़ाल को चेत हुआ तो उसने फ़रामर्ज़ को समझाया और साथ ही उसे काबुल पर आक्रमण करने का आदेश दिया। फ़रामर्ज़ जो अपने पिता की मृत्यु से विह्वल हो उठा था, ज़ाल की आज्ञा पाकर तुरन्त सेना ले कर काबुल पर चढ़ दौड़ा। इधर जब काबुल-नरेश को फ़रामर्ज़ के आक्रमण का समाचार मिला तो वह त्रसित होकर राजधानी छोड़ कर पर्वत की कन्दरा में जा छिपा। जब फरामर्ज़ वहाँ पहुँचा और उसे शासक

के भाग जाने का समाचार ज्ञात हुआ तो वह वहाँ से लौट कर न्यायार्थ वन की ओर आया और रुस्तम तथा जवारा के अस्थि-पंजर को लेकर सीस्तान वापिस आया और वहाँ उसका मृतक संस्कार कर फिर काबुल को लौटा।

इस बार काबुल का शासक वहीं था अस्तु दोनों में बड़ा घमासान युद्ध हुआ, फलतः काबुल नरेश बन्दी हुआ और फ़रामर्ज़ ने उसे अपने हाथों मार कर रुस्तम तथा ज़वारा के बध का प्रतिशोध लिया। तदनन्तर काबुल पर अपना अधिकार कर के ज़ाबुल लौट आया।

गश्तास्प की मृत्यु तथा बहमन को राजगद्दी

असफ़न्दयार की मृत्यु के पश्चात् एक दिन गश्तास्प ने सभासदों को निमंत्रित कर के कहा "अब मेरी इच्छा यह है कि बहमन को राज-सिंहासन का उत्तराधिकारी बनाऊँ। कारण यह कि एक तो वह बहुत ही चतुर है, दूसरे यह कि वह एक वीर तथा प्रभावशाली पुरुष है, तीसरे उसके पिता का बध भी मेरे ही कारण हुआ है। अस्तु अब तुम लोगों की क्या अनुमति है?" इस प्रकार समस्त सामन्तों तथा सभासदों की स्वीकृति पाकर उसने बहमन को राज-सिंहासन पर बिठा कर तथा राजमुकुट पहिना कर उसे ईरान का राज्य-भार सौंप दिया और स्वयं कुछ काल पश्चात् इस संसार को छोड़ कर चल बसा।

गश्तास्प की मृत्यु के पश्चात् बहमन ने ऐसे न्याय तथा प्रेम के साथ राज्य किया कि उसकी प्रजा का प्रत्येक व्यक्ति उससे प्रसन्न रहा। एक दिन उसने अपने सभासदों से कहा "मैं अपने पिता तथा भ्राताओं की मृत्यु का प्रतिफल लेने के लिये ज़ाबुल पर चढ़ाई करना चाहता हूँ।" अपने मंत्रियों की स्वीकृति पाकर उसने एक लाख सेना लेकर ज़ाबुल पर आक्रमण किया।

जब उसकी सेना नदी के निकट पहुँची तो उसने ज़ाल को लिखा "मैं तुमसे युद्ध करने के लिए आया हूँ, अस्तु तुम भी अपनी सेना-

सहित मेरे सम्मुख आओ। जब उसका पत्र-वाहक सीस्तान पहुँचा और ज़ाल को उपर्युक्त समाचार मिला तो वह बड़ा चिन्तित हुआ और वाहक से विनम्र भाव से बोला "मेरा क्या दोष है? मैं तो सदैव ही उनका विश्वास-पात्र सेवक रहा हूँ, और अब भी अपने को वही समझता हूँ।" तदन्तर ज़ाल ने वाहक को बहुत सी मूल्यवान वस्तुएँ भेंट में देकर उपर्युक्त बातें कह भिजवाईं।

वाहक वहाँ से बिदा होकर जब बहमन के निकट आया तो उसने ज़ाल की प्रशंसा करके उसका संदेश कह सुनाया; और उसकी दी हुई वस्तुओं को उसके सम्मुख प्रस्तुत किया। बहमन उसे देख कर तथा बातों को सुन कर थोड़ा शान्त हुआ, और नदी पार करके सीस्तान में पहुँचा। जब ज़ाल को उसके आगमन की सूचना मिली तो वह स्वयं उसकी अगवानी के लिये आया और सम्मानपूर्वक घर ले जाकर उसका आदर-सत्कार किया। इसी बीच उसने ज़ाल से पूछा "फ़रामर्ज़ कहाँ है?" जब उसको यह विदित हुआ कि वह आखेट के लिये गया है, तो बहुत क्रोधित हुआ और तुरन्त ज़ाल को बन्दी कर लिया। ज़ाल उसका यह कार्य देख कर रोने लगा और बोला "रुस्तम ने अस्फ़न्दयार की हत्या की थी, मैंने नहीं, और वह भी अब मर चुका है। अब मेरा वध करके अपने पिता का बदला लेना चाहते हैं तनक विचार तो कीजिये कि न्याय क्या कहता है।" पर बहमन ने उसकी बातों का ध्यान न करके उसे सैनिक कारागार में डाल दिया।

इधर जब फ़रामर्ज़ को इसका समाचार मिला तो वह तुरन्त सेना लेकर आया और दोनों में बड़ा घमासान युद्ध हुआ। तीन दिन तक किसी की न हार ही हुई न जीत। चौथे दिन वायु बड़े वेग से चलने लगी, जिससे ज़ाबुल के सैनिकों को बड़ी क्षति हुई; क्योंकि आँधी के झोंके ईरानी सैनिकों की पीठ पर आते थे और ज़ाबुल के सैनिकों के मुख पर। वायु के साथ धूल उड़-उड़ कर उनके नेत्रों में पड़ती थी।

सारांश यह कि बहुत सी ज़ाबुली सेना धराशायी हुई और जो शेष रही वह भी भाग खड़ी हुई।

सेना के भाग जाने पर भी फरामर्ज़ अकेला ही सिंह की भाँति समरभूमि में डटा रहा। इस समय उसने गदा का उपयोग किया, परन्तु निष्फल रहा; क्योंकि ईरानी सेना की बाण-वर्षा से उसका अश्व धराशायी हो चुका था। अब वह पैदल ही तलवार लेकर ईरानियों को काटने लगा, पर अकेला होने के कारण वह बहुत घायल हो गया। उसके शरीर से इतना रक्त बहा कि वह शक्तिहीन होकर पृथ्वी पर गिर गया और बहमन ने उसे बन्दी करके सूली पर चढ़ा दिया।

फरामर्ज़ को सूली देने के पश्चात् बहमन ने सर्व साधारण के बध की आज्ञा दी, परन्तु तसर्वीन के समझाने पर सबको क्षमा करके ज़ाल को भी बन्धन मुक्त कर दिया और नये सिरे से उसे ज़ाबुल का शासन देकर स्वयं भी ईरान की राजधानी में लौट आया।

बहमन की मृत्यु

सीस्तान से लौटने के पश्चात् एक दिन जब बहमन अपने शयनागार को जा रहा था तो, एक भुजंग ने उसे डस लिया। अनेक उपाय किये गये, परन्तु कोई भी फलीभूत न हुआ। उसे दृढ़ विश्वास हो गया कि उसका अन्तिम समय आ गया है तो उसने अपनी पुत्री को, जो कि बड़ी ही चतुर तथा सुन्दरी थी, राज-काज का भार सौंपा। यहाँ यह लिख देना अप्रासंगिक न होगा कि प्रचलित प्रथानुसार बहमन ने अपनी पुत्री को पत्नी रूप में अंगीकार किया था। वह इन दिनों गर्भवती भी थी; अतएव राजकाज का भार हुमा पर छोड़ देने के पश्चात् उसने यह भी कहा "हुमा के गर्भ से जन्मा पुत्र इस राज-सिंहासन का उत्तराधिकारी होगा।"

अपनी अन्तिम इच्छा प्रकट करने के पश्चात् उसका कंठावरोध हो गया और उसने परलोक-वास किया।

हुमा का राज्याभिषेक

सिंहासनारूढ़ होने पर हुमा ने बड़े धर्म-कर्म से राज्य किया कि सारी प्रजा प्रशंसा करने लगी। इसी बीच उसके पुत्र हुआ जिसे उसने एक धाय को सौंप कर कहा कि किसी अन्य स्थान पर ले जाकर इसका लालन पालन करो और स्वयं यह प्रसिद्ध कर दिया कि पुत्र ने जन्म लेते ही इस लोक को त्याग दिया और फिर स्वयं राज-काज में लग गई।

नौ मास के उपरान्त एक दिन उसने बालक को मँगाया परन्तु फिर उसे यह भय हुआ कि यदि मैं इसे यहाँ रक्खू और प्रजा को इस का ज्ञान हो गया तो वह मेरे शासन में अवश्य ही बाधा डालेगी। उसने उसे एक सन्दूक में रखा तथा थोड़े से रत्न भी साथ रख कर उसे बन्द कर दिया और अपनी मोहर लगा कर लोगों को आज्ञा दी "इसे नदी में बहा आओ।" विवश लोगों ने हुमा की आज्ञानुसार उसको नदी में डाल दिया।

दूसरे दिन प्रातः काल एक धोबी उस नदी के निकट किसी कार्य-वश आया था। जब उसने सन्दूक को देखा तो उसे नदी से निकाल कर खोला। जब उसने उसमें उस चन्द्र-बदन बालक तथा रत्नों को देखा तो बड़ा प्रसन्न हुआ और उसे लाकर अपनी पत्नी को दिया, और कहने लगा "ले! ईश्वर ने तुझे पुत्र तथा लक्ष्मी एक साथ ही दिये हैं।" उस स्त्री ने जो इतना सुन्दर पुत्र देखा तो गद्गद हो गई और उसका नाम दाराब रख कर बड़े प्रेम से उसका लालन-पालन करने लगी। जब वह बड़ा हुआ तो उसने भूल कर भी अपने पिता के व्यवसाय में हाथ न बटाया, अतः उसने विवश हो कर उसे पाठशाला में भेज दिया।"

जब वह पाठशाला में गया तो उसकी तीव्र बुद्धि देख कर उसका गुरु चकित हो गया और जितनी विद्या पर उसे अधिकार था उसने उस

सब में उसे निष्णात कर दिया ; विद्या प्राप्ति के पश्चात् उसने रण-कौशल की ओर ध्यान लगाया, और उसमें भी निपुण हो गया। एक क्षण को भी वह घर में न रहता था बल्कि वनों में जाकर आखेट किया करता था। उस स्थान के जितने छोटे-बड़े लोग थे सब उससे भय खाते थे क्यों कि वह शस्त्र-विद्या के अतिरिक्त शरीर से भी हृष्ट-पुष्ट था तथा सभी दाव-पेंच जानता था।

एक दिन उसने अपनी माता के निकट पहुँच कर कहा "मुझे एक घोड़ा तथा अमुक शस्त्र ले दो।" परन्तु जब माता ने विवशता दिखाई तो उसने खाना-पीना तक छोड़ दिया। जब माँ ने उसकी यह दशा देखी तो उसने उसे एक रत्न दिया, जिसे बेच कर उसने अपनी आवश्यकता की वस्तुएं मोल लीं। तत्पश्चात् उस रत्न के प्रसंग में उसने एक दिन अपनी कथा जाननी चाही। अस्तु जितनी इन लोगों को विदित थी वह कह सुनायी। तदुपरांत उसने कहा "अब मैं देश-विदेश का भ्रमण करूँगा।" और एक शुभ दिवस नियत कर वह घर से विदा हो गया।

इसी बीच रूम के शासक ने ईरान पर आक्रमण किया और हुमा ने चारों ओर ढिंढोरा पिटवा दिया "जो मनुष्य युद्ध में भाग लेना चाहें वह राज सभा में उपस्थित हो।" जब दाराब को इसकी सूचना मिली तो वह भी सेना में भर्ती होने के लिये सभा में गया। जब हुमा ने दाराब को देखा तो उसका सुन्दर बदन तथा सुदृढ़ शरीर देख कर चकित हो गई और उसे सेना में भर्ती कर लिया।

जब शत्रु की सेना निकट आई तो हुमा के सेनापति रशनवाद ने भी अपनी सेना को रण में जा उतारा। परन्तु उस दिन वर्षा ऐसी मूसलाधार हुई कि दोनों ओर की सेना अपने-अपने डेरे में चली गई। दाराब के पास डेरा नहीं था अतः वह एक ताक़ में जा छिपा। इसी समय आकाश-वाणी हुई "ऐ ताक़ ! ज़रा सावधान रहना, गिरना नहीं, क्योंकि कयानी वंश का एक राजकुमार, बहमन का पुत्र तेरी शरण में पड़ा है।" यह वाणी इतने उच्च स्वर में तीन बार हुई कि वीर रशनवाद ने भी

उसे सुना। इस पर उसने अपने दासों को इसका पता लगाने की आज्ञा दी। सेवकों ने लौट कर कहा "वहाँ ताक़ के नीचे एक अश्वारोही पड़ा सो रहा है और उस ताक़ की यह अवस्था है कि वह किस क्षण गिर पड़ेगा यह कहा नहीं जा सकता।"

सेवकों से यह ज्ञात कर रशनवाद ने उस अश्वारोही को बुलवाया। सेवक ज्योंही उसे जगा कर आगे बढ़े वह ताक़ गिर पड़ा। तत्पश्चात् सेवकों ने उसे रशनवाद के सम्मुख उपस्थित किया और उसने उससे गौहर का समाचार पाकर उसे बुलाया। उसने समस्त समाचार बतला कर वह रत्न भी दिखाया। अब रशनवाद को विश्वास हो गया "वास्तव में यह बहमन का पुत्र है अस्तु उसने बड़े सम्मान-पूर्वक उसको एक अच्छा डेरा देकर उसके पद को बड़ा किया।

दूसरे दिन जब सूर्य भगवान ने अपना किरीट धारण कर संसारी जीवों को दर्शन दिया, तो रशनवाद ने दाराब की संरक्षता में सेना को रण-भूमि में भेजा। बस फिर क्या था। दोनों ओर से मार-काट आरम्भ हो गई। दाराब ने इस समय वह वीरता दिखाई कि रूमियों के छक्के छूट गये। जिस ओर उस का भाला घूम जाता था उस ओर सैनिक पृथ्वी पर बिना जल की मछलियों की भाँति छटपटाते दीख पड़ते थे। सारांश यह कि लड़ते मरते संध्या हो गई और वीर दाराब विजयी होकर अपने डेरे में लौटा। विजय की सूचना पाकर रशनवाद ने उसे बधाई दी और फिर सब सैनिक विश्राम करने लगे।

दूसरे दिन भोर होते ही फिर रूमियों ने रण-क्षेत्र में पदार्पण किया परन्तु उस दिन फिर उन्हें मुँह की खानी पड़ी। जब दोनों सेनायें संध्या समय विश्राम को गईं तो रूम की सेना के प्रत्येक वृद्ध तथा युवा ने दाराब की प्रशंसा की और कहने लगे अब इसके होते हुए विजय प्राप्त करना असम्भव है। अतः अब रूम को लौट चलना चाहिये, परन्तु रूम के शासक ने कहा "तुम लोग अधीर न हो। कल भोर होते ही तुम लोग बड़े वेग से आक्रमण करना और फिर देखना कि विजय किसको

होती है।" इसी प्रकार धीरज देकर राजा ने सैनिकों को विश्राम करने की आज्ञा दी।

तीसरे दिन रूमियों ने बड़े वेग से आक्रमण किया परन्तु निष्फल रहे। क्योंकि दाराब ने स्वयं वह वीरता दिखाई कि शत्रुओं के दांत खट्टे हो गये। वह भूखे सिंह की भाँति जिस ओर मुड़ता था उस ओर शवों के अतिरिक्त और कुछ सूझ ही न पड़ता था। क्षण भर में सारी संग्राम-भूमि रक्त की नदी में परिणत हो गई और उसमें वीरों की भुजायें, शिर तथा शरीर जल-जंतु के समान मालूम होते थे।

सारांश यह कि जब इस भीषण मारकाट द्वारा अपनी क्षति होती हुई रूम के शासक ने देखी तो उसने सन्धि की प्रार्थना की। सन्धि होने के पश्चात् रूमी सेना अपनी राजधानी को लौट गई, और रशनवाद ने दाराब का समस्त समाचार तथा रत्न एक मनुष्य के द्वारा हुमा के पास भेज दिया। जब हुमा ने उन रत्नों को देखा तो उसे विश्वास हो गया कि वास्तव में यही मेरा पुत्र है, अस्तु उसके राजधानी पहुँचने पर उसे राजसिंहासन पर बिठा कर वह स्वयं उससे पृथक् हो गई।

बहमन के पुत्र दाराब की राजगद्दी

राजगद्दी पर बैठने के पश्चात् दाराब ने अपना कार्य्य ऐसी सुन्दरता से किया कि सारी प्रजा उसकी प्रशंसा करने लगी। इसी बीच उसे सूचना मिली कि अरब के शासक का साला शईब एक हज़ार सैनिक लेकर ईरान पर आक्रमणकारी हुआ है। अस्तु वह भी सेना लेकर उससे संघर्ष के हेतु आया।

तीन दिन तथा तीन रात्रि तक लगातार युद्ध होता रहा परन्तु उसका कोई फल न निकला। चौथे दिन ईरानी सेना ने वह वीरता दिखाई कि अरबी सैनिकों को कच्ची खानी पड़ी। इसके अतिरिक्त दाराब ने शईब को समरभूमि में धराशायी कर दिया। फलतः सारी सेना भाग खड़ी हुई और विजय का टीका दाराब के मत्थे पर लगा।

इस युद्ध से निबट कर दाराब ने रूम पर आक्रमण किया। उधर से रूम का शासक फ़ीलक़ोस भी सेना लेकर आया। बड़ी घमासान की लड़ाई हुई और ईरानियों ने वह युद्ध कौशल दिखाया कि रूमियों के छक्के छूट गये और फ़ीलक़ोस अपनी सेना सहित भाग खड़ा हुआ।

उपरोक्त युद्ध में वे लोग केवल मारे ही नहीं गये, वरन् उनके बाल-बच्चे भी बन्दी कर लिये गये। फ़ीलकोस अपनी सेना के साथ दुर्ग का आश्रयी हुआ और फिर वहाँ से सन्धि की प्रार्थना की। सन्धि हो जाने पर उसे इसकी प्रतिक्रिया-स्वरूप बहुत सा धन द्रव्य देना पड़ा। साथ ही उसने दाराब को राज-कर देने का वचन दिया।

एक दिन एक सभासद् ने दाराब से कहा कि फ़ीलकोस के एक अत्यन्त सुन्दरी कन्या नाहीद है जो कि आपके उपयुक्त है। यह ज्ञात होते ही उसने फीलकोस को उसके साथ विवाह की सूचना भेजी। फीलकोस ने तुरन्त इसे स्वीकार करके अपनी पुत्री का विवाह दाराब के साथ कर दिया।

दाराब द्वारा नाहीद का परित्याग तथा सिकन्दर का जन्म

विवाह करके जब दाराब ईरान को लौटा और रात को जब वह नाहीद के पास गया तो उसे ज्ञात हुआ कि नाहीद के मुख से दुर्गन्ध निकलती है। दूसरे दिन भोर होते ही जब वह बाहर आया तो अपने यहाँ के चिकित्सकों से यह बात कह सुनायी, परन्तु जब उन लोगों की चिकित्सा से कोई लाभ नहीं हुआ तो उसने उसे उसके पिता के घर भेज दिया। उसके गर्भवती होने का ज्ञान दाराब को नहीं था और फीलकोस के भी कोई पुत्र नहीं था, अस्तु उसने भी किसी को इससे सूचित नहीं किया।

प्रसवकाल के अन्त में नाहीद के एक सुन्दर पुत्र हुआ जिसका नाम फीलकोस ने सिकन्दर रक्खा। यह बालक रुस्तम की भाँति वीर, शक्ति-शाली तथा बुद्धिमान् था। वह अपनी बुद्धिमत्ता के कारण सारी

विद्याओं में निपुण हो गया। इसी काल में अरस्तू नाम का एक अतीव बुद्धिमान व्यक्ति था जो सदैव सिकन्दर के साथ रहता था।

दाराब की मृत्यु तथा दारा की राजगद्दी

नाहीद को रूम भेज देने के पश्चात् दाराब को एक अन्य पत्नी की इच्छा हुई और उसने एक दूसरी युवती को अपनी स्त्री बनाया और थोड़े काल पश्चात् उसने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम दाराब ने दारा रक्खा।

जब वह बारह वर्ष का हुआ तो दाराब ने परलोक की यात्रा की, अस्तु मंत्रियों ने उसके पुत्र दारा को राजगद्दी पर बैठाया। इस वीर तथा शक्तिशाली शासक ने प्रत्येक राजा से राज-कर लिया और बड़े नियम के साथ राज-काज किया।

सिकन्दर तथा दारा का युद्ध

इधर रूम में फ़ीलकोस की मृत्यु के पश्चात् सिकन्दर ने राजमुकुट धारण किया और अफलातून के शिष्य अरस्तू को अपना प्रधान सचिव बनाया और उसके मतानुसार चल कर महाराजा का पद प्राप्त किया।

इसी बीच जब दारा ने समस्त राजाओं से अपनी अधीनता स्वीकार करा ली, तो सिकन्दर के पास भी एक दूत भेजा, जिसने आकर सिकन्दर से कहा "दारा का कथन है कि क्या कारण है कि अब तक तुमने राज-कर नहीं दिया। यदि अपना भला चाहते हो तो तुरन्त कर भेज दो अन्यथा तुम्हें राजपद से च्युत होना पड़ेगा।" जब सिकन्दर को दारा की यह सूचना मिली तो उसने दूत से कहा "दारा से कह देना कि उसको राज-कर देने वाला अब इस संसार में नहीं रहा। अब रूम का शासक सिकन्दर है जिसकी यह इच्छा है कि वह सातों द्वीपों को अपने आधीन करके दिग्विजयी हो। अतः यह विचार अपने मस्तिष्क से निकाल दे क्योंकि सिकन्दर को सेना तथा धन की कमी नहीं है।"

दूत ने उत्तर पाकर ईरान को प्रस्थान किया। इधर सिकन्दर असंख्य सैन्य एकत्रित करके स्वयं भी ईरान की ओर बढ़ा। जब दारा को सिकन्दर के आगमन की सूचना मिली तो वह भी अपनी ईरानी सेना के साथ उसके संघर्ष को चल पड़ा। जब दोनों सेनायें निकट पहुँच गईं तो दोनों ने पड़ाव डाला और युद्ध की तय्यारियाँ होने लगीं।

उसी दिन सिकन्दर छद्मवेश धारण कर दारा के पड़ाव में गया और उसके सम्मुख उपस्थित हो कर बोला—"सिकन्दर ने कहला भेजा है कि मुझे आपके राज्य से कोई काम नहीं। मैं तो केवल देश-भ्रमण के हेतु निकला हूँ, और आप से यही चाहता हूँ कि आप मुझे तथा मेरी सेना को अपने राज्य में से होकर जाने के लिये मार्ग दें। और यदि तेरी इच्छा युद्ध करने की ही है तो ध्यान रख कि मेरे पास भी लोहा है।"

जब सिकन्दर ने इस धृष्टता से संदेशा कहा तो दारा चकित रह गया और बोला—"तू कौन है और तेरी वंशावली क्या है? तेरी मुखाकृति देखने से तो तू कयानी वंश का प्रतीत होता है और मुझे यह शंका हो रही है कि तू स्वयं ही सिकन्दर है, जो संदेश वाहक के वेश में आया है।" दारा के वचन सुन कर सिकन्दर ने कहा—"मैं तो सिकन्दर का एक तुच्छ सेवक हूँ। सिकन्दर इतना बुद्धिहीन नहीं है जो अकेला शत्रु की ड्योढ़ी के भीतर प्रवेश करे।"

इतनी बात होने के पश्चात् दारा ने मदिरा माँगी और एक पात्र में भर कर छद्मवेशी सिकन्दर को दी। सिकन्दर ने उसे पीकर उस पात्र को अपने पास रख लिया। इस पर दारा ने पूछा "मदिरा पीकर पात्र को अपने पास रख लेने का क्या अभिप्राय है?" उसने उत्तर दिया "मेरे देश में किसी को उसी पात्र में फिर मदिरा नहीं देते।" अस्तु दारा ने दूसरा पात्र मंगाया। इस प्रकार चार बार में सिकन्दर ने चार रत्नजटित पात्रों को एकत्र कर लिया। जब संध्या हुई तो सिकन्दर भोजन करने के लिए बैठा। इसी समय एक व्यक्ति जिसने सिकन्दर को पहिचान लिया

था दारा के कान की ओर झुका। जब सिकन्दर ने यह देखा तो उसे अपने भेद खुलने का भय हुआ, अस्तु वह वहाँ से उठ कर खिसक गया। उसके जाते ही दारा ने एक सहस्र अश्वारोही उसके पीछे भेजे परन्तु अंधेरी रात्रि में अश्वारोही इधर उधर भटक कर लौट आये।

वहाँ से निकल कर सिकन्दर सीधा अपने शिविर में आया और सब को सुरा-पात्र दिखा कर बोला—"यह देखो कितना अच्छा शगुन हुआ।" दारा के पास सेना बहुत है परन्तु फिर भी विजय मेरी ही होगी। इतना कह कर युद्ध के लिये तय्यार होने की आज्ञा दी।

दूसरे दिन सूर्य भगवान के दर्शन देते ही दोनों ओर की सेनायें रण-भूमि में आ डटीं और जुझाऊ बाजे बज उठे। मार काट की ध्वनि से सारा रणमंडल प्रतिध्वनित हो उठा। घायलों के चीत्कार से लोगों का हृदय काँप उठता था। वीर हुँकार भर-भर कर हाथ चलाते थे तथा कायर लोमड़ियों की भाँति दुम दबा कर भागते थे। यह युद्ध सात दिन तक होता रहा परन्तु विजय का मौर किसी के भी शिर पर न चढ़ा। आठवें दिन सिकन्दर ने अपनी सेना को प्रोत्साहन देकर कहा "वीरों! मृत्यु तो जीवन में एक ही बार होती है तुम लोग अपने प्राणों की अपेक्षा अपनी रूमी माताओं के दूध की लाज का ध्यान करो और शत्रुओं को गाजर मूली समझ कर जड़ से उखाड़ फेंको।" सिकन्दर के इन वाक्यों ने रूमी सैनिकों में जान डाल दी और उस दिन उन्होंने ऐसा भीषण संग्राम किया कि ईरानियों में भगदड़ मच गई। फलतः दारा भी रण-क्षेत्र से मुँह फिरा कर रूद्वार के बन में जा टिका।

सिकन्दर को इस विजय से बड़ी प्रसन्नता हुई और उसने बड़ा उत्सव मनाया।

इसी प्रकार दारा ने दो बार फिर आक्रमण किया। परन्तु भाग्य-चक्र के उलटा हो जाने के कारण प्रत्येक बार सिकन्दर द्वारा पराजित हुआ।

सिकन्दर ने दारा को पराजित करके जब ईरान पर अधिकार पाया तो प्रथम उसने उस देश में अपना सिक्का चलाया। तदुपरान्त उसने प्रजा में इस बात की घोषणा करवा दी जो ईरानी सिकन्दर की अधीनता से मुखमोड़े उसे वह बाल बच्चों सहित बन्दी कर के कारागार की हवा खिलाएगा, और जो व्यक्ति उससे मित्रता तथा राजा-प्रजा का व्यवहार करेगा उसे वह हर प्रकार से प्रसन्न रक्खेगा और सर्वदा उसके शत्रुओं से उसकी रक्षा करता रहेगा।

सिकन्दर की घोषणा सुन कर वे व्यक्ति जो दारा के प्रति प्रेम रखते थे एक दिन दारा से बोले "हमारी इच्छा है कि एक बार फिर सिकन्दर से संघर्ष किया जाय।" अपने आदमियों की यह बातें सुन कर तथा साहस देख कर दारा ने सेना एकत्रित की और ईरान की ओर अग्रसर हुआ। इधर जब सिकन्दर को इसकी सूचना मिली तो वह भी सेना-संग्रह कर के मैदान में आया। फलतः दोनों ओर से तीर तलवार चलने लगी। इस बार ईरानी सेना ने जी-तोड़ कर युद्ध किया परन्तु भाग्य के सामने किसी की नहीं चलती अस्तु इस बार भी दारा को विजय-श्री का संयोग न हुआ।

दारा के पराजित होने के पश्चात् सिकन्दर ने सब के बाल बच्चों को बन्दी कर लिया परन्तु जो व्यक्ति उसके पास पहुँच करता क्षमा मांगता था उसे क्षमा कर के उसके बाल बच्चों को मुक्त कर देता था। इसी समय सिकन्दर ने दारा को एक पत्र द्वारा सूचित किया "मुझे तुम्हारे राज-पाट की इच्छा नहीं है अस्तु यदि तुम स्वयं मेरे पास आ जाओ तो फिर मैं तुम्हें तुम्हारा राज-पाट देकर ईरान का राजमुकुट पहना दूँ।" जब यह पत्र दारा को मिला तो उसके साथियों ने भी कहा "इस प्रकार जीवन निर्वाह करने से क्या लाभ। तुम सिकन्दर के पास चले क्यों नहीं आते।"

साथियों की बात सुन कर दारा ने कहा "मुझे इस प्रकार जीवन-निर्वाह करना भला नहीं मालूम होता। मैं राजपाट के लालच में पड़ कर

रूमियों की अधीनता कदापि स्वीकार न करूँगा।" यह उत्तर देकर दारा ने भारत के पोरस नामी एक शासक को अपना सारा हाल लिख कर उससे सहायता माँगी। और उसका निमंत्रण पाकर भारत की ओर चला।

जब सिकन्दर को इसकी सूचना मिली तो उसने अपने अश्वारोहियों द्वारा भारत में प्रवेश करने के सब मार्ग बन्द कर दिये। इधर दारा के अभाग्य ने जो ज़ोर मारा तो उसके दो मंत्री माह यार तथा जानूस यार ने अपने मन में यह विचारा "सिकन्दर तो दारा का शत्रु है ही और एक न एक दिन जब पकड़ पावेगा तो उसे मार ही डालेगा अस्तु यदि हम लोग ही उसका बध कर डालें और सिकन्दर को सूचित कर दें तो अवश्य वह हम पर प्रसन्न होकर हमें अपने यहाँ नौकर रख लेगा।"

इस विचार से एक दिन जब दारा भारत जाता हुआ मार्ग में सेना से दूर हो गया तो प्रथम एक ने दारा के वक्षस्थल में अपना कटार घुसेड़ दिया तत्पश्चात् दूसरे ने भी अपना कटार भोंक दिया जिससे दारा घोड़े पर से पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसे घायल करके माहयार ने जाकर सिकन्दर को सूचित किया। ज्यों ही सिकन्दर को यह विदित हुआ वह घोड़े पर चढ़ कर उस स्थान पर आया और दारा के निकट पहुँच कर घोड़े पर से उतर पड़ा और उसके पास बैठ कर उसका शिर अपनी जंघा पर रख कर रोने लगा।

उसने कहा "मुझे माता जी से ज्ञात हुआ है कि हम तुम दोनों सगे भाई हैं। मेरी यह इच्छा नहीं थी कि मैं तुम्हें इस प्रकार पीड़ित देखूँ। मैं तुम्हें अपने साथ ले चलूँगा और तुम्हारी चिकित्सा कराऊँगा और स्वस्थ हो जाने पर मैं तुम्हें ईरान का राज्य सौंप कर यहाँ से दूसरी ओर जाऊँगा। मैं तुम्हारे घातकों का शिर तन से पृथक् करके उनका सर्वनाश करूँगा।" इतना कह कर सिकन्दर फिर फूट-फूट कर रोने लगा।

सिकन्दर को इस प्रकार बिलख-बिलख कर रोता देख दारा ने कहा "अब रोने से कोई लाभ नहीं और न मेरी चिकित्सा ही हो सकती है.

क्योंकि मेरा अन्तिम समय आ गया है। अब यदि तू मेरी अन्तिम इच्छाओं को पूर्ण करे तो मैं कुछ कहूँ।" जब सिकन्दर ने अपना वचन दिया तो उसने कहा "प्रथम तो तू मेरी पुत्री रोशनाक से अपना विवाह करना और उससे जो पुत्र हो उसका नाम असफ़न्दयार रखना। द्वितीय यह कि तू गश्तास्प के धर्म का प्रचार करना तथा सदैव इस बात के ऊपर दृष्टि रखना कि मेरी इच्छाओं में त्रुटि न होने पाए।" तत्पश्चात् उसने सिकन्दर का हाथ अपने मुख पर रखा और बोला "अब मैं सुख शान्ति पूर्वक मर सकूँगा।" इतना कहते-कहते उसकी आँखें बन्द हो गईं।

दारा का प्राण निकलते ही सिकन्दर बिलख-बिलख कर रोने लगा। थोड़ी देर पश्चात् दारा के शव को ताबूत पर रख कर वह स्वयं नंगे पैर स्मशान की ओर चला और वहाँ पर उसे धरती माता की गोद में सौंप कर फिर राजधानी को लौटा।

वहाँ आकर उसने रोशनाक के साथ विवाह किया तथा प्रजा को सब प्रकार से सुखी करके कुछ समय तक ईरान में रहा तदन्तर भारत की ओर अग्रसर हुआ।

सिकन्दर का भारत आक्रमण

उसी काल में भारतवर्ष में एक शासक था जिसका नाम था कीद। उसने उन दिनों बड़े भयानक स्वप्न देखे तो बड़े-बड़े लोगों से उनका आशय पूछा पर कोई कुछ न बता सका। इतने में एक व्यक्ति ने कहा "निकट ही एक साधु रहता है, वह आपको इसका आशय बता सकेगा।" यह सुन कर कीद उस साधु के निकट गया।

वहाँ पहुँच कर उसने साधु से कहा "मैंने एक रात्रि को स्वप्न देखा एक बड़ी ऊँची अट्टालिका है जिसका द्वार भी बहुत ऊँचा है। और उसमें एक छिद्र है। एक हाथी आया और उस छिद्र में होकर उस अट्टालिका में चला गया। दूसरे दिन देखा कि एक अन्य व्यक्ति मेरे

सिंहासन पर बैठा है। तीसरे दिन मैंने देखा कि एक करपास है जिसे चार मनुष्य खींचते हैं परन्तु वह टुकड़े-टुकड़े नहीं होता। चौथी रात्रि को देखा कि एक प्यासा व्यक्ति नदी के तीर पर आया परन्तु ज्योंही वह नदी के निकट गया त्योंही एक मछली निकली। वह मनुष्य उसे देख कर भागा। उसे भागते देख कर मछली ने भी उसका पीछा किया।"

फिर कीद ने कहा "पाँचवीं रात्रि को मुझे एक नगर दीख पड़ा जिसका प्रत्येक निवासी अन्धा था। परन्तु उन लोगों को इसका ज़रा भी दुःख न था और सब अपने अपने कार्य में संलग्न थे। छठवीं रात्रि को फिर मुझे एक नगर दीख पड़ा। इसमें मैंने प्रत्येक निवासी को रोगी पाया। एकाध जो स्वस्थ थे वे भी अपने जीवन से निराश थे और रोगी उन्हें देखने के लिये नित्य प्रति आते हैं। सातवीं रात्रि को मैंने एक दो मुख वाला अश्व देखा जो अपने दोनों मुख से घास खाता एवं पानी पीता था।

"आठवीं रात्रि को फिर देखा कि दो सोते जल के हैं और एक खाली सोता है। जल वाले सोते उस तीसरे को जल प्लावित करते हैं परन्तु उसका तीर भी तर नहीं होता और इन दोनों सोतों का जल भी नहीं घटता है। नवीं रात्रि को मैंने देखा कि एक बच्चे वाली गाय है जो दिन रात खाती है, पर फिर भी दुबली है और उसका बच्चा जो कि उसके साथ है बड़ा मोटा है। अन्तिम रात को मैंने देखा कि एक सोता है जिसके किनारे सूखे हुये हैं परन्तु उसके चारों ओर की पृथ्वी भीगी हुई है। अब आप कृपा करके मुझे इस स्वप्न का आशय बतलाइये जिससे मेरे हृदय को शान्ति मिले।" स्वप्न सुन कर साधु ने कहा "शीघ्र ही तुम्हारे राज्य पर सिकन्दर नाम का एक बहुत बड़ा राजा आक्रमण करने को है। परन्तु तुम उससे युद्ध न करना। अपनी सुन्दर पुत्री तथा एक सचिव जो ज्योतिष-विद्या तथा बुद्धिमानी में अद्वितीय हो, एक जगत प्रसिद्ध वैद्य तथा एक कटोरा जिसे यदि किनारे तक भर कर

पियो तो कभी खाली नहीं होता इन चारों वस्तुओं को तू उसकी भेंट करेगा तो अवश्य ही वह तुझे तेरा राज्य दे देगा।"

यह सुन कर कीद ने फिर कहा "महाराज आप मुझे इन स्वप्नों को पृथक-पृथक समझा दें तो मेरा मन स्थिर हो। इस पर उस साधु ने कहा "सुन वह हाथी सिकन्दर है जो कि तेरे नगर से होकर आएगा। दूसरे यह कि एक राजा सिफला नाम का तेरे राज्य पर चढ़ाई करके तेरे राज्य को तहस-नहस कर देगा। तीसरे यह कि किरपास जिसे तूने देखा है वह ईश्वर है और जो चार व्यक्ति हैं वह अग्नि उपासक हैं और यहाँ आकर अपना मत फैलायेंगे। तत्पश्चात् एक यहूदी आयेगा जो मूसा का धर्म प्रचार करेगा। तदन्तर इस देश में एक यूनानी वैद्य आयेगा जो लोगों को वैद्यों का धर्म-कर्म सिखाएगा और लोग उसे बड़े चाव से सीखेंगे। फिर उसके पश्चात् एक धर्मावलम्बी आयेगा जो कि ईश्वर की आराधना की रीति बतायेगा। चौथी रात्रि का आशय यह है कि एक रसूल खुदा आयेगा जो धर्म प्रचार करेगा और इस देश के निवासी उससे भागेंगे। पाचवें स्वप्न का आशय यह है कि एक समय वह आयेगा कि इस देश के समस्त निवासी अन्धों की भाँति बिना कुछ समझे बूझे जो कुछ कहा जायेगा करेंगे। और विचारे किसान भी अन्धों की भाँति खेती बारी करेंगे और उन्हें अपने हानि लाभ का कुछ भी ज्ञान न रहेगा।"

फिर साधू ने कहा "छठवें स्वप्न का अभिप्राय यह है कि इस देश में एक काल वह भी आयेगा जब कि बुद्धिमान् लोग भिखमंगे हो जायेंगे। और संसार के समस्त दुखों के आखेट होंगे और अपढ़ धनवान होकर उन की खिल्ली उड़ायेंगे। सातवीं रात्रि के स्वप्न का यह आशय है कि इस देश में एक समय वह आयेगा जब कि लोग उस घोड़े की भाँति संसार के समस्त धन-द्रव्य को हस्तगत करने की इच्छा रक्खेंगे और उस में से किसी भिखमंगे तथा दरिद्र को कुछ भी दान न करेंगे।

"आठवें स्वप्न का आशय यह है कि फिर वह समय आयेगा जब संसार का दो भाग धनवान हो जायेगा और एक भाग दरिद्री। यदि वह

धनवान आकाश से धन द्रव्य की वर्षा भी करेंगे तो भी इन दरिद्रों का लोभ न मिटेगा और सर्वदा धन ही के इच्छुक बने रहेंगे। नवीं रात को जो तूने स्वप्न देखा है उसका आशय यह है कि एक समय संसार में लोग इतने लोभी हो जायेंगे कि सदैव वह दूसरे के धन को तका करेंगे। दसवीं रात को जो तूने देखा कि एक सूखा सोता है परन्तु उसके चारों ओर की भूमि तर है।......

इसी समय कीद को सिकन्दर का पत्र मिला कि मैं भारत में आ गया हूँ अस्तु अब तुझे मेरे साथ मित्रता का व्यवहार करना चाहिए। इस पत्र को पढ़ कर उसने उत्तर में लिखा "मैं तो आप का एक तुच्छ सेवक हूँ तथा मैं स्वयं आप के दर्शनार्थ आ रहा हूँ। इसके अतिरिक्त मैं चार वस्तुएँ आपकी भेंट में भेज रहा हूँ और आशा करता हूँ कि आप इसे प्राणों से भी प्यारी रक्खेंगे।" इतना लिख कर उसने साधु के कथनानुसार एक सचिव, वैद्य और एक पुत्री को पत्र-वाहक के साथ भेज दिया। तदन्तर एक ऊँट भर कर मणि लेकर उसकी सेवा में चला।

जब दूत उत्तर तथा उपर्युक्त वस्तुओं को लेकर सिकन्दर के निकट गया और उसने देखा तो बड़ा प्रसन्न हुआ और उस युवती के साथ विवाह कर लिया। इसी समय कीद भी पहुँच गया और उस मणि को भी उसकी भेंट किया। जब सिकन्दर ने अपना इतना आदर सत्कार देखा तो कीद को उसका राज्य सौंप कर स्वयं कन्नौज की ओर बढ़ा।

सिकन्दर की कन्नौज पर चढ़ाई

सिकन्दर जब कन्नौज के निकट पहुँचा तो उसने फ़ोर को सन्धि कर के राज-कर देते रहने के लिये लिखा, परन्तु फोर ने एक न माना और दूत से कहा "जाकर सिकन्दर से कह देना कि मैं क़ीद की भाँति कायर नहीं हूँ। इसके अतिरिक्त मैं भी असंख्य सेना रखता हूँ। सिकन्दर इस बात का ध्यान अपने दिल से निकाल दे कि मैं उसकी अधीनता

स्वीकार कर लूँगा। अस्तु वह अपनी इच्छा की पूर्ति के लिये जो चाहे कर सकता है।"

जब सिकन्दर ने फ़ोर का उत्तर सुना तो मारे क्रोध के लाल हो गया और अपनी सेना को आगे बढ़ने की आज्ञा दी। इधर फ़ोर भी अपनी अस्सी हज़ार सेना लेकर कन्नौज के बाहर आया। अश्वारोहियों के अतिरिक्त फ़ोर के पास नौ हज़ार युद्ध के हाथी भी थे। जब सिकन्दर की सेना ने इन हाथियों को देखा तो उनके छक्के छूट गये और बोली "महाराज आप के पास तो हाथी हैं ही नहीं फिर भला इन मस्त हाथियों से क्यों कर जीत सकियेगा।" इस पर सिकन्दर ने अरस्तू से इसका उपाय पूछा।

अरस्तू ने उसे लोहे का एक ऐसा घोड़ा बनाने को कहा जिसका पेट खाली रक्खा जाय। लोहे का घोड़ा बन चुकने पर उस पर एक लोहे का आदमी सवार कराया। तत्पश्चात् एक विमान बनवा कर उसे उस पर बिठा कर घोड़े के पेट को बारूद से भर दिया। फिर जब वह विमान रणक्षेत्र की ओर बढ़ा तो उसमें आग लगाने की आज्ञा दी। आग लगते ही वह घोड़ा सवार सहित उड़ कर दूर जा गिरा। जब सिकन्दर ने यह देखा तो बड़ा प्रसन्न हुआ और एक हज़ार घोड़े इसी प्रकार के बनवा कर मैदान की ओर बढ़ा।

जब युद्ध छिड़ा और मार-काट आरम्भ हो गई तो सिकन्दर ने उन घोड़ों में आग लगवाई और वह धड़ाधड़ उड़ कर शत्रुओं पर गिरने लगे। फ़ोर ने जब यह कौतुक देखा तो बड़ा चकित हुआ और अपने गुप्तचर को इसका भेद जानने के लिये भेजा। दूत ने लौट कर कहा "इसका नाम तोप है जिसे भारतीय सैनिक नहीं जानते।" सारांश यह कि इस प्रकार जब यह घोड़े फ़ोर की सेना पर गिरने लगे तो हाथी तथा उसके सैनिक व्याकुल होकर भाग खड़े हुए।

इस प्रकार प्रथम बार पराजित होकर फ़ोर ने फिर सेना एकत्रित की और फ़िर युद्ध के लिये आया। सारे दिन मारकाट होती रही और

संध्या होते ही युद्ध बन्द कर दिया गया। दूसरे दिन जब दोनों सेनायें रण-क्षेत्र में आईं तो सिकन्दर ने फ़ोर से कहला भेजा "इस प्रकार सैनिकों को कटवाने से क्या लाभ। अच्छा तो यही हो कि हम और तुम मैदान में निकल आवें और ईश्वर जिसे विजयी करे वही राज्य का अधिकारी हो।" फ़ोर तुरन्त घोड़ा कुदा कर सिकन्दर के संघर्ष के लिये मैदान में आ गया। आते ही उसने सिकन्दर के ऊपर अपनी तलवार चलाई परन्तु सिकन्दर के भाग्य का सूर्य अभी चमकने को था, उसका प्रहार सफल न हुआ। अब जो सिकन्दर ने वार किया तो फ़ोर दो खण्ड होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा।

इस प्रकार कन्नौज को विजय करके उसने भारत के शेष शासकों को बुलाया और उन्हें भी निर्भय करके तथा स्वर्ग को जो कि फ़ोर का सेनापति था कन्नौज का सिंहासन देकर उसे राजा बनाया तथा राजाओं से भी राज-कर लेकर उन्हें स्वतन्त्र कर दिया।

सिकन्दर का मक्का में तीर्थ के हेतु जाना

जब सिकन्दर कन्नौज में था उसी समय राजसभा के व्यक्ति ने कहा "महाराज! खलील उल्लाह नाम के एक व्यक्ति ने एक घर बनवाया है जिसका नाम उसने काबा रक्खा है जो कि पूज्य स्थान है।" अस्तु सिकन्दर को उस स्थान के दर्शन की इच्छा हुई। जब सिकन्दर काबा पहुँचा तो उस स्थान का प्रधान कर्मचारी अर्थात् गद्दीधारी नुसर क़तीब उसके सम्मुख आया। सिकन्दर ने उसे बहुत सा धन द्रव्य भेंट किया। तत्पश्चात् नंगे पैर उसके साथ परिक्रमा के लिये गया। इसके अनन्तर इसमाईलियों ने दोहाई मचाई "जरा वंश के लोगों ने हमें निकाल कर हमारा सब कुछ अपहरण कर लिया है।" सिकन्दर ने उन्हें उनका अपहरित सर्वस्व दिलाया और स्वयं मिस्र की ओर चल दिया।

जब वह मिस्र में पहुँचा तो वहाँ के शासक ने उसका बड़ा स्वागत किया और वह वहाँ एक वर्ष रह कर उन्दुलस की ओर चला। उन्दुलस

पहुँच कर उसे विदित हुआ कि यहाँ का राज-काज एक बड़ी ही चतुर स्त्री करती है जिसका नाम कैदाफ़ा है। अस्तु वह दूत का वेश धारण कर उसके पास गया। जब सिकन्दर उसके सम्मुख पहुँचा तो कैदाफ़ा ने उसे देखते ही पहिचान लिया और बोली "तुम इस छद्म-भेष में सिकन्दर हो और अब तुम मेरे हाथ से निकल नहीं सकते।"

इस पर सिकन्दर ने कहा "मैं तो सिकन्दर का एक तुच्छ सेवक हूँ"—इस पर कैदाफ़ा ने उसकी तसवीर मँगा कर उसे दिखाई तो वह बड़ा चकित हुआ। सिकन्दर की अवस्था देख कर उसने धीरज दिया और बोली "अब आप कहीं भी इस वेश में न जाइएगा क्योंकि सूर्य यदि अपने को छिपाना चाहे तो असम्भव है"। आप इस बात का ध्यान रक्खें कि अब मैंने आपकी अधीनता स्वीकार कर ली, मेरी ओर से आपको कुछ भी हानि न पहुँचेगी और न आपका भेद किसी पर प्रगट ही होगा। यदि आपके मन में किसी प्रकार का द्वेष भाव हो तो आप उसे भी निकाल दीजिये।" इस पर सिकन्दर ने अपने धर्म-कर्म की शपथ खाकर कहा "मैं भी तुझे कोई हानि न पहुँचाऊँगा, और सदैव तेरा दीन बन कर रहूँगा।"

जब सिकन्दर ने इस प्रकार सौगंध खाई तो कैदाफ़ा ने कहा "मेरी हार्दिक इच्छा है कि आप आज रात भर यहीं रहें और भोर होते ही चले जायँ। परन्तु सिकन्दर इससे सहमत न हुआ और बिदाई माँगी। जब कैदाफ़ा ने देखा कि सिकन्दर यहाँ न ठहरेगा तो उसने बहुत सी मूल्यवान वस्तुएँ उसे भेंट में देकर विदा किया।

सिकन्दर कैदाफ़ा के पास से बिदा होकर अपने डेरे में आया। उसके हृदय में अब संसार-भ्रमण की इच्छा जाग्रत हुई, अस्तु वह उसकी तैयारी करने लगा।

सिकन्दर का संसार भ्रमण के लिये प्रस्थान

सिकन्दर ने अपनी इच्छानुसार सारे संसार का भ्रमण किया। जहाँ कहीं वह जाता था वह सब शासकों से यही कहता था "मेरी इच्छा

युद्ध की नहीं है, बल्कि मैं शान्ति चाहता हूँ, अस्तु तुम लोग निर्भय होकर मेरे पास आकर मेरी अधीनता स्वीकार कर लो।" फलतः संसार के समस्त नरेशों ने उसकी अधीनता स्वीकार कर ली। इस यात्रा में कई स्थानों पर उसे बड़ी-बड़ी आपत्तियों का सामना करना पड़ा, परन्तु उसने धीरज के साथ उन सबका सामना किया और अन्त में सफल मनोरथ हुआ।

सिकन्दर इसी प्रकार भ्रमण करता तथा नरेशों से अपनी अधीनता स्वीकार कराता हुआ उस स्थान पर पहुँचा जिसे लोग इस संसार का छोर बताते हैं। वहाँ पहुँचने पर लोगों ने उससे कहा "महाराज इस पर्वत के उस पार अन्धकार ही अन्धकार है और लोगों का कथन है कि उसी अन्धकार में एक ऐसा सोता है जिसका जल आचमन करने के पश्चात् प्रत्येक प्राणी अमर हो जाता है।"

उपर्युक्त कथन को सुन कर सिकन्दर के मन में उस जल के पीने की इच्छा हुई अस्तु कुछ बाँके सैनिक तथा चालीस दिन की भोजन-सामग्री ले कर वह उस ओर चल पड़ा। उस स्थान के निकट पहुँच पर उसने पथ-प्रदर्शक से कहा "तुम भय न करो। मेरे पास दो अमूल्य रत्न हैं। उनमें से एक का गुण यह है कि यदि अन्धकार में उस रत्न को निकाला जाय तो चारों ओर उजाला हो जाता है और दूसरे का गुण यह है कि यदि वह बाहर निकाल लिया जाय तो समस्त हिंसक तथा विषैले जीव भाग जाते हैं।"

इतना कह कर सिकन्दर ने पहिला रत्न पथ-प्रदर्शक को देकर दूसरे को स्वयं अपने पास रक्खा। इस प्रकार वह उस पथ-प्रदर्शक के पीछे-पीछे हो लिया। दो दिन तथा दो रात तक तो वे एक ही मार्ग पर चलते रहे परन्तु तीसरे दिन वह एक दो मोहानी पर आये। यहाँ राजा अपनी सेना सहित पथ प्रदर्शक से पृथक हो गया। पथ प्रदर्शक ने उन को बहुत पुकारा परन्तु किसी के कान में उसके शब्द न पहुँचे। अन्त

में वह विवश हो कर अकेला ही उस सोते पर गया और वहाँ से जल पीकर लौटा।

इधर सिकन्दर पथ-प्रदर्शक से पृथक हो कर अन्धकार के साम्राज्य में पड़ा। इस अन्धकार में उसे कोई वस्तु दिखाई नहीं पड़ती थी। निदान वह चलते-चलते कालिया पर्वत के निकट पहुँचा। यहाँ उसे एक शब्द सुनाई पड़ा जैसे कोई कह रहा हो "यहाँ पर जो पाषाण के टुकड़े पड़े हैं उसे जो लेगा वह पछताएगा और जो न लेगा वह भी पछताएगा।" इस कंठ-स्वर को सुन कर उसके बहुत से सैनिकों ने तो उन टुकड़ों को उठा लिया और अधिकांश ने यह सोच कर इस टुकड़े को लेकर कहीं किसी विपत्ति में न फँसना पड़े छुआ तक नहीं।

इसी प्रकार सिकन्दर के आठ दिन विपत्ति में बीत गये और उसे अमृत की धारा न मिली तो उसने घबरा कर ईश्वर से प्रार्थना की "हे दीन-बन्धु ! दीना-नाथ ! अब तुम हमें इस विपदा से उबारो। हम लोगों को अब अमृत की इच्छा लेशमात्र नहीं है।" तब नवें दिन वह लोग अन्धकार साम्राज्य की सीमा को पार करके दीप्तमान प्रदेश में पहुँचे। यहाँ उन लोगों ने उन पाषाण के टुकड़ों को देखा तो उन्हें ज्ञात हुआ कि वे मूल्यवान रत्न हैं। इस पर जिन्होंने कि थोड़े ही लिये थे। वह पछताने लगे यदि हम और लेते तो अच्छा होता और जिन्होंने बिलकुल ही नहीं छुये थे वह उनसे अधिक पछताये यदि हम लोग थोड़ा-थोड़ा भी ले लेते तो लाभ में रहते।

अस्तु यही सब विचारते हुये सिकन्दर तथा उसके सैनिक आगे बढ़े। अन्त में वह एक अपरिचित राज्य में पहुँचे। जब वहाँ के निवासियों ने सिकन्दर को सेना सहित देखा तो बड़े चकित हुये कि आज तक संसार का कोई शासक हम लोगों के देश में पदार्पण नहीं कर सका फिर यह लोग किस मार्ग से आये। अस्तु यही सब विचार कर वहाँ के समस्त सभासद राजा-सहित सिकन्दर के निकट आकर नत-मस्तक हुए, और

बोले "महाराज ! आपने अपने चरण कमल द्वारा हमारे देश को पवित्र किया अस्तु हम लोग आपके बड़े कृतज्ञ हैं।"

सारांश यह कि इस प्रकार सम्मानित होकर सिकन्दर तथा उसकी सेना ने विश्राम किया। यात्रा की थकावट दूर होने के पश्चात् सिकन्दर ने उन लोगों से पूछा "इस देश में कौन-कौन-सी वस्तुयें अद्भुत हैं।" इस पर उन लोगों ने कहा "महाराज ! यहाँ पर दो बड़े विचित्र वृक्ष हैं जिन्हें ईश्वर ने वाक्शक्ति प्रदान की है—उनमें से एक स्त्री है और दूसरा पुरुष। पुरुष वृक्ष दिन के समय समस्त प्रश्नों का उत्तर देता है और स्त्री वृक्ष रात्रि को। परन्तु उनकी भाषा समझ लेना सर्व साधारण का कार्य नहीं है। यहाँ पर कुछ थोड़े से ही विद्वान ऐसे हैं जो कि उनकी भाषाओं को समझ सकते हैं।"

इन लोगों की बातों को सुन कर सिकन्दर को उन अद्भुत वृक्षों को देखने की लालसा हुई, अस्तु वह उन लोगों के साथ उन वृक्षों के निकट गया। वहाँ पहुँच कर सिकन्दर ने उस वृक्ष के स्वर को सुना तो उन विद्वानों से उसका अर्थ जानना चाहा। इस पर एक ने कहा "महाराज ! वृक्ष का कथन है कि यह अपरिचित व्यक्ति सिकन्दर नरेश है जिसने कि सारे संसार को विजय किया है। यह नरेश चालीस वर्ष तक जीवित रहने के पश्चात् इस असार संसार को त्याग कर परलोक की यात्रा करेगा।" वृक्ष की भविष्य-वाणी सुन कर सिकन्दर को बड़ा दुःख हुआ। वह सोचने लगा। "मैंने केवल दस वर्ष ही राज्य किया अब केवल दस वर्ष और शेष रह गये। यह सोच कर उसकी आत्मा को बड़ा क्लेश हुआ।" उसने उन विद्वानों से कहा "क्या मुझे यह भी ज्ञात हो सकता है कि अब मैं अपनी सेना में पहुँचूँगा अथवा नहीं?"

सिकन्दर के इस प्रश्न पर वृक्षों ने फिर शब्द किया, जिसका अनुवाद उन विद्वानों ने यों किया "वृक्ष का कथन है कि यदि आप अमुक मार्ग से हो कर जायेंगे तो अवश्य अपनी सेना में पहुँच जायेंगे। इसके अति-रिक्त वृक्ष का यह कहना है कि अब आप अपना शेष जीवन ईश्वर की

आराधना में बितावें और किसी देशाटन तथा युद्ध की ओर ध्यान न दें।"

इसके उपरान्त सिकन्दर ने उस वृक्ष से यह पूछा "मेरी इच्छा रूम जाकर अपनी माता को देखने की है अस्तु आप की क्या सम्मति है ?" इस पर उसे यह उत्तर मिला "तू अपने इस विचार को त्याग दे क्योंकि तेरी माता तथा कुटुम्बियों का दर्शन अब तुझको बदा नहीं है। ध्यान रहे कि यदि तू मेरी बात न मानेगा और रूम की ओर प्रस्थान करेगा तो वहाँ तक न पहुँचकर मार्ग ही में तेरी मृत्यु हो जाएगी"। सिकन्दर इस उत्तर को सुन कर बड़ा दुखी हुआ और उसी वृक्ष के बताये हुये मार्ग से चल पड़ा।

चलते-चलते वह एक दूसरे देश में पहुँचा। जब वहाँ के निवासियों को उसके आगमन का समाचार मिला तो सब के सब दौड़ते हुए उसके निकट आये और उसके चरणों पर गिर कर बोले "महाराज! हम लोग बड़ी विपदा में पड़े हुए हैं। अब आप ही हम लोगों के प्राणों की रक्षा कीजिए।" इस पर सिकन्दर ने उनके क्लेश का कारण पूछा। इसके उत्तर में उन लोगों ने कहा "महाराज! प्रत्येक वर्ष याजूज माजूज नाम के दो दैत्य अमुक मार्ग से हमारे देश में आते हैं और मनुष्यों तथा पशुओं का भक्षण करके हम लोगों के खेतों का विनाश कर चले जाते हैं।"

इस पर सिकन्दर ने उनसे कहा "भला उन की आकृति कैसी है ?" तब उन लोगों ने कहा "उनका मुख दीप्तमान है तथा उनके लम्बे-लम्बे केश हैं। उनकी जिह्वा धारदार तथा उनके पाँव बड़े-बड़े लोहे के खूँटों की तरह हैं। उनके दोनों नेत्र बड़ी थाली के समान रक्तमय हैं। जब वह सोते हैं तो अपने एक कान को वह बिछा लेते हैं और दूसरे से अपने सारे शरीर को ढ़क लेते हैं। उनकी गणना करना मनुष्य की सामर्थ्य के बाहर है क्योंकि उनकी स्त्रियाँ एक एक बार में सहस्रों बालकों को जन्म देती हैं।" इतना कह कर उन लोगों ने सिकन्दर से कहा "दीनानाथ! या तो आप कोई ऐसा उपाय करें जिससे हम लोग इन दैत्यों की पैशाचिक यंत्रणा से मुक्त हो जाँय अन्यथा हम लोग इस देश को त्याग कर आपके साथ चले चलेंगे।"

उनकी इस निःसहाय तथा दुखी अवस्था को देखकर सिकन्दर ने अपने मन्त्रियों तथा विद्वानों से इस पर परामर्श किया। उन लोगों ने कहा "यदि उस मार्ग का अवरोध लोहे की गगनभेदी दीवारें खड़ी करके कर दिया जाय तो यह लोग उनकी यन्त्रणाओं से बच सकते हैं। अस्तु सिकन्दर ने लोहारों को बुला कर उस लोहे के पर्वत को औषधियों की सहायता से इस प्रकार फुँकवा दिया कि लोहा गल कर उस मार्ग में दीवार बन गया। जब यह सिकन्दरी दीवार बन गई तो वहाँ के लोगों के प्राण बचे।

वहाँ से बिदा होकर सिकन्दर चीन तथा यूनान होता हुआ भारत में पहुँचा। यहाँ सिन्ध देश के नरेश ने उसका स्वागत किया। यहाँ से बहुत सा धन द्रव्य भेंट के स्वरूप में लेकर वह यमन पार करता हुआ बाबुल पहुँचा। यहाँ बाबुल के मरुस्थल में उसने डेरा डाला। फिर वहाँ से भी प्रस्थान करके जब वह उसी मरुस्थल के निकट एक पर्वत पर पहुँचा तो वहाँ एक वृद्ध पुरुष दीख पड़ा जिसके दोनों कान लम्बे-लम्बे थे। जिसे उसके सेवक पकड़ कर उसके निकट ले आये। सिकन्दर ने उस वृद्ध से उस स्थान का हाल ज्ञात करना चाहा।

तब उस वृद्ध ने कहा "यहाँ से थोड़ी दूर पर एक नगर है जिसकी प्रत्येक दीवार बेलों, फूलों तथा गत राजाओं और वीरों के चित्रों से चित्रित है। इसके देखने से मनुष्य को अपनी भूख प्यास भूल जाती है।" सिकन्दर ने इस पर कहा—'अच्छा यह तो बता कि अब उस स्थान पर लोगों की बस्ती है अथवा नहीं।" राजा की यह बात सुन कर उस वृद्ध ने कहा—"इस समय वह स्थान निर्जन है परन्तु फिर भी प्रत्येक दिन जलमानुष नदी के जल में से निकल कर उस नगर में आते हैं और अपनी अपनी मछलियों को भून कर वहीं भोजन करते हैं और फिर जलमग्न हो जाते हैं।"

जब सिकन्दर को इस अद्भुत बात का पता चला तो उसने अपने कुछ मनुष्य उन प्राणियों को बन्दी करने के हेतु नियुक्त कर दिये।

फलतः उन लोगों ने उन जल-निवासियों को बन्दी कर सिकन्दर के सम्मुख उपस्थित किया।

जब राजा ने उन्हें देखा तो वह बड़ा चकित हुआ क्योंकि देखने में तो वे निरे बालक प्रतीत होते थे परन्तु थे बड़े चतुर। उनके चातुर्य की प्रशंसा करके उसने उनसे इस नगर का इतिहास पूछा। उन्होंने कहा "यह कैखुसरो की राजधानी थी और यहाँ के प्रत्येक घर के नीचे बहुत सा धन गड़ा हुआ है।" अस्तु सिकन्दर ने उस स्थान को खुदवा डाला और वास्तव में उसे इतना धन मिला जिसका अनुमान उसने स्वप्न में भी न किया था। इस धन को लेकर वह आगे बढ़ा और अपनी सेना से जा मिला। इस हर्ष में उसने बहुत सा धन अपने सैनिकों को बाँट दिया।

सिकन्दर नरेश की मृत्यु

देशाटन के पश्चात् जब सिकन्दर अपनी राजधानी को लौटा तो एक दिन उसने लोगों से कहा "अपने भ्रमण में मैंने एक बोलता वृक्ष देखा जिसकी भविष्य वाणी से मुझे यह ज्ञात हुआ कि मैं चालीस वर्ष तक जीवित रह कर सांसारिक सुख भोग करूँगा, अस्तु मेरा समस्त जीवन बीत चुका है, अब केवल एक वर्ष और शेष रहा है। कयानी वंश के बहुत से राजकुमार हैं और मेरे कोई सन्तान नहीं है। अतः मुझे भय इस बात का है कि कहीं मेरी मृत्यु के पश्चात् यह लोग आपस में युद्ध न करें। मैं चाहता हूँ कि सब का बध कर के केवल एक राजकुमार को शेष रख कर उसे अपने राज्य का उत्तराधिकारी बनाऊँ।" उसने इसी बात को अरस्तू के पास लिखकर भेज दिया और इसकी भी सम्मति माँगी।

अरस्तू ने सिकन्दर का उपर्युक्त विचार पढ़ा तो सन्न हो गया और उसके उत्तर में सिकन्दर को लिख भेजा "राजकुमारों का बध करके उनके रक्त से आप अपने हाथों को क्यों रँगते हैं। मेरे मतानुसार यदि

आप सबको पृथक्-पृथक् देशों का शासक बना दें तो मुझे आशा है कि वह गृह-युद्ध की ओर अग्रसर न होकर अपने-अपने राज-काज में लगे रहेंगे।" सिकन्दर ने अरस्तू की सम्मति के अनुसार प्रत्येक राजकुमार को अपने राज्य का एक भाग देकर उन्हें बतला दिया कि वह लोग भूल कर भी रूम के राज्य की ओर दृष्टिपात न करें और एक दूसरे के साथ सहानुभूति रक्खें।

अपनी अन्तिम घड़ी आने के पूर्व ही सिकन्दर रोगग्रस्त हो गया, और दिनों-दिन उसकी अवस्था बिगड़ती ही गई। एक दिन जब उसकी अवस्था असाध्य हो गई तो उसने अपने मंत्रियों तथा देश के अन्य श्रेष्ठ पुरुषों को बुला कर कहा "देखो मेरी स्त्री रोशनक गर्भवती है। यदि उसके गर्भ से पुत्र का जन्म हो तो तुम लोग उसे रूम का शासक बनाना और सदैव उसकी आज्ञा का पालन करना और यदि पुत्री हो तो युवती होने पर उसे कयानी वंश के किसी योग्य राजकुमार से उसका विवाह करके मेरे उस जमाता को रूम का अधिकारी बनाना।

अपनी अन्तिम इच्छा कहने के पश्चात् सिकन्दर की आत्मा सुरपुर को चली गई। इधर उसके समस्त प्रजागण तथा सभासदों और मंत्रियों तथा कुटुम्बियों ने उसके प्रति चालीस दिन तक शोक मनाया। सिकन्दर के राज्य-विभाग के अनुसार कयानी वंश के समस्त राजकुमारों ने सिंहासनारूढ़ हो अपने-अपने अधीन देशों के राजकाज को देखना आरम्भ किया। इन शासकों के शासन काल में कोई युद्ध नहीं हुआ और दो सौ वर्ष तक इन लोगों ने शान्ति-पूर्वक राज्य किया। अन्त में जब इनके भाग्य-चक्र ने पलटा खाया तो यह सब सासानियों द्वारा पराजित किये जाकर अपने अपने सिंहासन से च्युत किये गये। अब हम सासानियों के शासनकाल के वर्णन की ओर अग्रसर होते हैं।

सासानियों का शासनकाल

दारा की मृत्यु के पश्चात् उसका पुत्र सासान सिकन्दर से भयभीत होकर भारतवर्ष की ओर भागा, और यहाँ से चल कर वह काबुल

पहुँचा। वहाँ एक गड़रिये की चाकरी कर दिन भर उसकी भेड़ें चराया करता और इस प्रकार वह अपने दुःखद समय को व्यतीत करने लगा।

जब उसकी अशुभ घड़ी बीत गई तो काबुल-नरेश बाबुक ने एक दिन स्वप्न में देखा कि एक बड़ा तेजवान पुरुष हाथी पर सवार होकर आया और बोला "हे राजा तुम्हें मैं दिग-विजयी होने को बधाई देता हूँ।" सवेरे जब काबुल नरेश उठा तो उसने लोगों को अपना स्वप्न कह सुनाया और उस मनुष्य का परिचय पूछा। इस पर लोगों ने कहा "हे राजन्! इस मनुष्य का नाम सासान है।"

दूसरी रात को जब फिर काबुल नरेश ने स्वप्न में देखा कि अग्नि कुण्ड में आग प्रज्ज्वलित है और वही पुरुष कह रहा है 'हे राजा अब तुम भी अग्नि उपासक हो जाओ क्योंकि मेरे पूर्वजों की यही रीति तथा यही धर्म था।" दूसरे दिन जब काबुल नरेश सोकर उठा तो उसने लोगों से उस युवा का ठिकाना पूछ कर उसे बुलवाया।

जब वह राजा के सम्मुख आया तो राजा ने उससे उसका परिचय पूछा, परन्तु सासान ने भय के मारे अपनी जिह्वा तक न हिलाई। उसको इस प्रकार भयभीत देख कर राजा ने उसे ढाढ़स बँधाते हुए कहा "हे युवक! मैं वचन देता हूँ कि तुम को किसी प्रकार हानि न पहुँचाऊँगा।" राजा से इस प्रकार अभय दान पाकर उस युवा ने कहा "मैं दारा का पुत्र हूँ और मेरा नाम सासान है।"

बाबुक को जब यह विदित हुआ कि वह दारा का पुत्र है तो उसने उसका बड़ा सम्मान किया और उसके साथ अपनी एक सुन्दर पुत्री का विवाह कर के स्वयं अपनी प्रजा सहित उसका धर्मावलम्बी हो गया। ईश्वर की कृपा से उसकी पुत्री ने गर्भ धारण किया और नवमास पर्यन्त एक रूपवान तथा तेजवान पुत्र को जन्म दिया। जिसका नाम अर्द शेर बाबुका रक्खा गया। अकस्मात् सासान की मृत्यु हो जाने पर काबुल नरेश स्वयं ही उसकी देख-रेख करने लगा। जब अर्द शेर बाबुका युवा

हुआ और उसके बल तथा विद्या बुद्धि की कीर्ति संसार में फैली तो री देश के शासक अर्दवान को भी इस युवा की सूचना मिली। जब उसे यह विदित हुआ कि अर्दशेर बाबुक दारा के वंश से है तो उसे उसको देखने की लालसा हुई। अस्तु उसने काबुल नरेश को इसी आशय का पत्र लिखा।

जब बाबुक ने उस पत्र को पढ़ा तो अर्द शेर बाबुकान को भेज कर साथ ही यह भी कहला भेजा कि कृपया आप इसकी विद्या तथा रहन-सहन और आदर सम्मान की ओर अवश्य ध्यान रखियेगा, जिससे किसी प्रकार भी इसकी आत्मा दुखी न होने पावे। जब अर्दवान ने उसको देखा तो बड़ा प्रसन्न हुआ और उसे अपने अन्य चार पुत्रों की भाँति रखने लगा।

निदान एक दिन जब वह अन्य चारों राजकुमारों के साथ आखेट को गया था उसने एक मृग मारा। इस पर एक राजकुमार ने कहा "यह मृग मेरे लक्ष्य से मरा है और अर्दशेर यह कहने लगा कि नहीं जी इसको मैंने मारा है। अस्तु इसी प्रकार दोनों में बत-बढ़ा हो गया। इसकी सूचना जब अर्दवान को मिली तो उसने अपने पुत्र का पक्ष किया और अर्द शेर को बहुत ऊँचा-नीच कहा। तदन्तर उसने उसे अपमानित करने के हेतु हयशाला का संरक्षक नियुक्त कर दिया। अस्तु अर्द शेर विवश होकर उसी अश्वशाला में रहने लगा।

इस काल में राज-प्रथा के अनुसार एक शासक के बहुत सी रानियाँ होती थीं, और इसी प्रथा के अनुसार अर्दवान के भी अनेक रानियाँ थीं जिनमें से एक अत्यन्त रूपवती तथा नवयौवना थी। इसका नाम गुलनार था। अर्दवान इस पर इतना आसक्त था कि वह उसे अपनी पटरानी बनाये था और सारा राजकोष उसी के अधीन था। एक दिन अकस्मात् उसकी दृष्टि अर्द शेर पर पड़ गई। उसके सुगठित शरीर तथा सौन्दर्य को देख कर गुलनार उस पर आसक्त हो गई और रात्रि होते ही वह उसके पास गई और उससे कुत्सित प्रस्ताव किया, पर अर्दशेर ने उसके प्रस्ताव को

न माना। और उसे बहुत ऊँचा-नीचा समझाया। परन्तु कामान्ध गुलनार ने एक न माना और उसे बहुत प्रकार के प्रलोभन देकर तथा अपनी कपटी बातों द्वारा उससे स्वीकार करा ही लिया।

अन्त में अर्दशेर ने उसकी काम-तृप्ति की, और दोनों का यह पाप-कर्म कुछ दिनों तक योंही चलता रहा। एक दिन गुलनार ने अर्दशेर से कहा "राजकोष मेरे अधिकार में है अस्तु चलो वहाँ से रत्नादि लेकर इस देश को त्याग कर किसी दूसरे देश में चलें और वहाँ सुख पूर्वक रहें।" जब अर्दशेर ने भी इसे स्वीकार किया तो एक दिन गुलनार राजकोष से बहुत से रत्न लाई। फिर दोनों प्रेमी एक-एक अश्व पर बैठ रातों रात अर्दवान के राज्य की सीमा को पार कर गये, और एक सोते के किनारे ठहर कर चाहा कि थोड़ा विश्राम करें, इतने में वहाँ पर दो मनुष्य प्रगट हुये और इन दोनों को उस स्थान पर न ठहरने का आदेश देकर अन्तर्ध्यान हो गये। इस ईश्वरीय सहायता को पाकर उन लोगों ने फिर अपने घोड़ों को बढ़ाया और बात की बात में अस्तखर पारस जा पहुँचे।

इधर जब सबेरा हुआ और अर्दवान को गुलनार के भाग जाने का समाचार मिला तो वह बड़ा दुखी हुआ और तुरन्त अपने वीरों को इन दोनों को पकड़ लाने का आदेश करके बिदा किया। यह लोग अपने घोड़ों को भगाते हुये उसी सोते पर पहुँचे परन्तु जब वहाँ उनको यह विदित हुआ कि वह लोग यहाँ ठहरे थे और हम लोगों के आने के पूर्व ही यहाँ से चले गये तब यह लोग बड़े दुखी हुये। और रात भर वहाँ विश्राम करके प्रातःकाल अर्दवान के पास लौट कर उसे सब कह सुनाया।

अर्दवान उन लोगों का कथन सुन कर बड़ा दुखी हुआ और उसने ज्योतिषियों को बुला कर गुलनार तथा अर्दशेर के बारे में परामर्श किया। उन लोगों ने कहा "महाराज अर्दशेर एक दिग्विजयी राजा है। उससे आप को बड़ी हानि पहुँचेगी। यहाँ तक कि वह आप के वंश के प्रत्येक

ाजकुमार का बध कर डालेगा।" अर्दवान ज्योतिषियों की यह बात सुन र बड़ा दुखी हुआ और उसने बहमन को जो कि उसका सबसे बड़ा पुत्र था ा अस्तर्ख़ पारस भेजा और उसे बतला दिया 'तुम उसके बल को मत ढ़ने देना और उसे किसी प्रकार से बन्दी करके लाना।"

इधर तो बहमन उसे बन्दी करने के लिये चला और उधर पारस के ासक ने स्वप्न देखा "कोई कह रहा है कि तुम्हारे राज्य में अर्दशेर ाम का एक युवा आया है जो कि ईरान का शासक होने वाला है। तुम से आदर भाव के साथ अपने राज भवन में बुला कर रक्खो और सकी अधीनता स्वीकार करो।" अस्तर्ख़ के शासक ने प्रातःकाल होते ो इस बात की घोषणा करा दी कि हमारे राज्य में अर्दशेर नाम का युवक ाकर ठहरा है। जो कोई उसका पता पाये तुरन्त हमें सूचित करे क्योंकि वप्न में मुझसे यह बतलाया गया है कि भविष्य में शीघ्र ही वह ईरान ा शासक होगा।

इधर अर्दशेर जब अतिथि-शाला में पहुँचा तो उसने वहाँ के प्रत्येक ावासी को अपना नाम बता दिया। जब इस घोषणा की सूचना विदित ई तो वहाँ के संरक्षक ने उसका बड़ा आदर-सम्मान किया और राजा ा भी इसकी सूचना भेज दी।

राजा अर्दशेर की उपस्थिति की सूचना पाकर स्वयं वहाँ गया और से बड़े सम्मान के साथ अपने राज-भवन में लाया तथा सब से उसकी ाधीनता स्वीकार करने को कहा। फलतः सबने उसे राजा मान कर सके सम्मुख मस्तक झुकाया। इसके पश्चात् अस्तर्ख़ के शासक ने कहा 'महाराज! सेना उपस्थित है। अब आप जिस ओर के लिये आज्ञा करें म सब सेना सहित उस ओर प्रस्थान करें।"

ार्दशेर बाबुकां का अस्तर्ख़ पारस की राजगद्दी पर बैठना

उपरोक्त शिष्टाचार के पश्चात् अस्तर्ख़ के शासक ने एक रत्न-जटित ंहासन मंगा कर अर्दशेर को उस पर बिठा कर राजमुकुट पहनाया।

जब अर्द शेर ने देखा कि वहाँ की प्रजा मेरे ऊपर तन मन धन से निछावर हो रही है तो उसने सब को बुला कर कहा "मेरी इच्छा है कि अर्दवान पर आक्रमण किया जाय और उसे पराजित किया जाय। इसका परिणाम यह होगा कि फिर अन्य देश के नरेश हमसे युद्ध करने का साहस न करेंगे।"

इधर अर्द शेर लोगों की सम्मति ही ले रहा था कि उधर उसे अर्द-वान के पुत्र बहमन की चढ़ाई का संदेशा मिला। अस्तु वह भी अपनी सेना लेकर रण-क्षेत्र में आया परन्तु प्रतिद्वन्द्वी की सेना में से किसी का साहस न हुआ कि अर्द शेर के सामने आये। फलतः सेनापति ने उसकी अधी-नता स्वीकार कर ली।

जब बहमन को यह सूचना मिली कि हमारे सेनापति बबाक ने अर्द शेर की अधीनता स्वीकार कर ली तो उसे बड़ा खेद हुआ। उसने सारा वृतान्त अपने पिता को लिख भेजा और एक नूतन सेना सहायतार्थ मंगा भेजी। सेना के आते ही बहमन रणक्षेत्र में आया और दोनों ओर से मार-काट आरम्भ हो गई। बबाक के सैनिकों ने बहमन के सैनिकों को बड़ी क्षति पहुँचाई। इसी बीच एक बाण बहमन के लगा जिससे वह घायल होकर पृथ्वी पर आ रहा। उसने भी अर्द शेर का आधिपत्य मान लिया। अर्द शेर ने पराजित का बड़ा सम्मान किया और उन्हें बहुत सा धन पुरस्कार-स्वरूप दिया।

बहमन को अधीन करके अर्द शेर ने री देश पर चढ़ाई की। उधर से अर्दवान भी अपनी सेना लेकर आया। चालीस दिन तक युद्ध होता रहा परन्तु कोई विजयी न हुआ। चालीसवें दिन दैवी सहायता मिली और एक आंधी इतनी वेग से उठी कि पृथ्वी की सारी धूल उड़-उड़कर अर्दवान की सेना की ओर बह चली जिससे सैनिक पीड़ित हो उठे। इधर अर्द शेर की सेना ने जो यह अवसर पाया तो झट प्रति-द्वन्द्वी की सेना पर टूट पड़ी और अधिकांश सैनिकों को धराशायी कर दिया।

इस आक्रमण से अर्दवान की सेना भाग निकली और वह स्वयं बन्दी हुआ और फिर अर्द शेर की आज्ञा से उसका शिर काट लिया गया। तत्पश्चात् उसके दो पुत्र भी बन्दी हुए और शेष दो भारतवर्ष की ओर भाग गये। इस प्रकार अर्दवान के कुटुम्बियों का सर्वनाश करके अर्द शेर ईरान के राज सिंहासन पर बैठा।

ईरान विजय के पश्चात् अर्द शेर ने चालीस वर्ष तक सुखपूर्वक राज्य किया। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र शापूर ने बत्तीस वर्ष तक राज का भार सम्भाला। इसके शासनकाल में सारी प्रजा इससे सन्तुष्ट थी।

इसके पश्चात् उसके पुत्र ऊरमिज़ ने एक वर्ष नौ मास तक राज्य तदुपरान्त राज्य का भार उसके पुत्र बहराम प्रथम पर पड़ा परन्तु वह तीन वर्ष तथा दो मास के पश्चात् ही राज सिंहासन अपने पुत्र बहराम द्वितीय के लिये छोड़ कर परलोक सिधारा। इसने उन्नीस वर्ष तक बड़े न्याय के साथ राज्य किया। इसकी मृत्यु के पश्चात् थोड़े काल के लिये उसके पुत्र ने राजमुकुट धारण किया फिर उसके पौत्र की बारी आई और उसने भी नव वर्ष राज सुख भोग कर यमपुरी का मार्ग पकड़ा।

इसके अनन्तर शापूर ने सात वर्ष तक राज करके इस संसार को त्याग दिया। उसके स्थान पर उसके दूसरे भाई अर्द शेर ने दस वर्ष तक प्रजा पालन किया। पश्चात् शापूर के पुत्र शापूर द्वितीत ने पाँच वर्ष तक राज-काज देखा। इसके उपरान्त उसका पुत्र बहेराम ने चालीस वर्ष तक राज्य किया। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र ने बाईस वर्ष तक राज्य का सुख भोगा। इसके पश्चात् उसके पौत्र बहेराम गोर ने बहुत दिनों तक शासन किया और फिर, अपने पुत्र को राजगद्दी सौंप कर स्वयं यमपुरी चल दिया।

इसने अठारह वर्ष तक शासन की बागडोर अपने हाथ में रक्खी फिर अपने पुत्र हुमुंज को उसका उत्तरदायी बनाया। यह केवल

दो ही वर्ष तक शासक रहा। इसकी मृत्यु के पश्चात् राजा का भाई फीरोज़ सिंहासन पर बैठा और ग्यारह वर्ष के पश्चात मृत्यु को प्राप्त हुआ। फिर बलाशन ने भी चार वर्ष राज करके इस संसार को त्याग किया।

बलाशान के पश्चात् कबाद ने चालीस वर्ष तक राज्य किया। उसके पश्चात् उसका पुत्र कसरी अड़तालीस वर्ष तक राजा रहा। तदुपरान्त नौशेरवाँ का पुत्र हुर्मुज़ सिंहासनारूढ़ हुआ परन्तु कुछ मास राज्य करके ईरान का सिंहासन परवेज़ खुसरू के लिये छोड़ गया। इसने भी अड़तीस वर्ष राज भोग करके सुरपुर को गमन किया।

इसके पश्चात् शीरूया ने सात मास और अर्दशेर ने छः मास तक राज्य किया। इसके पश्चात् गुराज़ ने पचास दिन और उसकी पुत्री ने छः मास राज्य किया। इसके उपरान्त उसकी आरज़्म नाम की पुत्री ने चार मास तक राज्य किया। तदन्तर नौशेरवाँ के दूसरे पुत्र ने एक मास तक सिंहासन की शोभा बढ़ाई। इसके पश्चात् यज़्दगिर्द ने जो कि पर्वेज खुसरू का पुत्र था और सासानी वंश का अन्तिम शासक था बीस वर्ष तक राज किया।

मुद्रक—विश्वप्रकाश, कला प्रेस, प्रयाग।
प्रकाशक—गया प्रसाद एन्ड सन्स, आगरा।